मृत्युहीन

शकुन्तला मित्र और
पल्लव मित्र को

मृत्युहीन

विमल मित्र

अस्पताल का एक छोटा-सा केबिन। केबिन के दरवाजे के बाहर लकड़ी पर लिखा हुआ है—केस नंबर ४६।

सवेरे दैनिक नियम के अनुसार बड़े डॉक्टर साहब आए, उनके साथ छोटे डॉक्टर साहब और मेट्रन। अस्पताल में हर बेड के सामने आकर मरीज की परीक्षा करते हैं, निकट टंगे चार्ट को पढ़ते हैं और ज़रूरत पड़ने पर हालचाल पूछते हैं। खास-खास मरीज़ों की नाड़ी की परीक्षा करते हैं, कहीं-कहीं स्टैथिस्कोप से जांच करते हैं। जब दोनों तरफ के मरीज़ों को एक-एक कर देख लेते हैं, उसके बाद बगल के हॉल के अन्दर प्रवेश करते हैं।

सवेरे की मीठी धूप आकर ठिठक गई है। चारों ओर से आती हुई समुद्र की हवा से दरवाज़े के परदे हिल-डुल रहे हैं। फर्श पर रेंगती कच्ची धूप का सोना झलमला रहा है। जो मरीज उठकर खड़े हो सकते हैं, वे डॉक्टर के आने के पूर्व ही खिड़की से सटकर बाहर आंखें दौड़ाते हैं। नारियल के पेड़ों की पंक्तियां जहां समाप्त हुई हैं, वहीं से समुद्र की शुरुआत है। लहरें नारियल के पेड़ों के पांवों पर पछाड़ खाकर लोटती हैं। उन्हीं नारियल के पेड़ों की पांत से काले-काले मछुआरे पंक्तिबद्ध होकर चले जा रहे हैं। उनके कंधों पर एक-एक बांस है जिनपर मछली पकड़ने के बड़े-बड़े जाल झूल रहे हैं। बालू पर कई एक नौकाएं पड़ी हुई हैं। कई नौकाएं दूर सागर में निकल चुकी हैं। कई नौकाएं छोटे-छोटे धब्बे जैसी दिख रही हैं। वे लोग मछली पकड़ने की तलाश में निकले हैं। पकड़ने के बाद बालू के टीले पर सूखने देंगे। मछलियां बहुत दिनों तक सूखती रहेंगी और वे लोग आसपास खड़े होकर पहरा देते रहेंगे, वरना चील और बाजों के मारे एक भी मछली नहीं बचेगी। लड़कों और औरतों का काम पहरा देना है। मर्दों का काम मछलियां पकड़ना। उसके बाद जहाज-घाट में जिस दिन डाक-जहाज आकर रुकता है, बड़े-बड़े रबर के पहियेदार ठेलागाड़ियां मछलियां लेने आती हैं। सबसे बाद में आता है चीनी सरदार। उसके हाथ में हिसाब का खाता

"लु···लु···लु···लु···लु···लु···लु···लु···"

दोनों हाथों की उंगलियों को मुंह के अन्दर डालकर वे एक अजीब किस्म की भयंकर आवाज़ मुंह से बाहर निकालते हैं। वह आवाज एक मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले में और वहां से फिर किसी एक तीसरे मुहल्ले के मछुआरों के कानों में गूंजने लगती है। हाथ के काम को ज्यों का त्यों छोड़कर सभी दौड़े-दौड़े आते हैं। "सरदार आया है, सरदार···"

एक खास किस्म का शोरगुल मच जाता है। आज इस हफ्ते का पावना मिलेगा। हफ्ता मिलने पर वे चावल, मिट्टी का तेल और कपड़े खरीदने बाजार जायेंगे। औरतें कंघी और सुगंधित तेल खरीदने जायेंगी। उसके बाद शाम में नाच की मजलिस जमेगी।

चीनी सरदार काला पजामा पहने है। उसकी मूछें लंबी और सुई की तरह नुकीली हैं। ल्यां तोयां आज का आदमी नहीं है। तीस सालों से वह यही कारोबार करता आ रहा है और इस कारोबार पर उसका एकाधिकार है। दुख-मुसीबत आने पर वह कर्ज देता है। फिर किसी दिन जब ब्याज की राशि काफी बढ़ जाती है और जब लोग न तो ब्याज ही चुका पाते हैं और न मूल ही, तब मछलियां दिया करते हैं। ल्यां तोयां बिलकुल सस्ती दर में मछलियां खरीद लेता है। मछली की कीमत में से कुछ पैसे ब्याज की मद में काट लेता है और कुछ पैसे पेट-खर्च के लिए उन्हें दे दिया करता है। इतना कम देता है कि उन्हें और ज्यादा कर्ज लेना पड़ता है और लाचार होकर सस्ती कीमत में मछलियां बेचनी पड़ती हैं।

जहाज से कपड़े, सिगरेट, तंबाकू के पत्ते, चीनी वगैरह बहुत-सी चीजें उतरती हैं। उसके साथ-साथ चिट्ठियों की थैलियां···सफेद और काले चमड़े के गिलास···खिलौने, दवा, चाय, साबुन, तमाम खुदरा माल।

केले का पौद, दालचीनी, इलायची, लौंग और साबूदाने की लदाई होती है। फिर सूखी मछलियां···अलग-अलग माप की, अलग किस्म की मछलियां।

सप्ताह में एक दिन मछुआरे छुट्टी मनाते हैं। उस दिन मछली पकड़ने का झमेला नहीं रहता है। औरतें साफ-सुथरे कपड़े पहनती हैं। देह पर सीपी के

गहने रहते हैं। वे एक मील दूर शहर की चहलकदमी करने जाते हैं। एक-दूसरे के कंधे पर हाथ रखकर चलते हैं, जैसे लंबी-सी एक साकल हो। चीनी मुहल्ले में जुए का खेल चलता है। लोग नशा करते हैं, चाय पीते हैं। काफी रात ढल जाने पर भी कोई घर वापस आने का नाम नहीं लेता।

ल्यां तोयां चिल्ला पड़ता है :

"यकफू पाच लुपिया···"

"विशुख, साढ़े तीन लुपिया···"

"भिरमी, दो लुपिया···"

"वोधक···वोधक···"

वोधक नहीं है। बीमारी के कारण आ नही सका है। उसकी बीवी मुगरी आगे बढ़ आई। मुंगरी घोंघे का हार पहने है, जिसके नीचे सीपी का लॉकेट झूल रहा है। होंठों पर लिपस्टिक का रचाव है।

चीनी सरदार मुंगरी को देखते ही चिल्ला उठा—

"वोधक एक लुपिया···"

"एक रुपये मे क्या होगा सरदार ?" मुगरी के स्वर मे प्रतिवाद की ध्वनि थी। चीनी सरदार बिना ध्यान दिए चिल्ला उठा···

उसके बाद हरेक को रुपया देकर ल्यां तोया जिल्ददार मोटे खाते को निकालता है। एक-एक कर सभी बायें हाथ के अंगूठे का निशान लगाते हैं और दांया हाथ पैसे के लिए फैलाये रखते हैं।

अस्पताल की पूरब की खिड़की से यह सब दृश्य दिख पड़ता है। जब यह अस्पताल यहा बनकर तैयार नही हुआ था तब इस ओर मछुआरों का इससे बड़ा मुहल्ला था। मुगरी का मायका इसी मुहल्ले में था। ताड के बड़े-बड़े पत्तों की छावनी थी। झुककर अन्दर जाना पड़ता था। यहीं भरमी के बाप की सर्पदंश से मृत्यु हुई थी। वह काफी बूढ़ा हो चुका था। यहीं एक बार चौदह साल पहले भूकंप के कारण पानी भर गया था और घर-बार ले गया था। उस वक्त वोधक के जाल में एक हंगर आकर फंस गया था। विशाल हुंगर था वह। वैसा हंगर समुद्र के इस किनारे आमतौर से नजर नहीं आता है। इसके अतिरिक्त हंगर खास-तौर से इतने किनारे आया भी नहीं करता है। पता नहीं कैसे तो भूकंप के समय उतना बड़ा हंगर ऊंची भूमि में वोधक के

जाल में फंस गया था। तमाम मछुआरे मुहल्ले के बूढ़े, बच्चे और औरतों को निमंत्रण मिला। सभी गोलाकार बैठकर गीत गाने लगे और घूम-घूम कर नाचना शुरू कर दिया।

अस्पताल का निर्माण लड़ाई छिड़ने के बाद हुआ।

साहबों ने शहर से दूर, नारियल और ताड़ के वृक्षों की सघन छाया की ओट में अस्पताल का निर्माण किया है। ऊपर हवाई जहाज से यह दिखाई पड़ता है। किसी तरफ से इतने विशाल दोमंज़िले भवन का कोई अता-पता नहीं चलता। सफेद चमड़े के साहबों की अजीब ही बुद्धि हुआ करती है। इस चीनी सरदार ल्यां तोयां से भी वे लोग ज्यादा अक्लमन्द हैं। लड़ाई छिड़ते-न छिड़ते बड़े-बड़े जहाज आए। साहबों और मेमों की जमात आई। सभी लाल-नीली पोशाक पहने थे। नागफणि के वनों में फूल खिलने पर जिस तरह की खूबसूरती छा जाती है, वैसी ही खूबसूरता फैल गई।

उस बार चाय, साबुन और सिगरेट के साथ ढेरों माल उतरा। लोहा, ईंट, लकड़ी, चूना, सुर्खी, गोला-बारूद, तोप-कमान···और भी हजारों तरह के ऐसे माल जिनका नाम मालूम नहीं। भिरमी, मकफू और विशुख की जमात देखकर हैरान हो गई···

एक दिन बिना किसी पूर्व सूचना के उन लोगों के मकानों को मलबे में बदल दिया गया।

कितने ही पुरखों की वह खानदानी जमीन थी। थाली-बर्तन तक हटाया नहीं गया। वक्त पर नोटिस तक न दी। इस तरह मलबे में बदल देगा? इस मकान के अन्दर पकाया हुआ, चावल, कपड़े-लत्ते, चीनी मिट्टी की थाली, लोटा सब कुछ था। औरतों की इज्जत, बाल-बच्चों का सम्मान—कुछ भी मानी नहीं रखता? इस तरह ढाह देगा?

विशुख क्रोध से पागल हो गया था, क्योंकि उसे क्रोध बहुत जल्दी आ जाया करता था।

"हरामजादों को मार डालूंगा! क्या सोचा है उन लोगों ने? हम लोग क्या आदमी नहीं हैं?"

बोधक ने उसे पकड़ रखा। वह धैर्यवान और शांतिप्रिय व्यक्ति है। उन लोगों के हाथों में लंबी-लंबी बंदूकें हैं; उनके जूते वजनदार हैं। उनकी

पोशाक हरे रंग की है। सभी के चेहरे-मोहरे सेनापति जैसे हैं! दिमाग बिगड़ गया है, जो उन लोगों से झगड़ा मोल लेने चला है!

एक बार भूकंप में जैसा हुआ था, इस बार भी तमाम घर-दरवाजों को एक घंटे के दरमियान ढाह दिया गया। इन दोनों ने वहां फिर नये सिरे से मकान बनाए। ल्यां तोयां से ज्यादा ब्याज पर फिर से कर्ज लिया। सफेद चमड़े के साहबों के प्रताप से मुहल्ला खाली हो गया। उसके बाद इस अस्पताल का निर्माण हुआ। निकट से गुजरने पर दवा की कैसी-कैसी तो सोंधी गन्ध आती है! रात के वक्त जब ये लोग ठर्रा पीने के बाद गोलाकार होकर घूम-घूम कर नाचते हैं, खिड़की के सूराखों से रोशनी बाहर दिखती रहती है। बिजली की रोशनी रहती है। बिलकुल दिन जैसा हो जाता है। ये सफेद चमड़े के साहब रात को एकबारगी दिन बनाकर छोड़ते हैं!

एक विशाल अस्पताल का निर्माण हुआ। कुली जहाज पर चढ़कर आए। छः महीने तक लगातार काम चलता रहा। जरूरी काम है, जल्दी-से-जल्दी खत्म करना है। ईंटों पर ईंटें गुंथती गईं। शहर के पच्छिम चीनी बाजार में कुली जुआ खेलने जाते थे। उस चीनी मुहल्ले में मछुआरों के मुहल्ले के लोगों को बाजार करने के लिए जाना पड़ता था। लेकिन समय का वह अन्तराल बहुत कम रहता था, फिर भी इसी के दरमियान चंडूखाने के अड्डे, चाय के अड्डे और जुए के अड्डे से हो लेते हैं और रेडियो का गीत भी सुन आते हैं। पहले वहां इस तरह की बात न थी, लेकिन लड़ाई के पहले ही से भीड़ बढ़ने लगी। उस तरफ की सड़क पर बेहद भीड़ लगी रहती है। उत्तर की ओर के बड़े-बड़े खाली मकानों के मालिकों के पास मोटर गाड़ियां हैं। उन मोटरों को वे लोग अक्सर बेपरवाह चला देते हैं। एक बार पहिये के नीचे आ जाए तो बस हुआ। फिर देखने की कोई जरूरत नहीं। हार्न बजाते-बजाते हाथी जैसी विशाल गाड़ियां आदमी की देह पर चला देते हैं। उनमें दया-माया नाम की चीज नहीं है।

चीनी बाजार समाप्त कर दक्खिन की ओर चलो।

दक्खिन में समुद्र के किनारे से सटे हुए तमाम बाग-बगीचे हैं। घिरे हुए लम्बे-लम्बे बगीचों में सिर्फ केले के दरख्त हैं—एक-दो नहीं, बल्कि हजारों। लेकिन केले के बगीचों के मालिक वहां नहीं रहते। वे लोग उत्त[illegible] तरफ के

...हल्ले के बूढ़े, बच्चे और औरतों
...गया था। ... गोलाकार बैठकर गीत गाने लगे और घूम-घूम
...मिला। सभी
...ना शुरू कर दिया।
...पताल का निर्माण लड़ाई छिड़ने के बाद हुआ।
...हवों ने शहर से दूर, नारियल और ताड़ के वृक्षों की सघन छाया की
...में अस्पताल का निर्माण किया है। ऊपर हवाई जहाज से यह
...ई पड़ता है। किसी तरफ से इतने विशाल दोमंजिले भवन का कोई
...पता नहीं चलता। सफेद चमड़े के साहबों की अजीब ही बुद्धि हुआ
...ती है। इस चीनी सरदार ल्यां तोयां से भी वे लोग ज्यादा अक्लमन्द हैं।
...ाई छिड़ते-न छिड़ते बड़े-बड़े जहाज आए। साहबों और मेमों की जमात
...ाई। सभी लाल-नीली पोशाक पहने थे। नागफणि के वनों में फूल खिलने
...र जिस तरह की खूबसूरती छा जाती है, वैसी ही खूबसूरता फैल गई।

उस बार चाय, साबुन और सिगरेट के साथ ढेरों माल उतरा। लोहा, ईंट, लकड़ी, चूना, सुर्खी, गोला-बारूद, तोप-कमान···और भी हजारों तरह के ऐसे माल जिनका नाम मालूम नहीं। भिरमी, मकफू और विशुख की जमात देखकर हैरान हो गई···

एक दिन बिना किसी पूर्व सूचना के उन लोगों के मकानों को मलबे में बदल दिया गया।

कितने ही पुरखों की वह खानदानी जमीन थी। थाली-बर्तन तक हटाया नहीं गया। वक्त पर नोटिस तक न दी। इस तरह मलबे में बदल देगा? इस मकान के अन्दर पकाया हुआ, चावल, कपड़े-लत्ते, चीनी मिट्टी की थाली, लोटा सब कुछ था। औरतों की इज्जत, बाल-बच्चों का सम्मान— कुछ भी मानी नहीं रखता? इस तरह ढाह देगा?

विशुख क्रोध से पागल हो गया था, क्योंकि उसे क्रोध बहुत जल्दी आ... जाया करता था।

"हरामजादों को मार डालूंगा! क्या सोचा है उन लोगों ने? हम लो... क्या आदमी नहीं हैं?"

बोधक ने उसे पकड़ रखा। वह धैर्यवान और शांतिप्रिय व्यक्ति है। ... लोगों के हाथों में लंबी-लंबी बंदूकें हैं; उनके जूते वजनदार हैं। ...

पोशाक हरे रंग की है। सभी के चेहरे-मोहरे सेनापति जैसे हैं! दिमाग बिगड़ गया है, जो उन लोगों से झगड़ा मोल लेने चला है!

एक बार भूकंप में जैसा हुआ था, इस बार भी तमाम घर-दरवाजों को एक घंटे के दरमियान ढाह दिया गया। इन दोनो ने वहां फिर नये सिरे से मकान बनाए। ल्यां तोमा से ज्यादा ब्याज पर फिर से कर्ज लिया। सफेद चमड़े के साहबो के प्रताप से मुहल्ला खाली हो गया। उसके बाद इस अस्पताल का निर्माण हुआ। निकट से गुजरने पर दवा की कैसी-कैसी तो सोंधी गन्ध आती है! रात के वक्त जब ये लोग ठर्रा पीने के बाद गोलाकार होकर घूम-घूम कर नाचते हैं, खिड़की के सूराखों से रोशनी बाहर दिखती रहती है। बिजली की रोशनी रहती है। बिलकुल दिन जैसा हो जाता है। ये सफेद चमड़े के साहब रात को एकबारगी दिन बनाकर छोड़ते हैं!

एक विशाल अस्पताल का निर्माण हुआ। कुली जहाज पर चढ़कर आए। छः महीने तक लगातार काम चलता रहा। जरूरी काम है, जल्दी-से-जल्दी खत्म करना है। ईंटों पर ईंटें गुंथती गई। शहर के पश्चिम चीनी बाजार में कुली जुआ खेलने जाते थे। उस चीनी मुहल्ले में मछुआरों के मुहल्ले के लोगो को बाजार करने के लिए जाना पड़ता था। लेकिन समय का वह अन्तराल बहुत कम रहता था, फिर भी इसी के दरमियान चंडूखाने के अड्डे, चाय के अड्डे और जुए के अड्डे से हो लेते हैं और रेडियो का गीत भी सुन आते हैं। पहले वहां इस तरह की बात न थी, लेकिन लड़ाई के पहले ही से भीड़ बढने लगी। उस तरफ की सड़क पर बेहद भीड़ लगी रहती है। उत्तर की ओर के बड़े-बड़े खाली मकानों के मालिकों के पास मोटर गाड़ियां हैं। उन मोटरों को वे लोग अक्सर बेपरवाह चला देते हैं। एक बार पहिये के नीचे आ जाए तो बस हुआ। फिर देखने की कोई जरूरत नही। हार्न बजाते-बजाते हाथी जैसी विशाल गाड़ियां आदमी की देह पर चला देते हैं। उनमे दया-माया नाम की चीज नही है।

चीनी बाजार समाप्त कर दक्खिन की ओर चलो।

दक्खिन मे समुद्र के किनारे से सटे हुए तमाम बाग-बगीचे हैं। घिरे हुए लम्बे-लम्बे बगीचों में सिर्फ केले के दरख्त हैं—एक-दो नही, बल्कि हजारों। लेकिन केले के बगीचों के मालिक वहां नही रहते। वे लोग उत्तर की तरफ के

ुहल्ले में रहते हैं और उन लोगों का कारोबार दक्षिण में है। दक्षिण की हवा से केले के पत्ते फर-फर उड़ते रहते हैं। सप्ताह में एक बार जहाज़ जेटी से लगता है। रबर की पहियेदार ठेलागाड़ियों से, जिस ी मछलियां लादी जाती हैं, कुली उसी तरह अपने-अपने सिर पर केले ढोकर चढ़ाते हैं। मछलियां और केले के घौद कहां जाते हैं, कौन खाता ता नहीं। अस्पताल की छत पर चढ़ने से हो सकता है कि यह देखने में , कि जहाज़ किस ओर जा रहा है। लेकिन इन नारियल के दरख्तों के े बालू के ढूह पर खड़े होकर देखने से दूर की चीज़ें दृष्टिगोचर नहीं होती । अन्त में जहाज़ की चिमनी से धुआं ऊपर की ओर उठता है और पूरब के ासमान में यत्र-तत्र उसका हल्का आभास प्रतीत होता है।

शहर के बीच—ठीक बीचोबीच—गिरजाघर है। चौराहे की मोड़ पर टावर। चारों तरफ चहारदीवारी से घिरे बगीचे। छोटा-सा एक फव्वारा। उत्तर दिशा के मुहल्ले के साहबों के बाल-बच्चे दाई-नौकरों के साथ यहां चहलकदमी करने आते हैं।

अस्पताल के चारों तरफ परती ज़मीन है। साहबों ने किसी उद्देश्य से ही प्रेरित होकर खुली ज़मीन में अस्पताल का निर्माण कराया था। व्यापार और जमींदारी करने के लिए जो साहब आते थे, बीमारी की हालत में उनकी सेवा-चिकित्सा हो सके—अस्पताल बनवाने के पीछे उनका यही उद्देश्य था। पोलो खेलने के लिए मैदान, घुड़दौड़ के लिए मैदान—इन सबों का भी होना ज़रूरी था।

लेकिन लड़ाई के दौरान सब कुछ उनके हाथ से निकल गया। चालानी जहाज़ पर लदकर एक दिन हड़बड़ाते हुए लाल मुंह वाले सभी साहब चले गए। कहां गए, ईश्वर जाने। एक दिन जापानी आए। चीनि बाज़ार से तमाम चीनियों को मार-मारकर भगा दिया। कुछेक को पकड़ ले गए। साहबों पर निगाह पड़ते ही तत्काल उनकी हत्या कर डाली। वह कांड ही था। शोरगुल के मारे रात में नींद नहीं आती थी। कितनी भी आवाज़ थी! जापानियों और साहबों में लड़ाई छिड़ी थी। चीनी सरदार तोयां आ नहीं पाता था।

यह सब आज से बहुत पहले की बातें हैं।

इस दरमियान कितने ही कांड हो चुके हैं। बोधक का बड़ा लड़का बम के टुकड़े की चोट से मारा गया। समुद्र में मछली पकड़ने गया था, तभी जापानियों के बम की चोट से कंपनी का चालानी जहाज टुकड़ा-टुकड़ा हो गया। दूसरे दिन सुबह ज्वार के साथ सफेद चमड़े की लाशें ढूहों पर तैरकर आने लगीं। बोधक के लड़के की लाश भी अस्पताल के सामने आकर लगी।

लड़ाई छिड़ने के एक दिन पहले सभी साहब भाग खड़े हुए। जो-जो भागकर चले गए उनमें से सभी क्या जिन्दा बच गए! अनेकों बम की चोट से मौत के मुंह में समा गए और अनेकों अर्द्धमृत अवस्था में पानी के अन्दर डूबकर खत्म हो गए।

अस्पताल से डॉक्टर और नर्स देख रहे थे।

तब वहां के डॉक्टर थे बूढ़े जानसन साहब। उसकी दाढ़ी लंबी थी। मुंह में हमेशा पाइप लगा रहता था। जब चालानी जहाज जेटी में आकर लगता, जानसन साहब अस्पताल से स्वयं आकर पार्सल और चिट्ठी वगैरह ले जाते थे। वृद्ध जानसन साहब जेटी के रास्ते में मछुआरों के बाल-बच्चों के हाथ में पैसा थमाते हुए चलते थे।

उसके बाद ओकिकुरा साहब आया।

ठिगने कद का, चिपटी नाक वाला जापानी डॉक्टर। रातों रात नर्सों की जमात में रद्दोबदल हो गई। हवाई जहाज से जापानी लड़कियां आईं। वे रात-दिन काम में तल्लीन रहती थी, न कहीं घूमती-फिरती थी और न किसी की ओर आंख उठाकर ताकती थी। बस काम और काम। कहीं से जहाज में भरकर मरीज लाए जाते थे, जिनके हाथ-पांव, चेहरे पर बैंडेज बंधे रहते थे। रुलाई से जेटी-घाट थरथराने लगता था। किसी का धड़ गायब है, किसी की आंखें उलट गई है, गले से चीं-चीं आवाज निकलती है। सभी को अस्पताल लाया जाता है। कोई रास्ते में ही मर जाता है, कोई दो दिन जिन्दा रहता है और कोई दो घण्टे।

विशुख और भिरमो की जमात गरमी के मौसम मे बाहर सोई थी। उन्होंने देखा, रात के अंधेरे मे ठेलागाडियो से भरे आदमियों को नावो पर लादकर किसी दूर द्वीप की ओर चले गए। हो सकता है कि दूर ले जाकर

ड़ देंगे या जलाकर राख वना देंगे।
ह सव लड़ाई के वक्त की वातें हैं। तव ऐसी हालत थी कि कौन
वचेगा और कौन मारा जाएगा, कहना मुश्किल था। दिन-रात साइरन
ा रहता था। गिरजाघर के इर्द-गिर्द ट्रेंच खोदे गए थे। धायं-धायं
ाज़ होती रहती थी। मछली पकड़ने में भय का अहसास होता था, क्योंकि
पनडुब्बियां आकर तोपों का निशाना वना दें, कहना मुश्किल है। कभी-
भी हवाई जहाज़ से पनडुब्बियों पर वम गिराया जाता था और देखते न
खते नीला पानी वैंगनी रंग में वदल जाता था। वे कितने डरावने दिन थे!
कितनी डरावनी रातें!

अव सव कुछ वदल गया है। ल्यां तोयां पहले की तरह ही चीनी वाज़ार
के नुक्कड़ पर स्थित चंडूखाने के अड्डे पर आकर वैठता है। मछुआ टोली
के वाशिन्दे दुवारा उसी तरफ से होते हुए लिफू की दुकान में पहुंचते हैं और
सौदे खरीदते हैं। केले के वगीचे के मालिक विलसन साहव की गाड़ी कीचड़
उछालती हुई निकल जाती है। चूंकि वह विलसन साहव का ड्राइवर है, इस-
लिए घमण्ड से चूर रहता है। होटल के सामने तख्त पर वैठी वूढ़ी विधवा
मातुं झोटा लपटे पैरों को हिलाती हुई सड़क की ओर ताकती रहती है।
सामने के होटल में रेडियो और जगमगाती वत्तियां लगाए गए हैं। तमाम
गाहक वहीं इकट्ठे होकर भीड़ लगाया करते हैं। ईर्ष्या से विधवा वूढ़ी मातुं
का लटका हुआ चेहरा और भी लटक जाता है। दांतों का डॉक्टर लड़ाई के
दिनों में कहीं भागकर चला गया था। वह फिर से लौट आया है। उसने दुवारा
दुकान के सामने शीशे की आलमारी लगवाई है। आलमारी के वीच वत्तीसो
दांत वाहर निकाले हुए एक नर-मुंड सजा रहता है। चीनी वाज़ार
चीनियों ने दुवारा यहां आकर वाज़ार को गुलज़ार कर दिया है। जापानि
के समय एक भी चीनी यहां नहीं था। डॉक्टर ओकिकुरा के वाद युवा सा
कर्नल वाटसन आए हैं। लम्वी आकृति, लम्वोतरा खूवसूरत चेहरा।
दिन किताबों में ही डूवे रहते हैं। किताव पढ़ते-पढ़ते संभवतः उनकी
खराव हो गई हैं। मोटे कांच का चश्मा लगाते हैं। वूढ़ी मेट्रन सिर
रूमाल वांधे उजले-धुले गाउन में कर्नल वाटसन के पीछे-पीछे चक्कर
करती है। रूमाल की वजह से उसके पके वाल ढंके रहते हैं।

आज संभवतः चालानी जहाज आने का दिन है। त्यां तोयों की आवाज़ यहां साफ-साफ पहुंच रही है :

"भेरमी छह लुपिया···

"वोधक एक लुपिया···

"विशुख तोन···"

बरामदे को पारकर डॉक्टर मेट्रन के साथ उत्तर के हॉल में पहुंचे। कहीं कोई गंदगी या मैल नहीं है, फर्श झिकमिक चमक रहा है। धूप आकर फर्श पर चिपक गई है। आज सुबह से ही सफाई चल रही है। हेड ऑफिस से सेक्रेटरी आया है। आज सभी चीजों की जांच-पड़ताल होगी। साल में एक बार उनका आना होता है। आज की जांच-पड़ताल पर बहुतों का भविष्य निर्भर करता है।

कर्नल वाटसन जीने के पास आकर ठिठक गए।

मेट्रन संत्रस्त होकर सामने बढ़ आई।

"यह सब क्या है—कपड़ों के फटे टुकड़े! उन सबों को क्यों नहीं फेंका गया? सारा कूड़ा-कचरा···"

जीने से उतरने के बजाय कर्नल बायी ओर से चक्कर लगाकर आया। बायीं ओर पहले एक केबिन है। केबिन के सामने लाल स्याही से लिखा है: 'साइलेन्स' यानी चुप। और उसके नीचे मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा है: 'केस नम्बर ४६।'

मेट्रन अपने आप बोल उठी, "सबेरे देख गई थी, सो रहा था, सर···"

कर्नल वाटसन ने जेब से नोटबुक निकाली। बहुत सारे पन्नों को पलटने के बाद एक पन्ने पर उनकी आंखें ठिठक गईं। पूछा, "यह यहां कितने बरसों से है?"

मेट्रन ने आगे बढ़कर कहा, "जापानियों के समय से ही है, सर! अब तक कोई सुधार नहीं हुआ।"

कर्नल से दुबारा सवाल किया, "मेडिकल जरनल में इसी के बारे में छपा था न? तसवीर के साथ पूरा इतिहास इसी का था न?"

मेट्रेन बोली, "हां सर, यह वही केस नम्बर ४६ है, जिसके बारे में अमरीका के मेडिकल जरनल में लेख छपा करते हैं···"

ने नोटबुक के पन्नों को फिर से एक बार देखा और कहा, "इसी के लिए बर्लिन से डॉक्टर सुल्जबर्जर आए थे?" "हां," मेट्रेन ने कहा, रीका से आए थे मेडिकल बोर्ड के प्रेसिडेण्ट डॉ०थियोडोर क्लेयर।" ानक मेट्रन के चेहरे पर डॉक्टर की आंखें ठिठक गईं। उन्होंने पूछा, कितने दिनों तक इसे यहां रखा जाए ?"

ट्रन के उत्तर पर भरोसा न करके कर्नल ने आहिस्ता-से केबिन के दरवाजे को ठेला। बाहर रोशनी थी, अन्दर अन्धेरा। शुरू में बहुत-कुछ ला-धुंधला जैसा महसूस हुआ। लेकिन ज्योंही गौर से ताका, कर्नल सन चौंक उठे। कमरे के अन्दर कोई नहीं था।

२

यह कहानी कहने के लिए कुछ दिन पीछे की ओर लौटना पड़ेगा, कुछ वर्ष पीछे की ओर।

केस नम्बर ४६ का तब कोई नाम था। यह बहुत दिन पहले की बात है। तब कुल मिलाकर युद्ध की शुरुआत हुई थी। एक दिन सैनिकों के दल में नाम लिखाकर वह यहां इस लड़ाई के मैदान में आया था। उसके बाद कितना कुछ घटित हो चुका है, कुछ भी याद नहीं। डॉक्टर आता है और उसकी परीक्षा करके चला जाता है। पूरे जिस्म की जांच करता है और अजीब-अजीब तरह के सवाल पूछता रहता है।

मरीजनुमा लम्बा डॉक्टर पूछता है, "तुम्हारा नाम क्या है ?"

वह अवाक्-सा ताकता है। वह अपना नाम याद नहीं कर पाता है।

"तुम्हारा मकान कहां है ?"

"मालूम नहीं।"

"यहां कब आए हो ?"

"मालूम नहीं।"

"तुम्हारे रेजिमेण्ट का क्या नम्बर है ?"

"मुझे यह मालूम नहीं। यहां सभी मुझे केस नम्बर ४६ कहकर पु

हैं।" वह उत्तर देता है।

हजारों प्रश्न पूछे जाते हैं। प्रश्नों का कोई अन्त नहीं। वह भी क्या सिर्फ एक ही आदमी? कहां-कहां से नये-नये डॉक्टर आते हैं। मेट्रन उनके साथ रहती है। और उसको केन्द्र मानकर अनुसंधान का सिलसिला चलता है—उसके नाम और धाम के संदर्भ में गवेषणा होती है। उसकी कितनी ही तस्वीरें लेता है। ये तस्वीरें विलायत और जर्मनी की तमाम डॉक्टरी की पत्रिकाओं में छपती है। जब जापानी डॉक्टर था, उस वक्त भी यही सिलसिला चलता रहा। जैसे वह सभी के लिए कौतूहल की सामग्री हो। जैसे उसमें जीवन न हो। जैसे हर कोई उसे चूहा या गिनपिग के रूप में ले रहा हो। जो भी मरज़ी होती है, उससे बातें कर जाता है। कभी-कभी दोनों पैरों को ऊपर की ओर उठाकर और सिर को नीचे की ओर रखकर उसे सुलाया जाता है। फिर दिन में आकर विभिन्न प्रकार की चिकित्सा की जाती है। नतीजा कुछ हुआ या नहीं, देखना चाहिए। हो सकता है कि दो दिनों तक उसे निराहार रखा जाए, फिर अलग-अलग रंगों और जायके की दवाएं दी जाएं। मुंह तीता हो जाता है, कै करने का मन होता है। कभी-कभी कच्चा केला उबालकर खाने के लिए दिया जाता है। न नमक, न तेल—कुछ भी नहीं! हो सकता है, कोई नतीजा निकले। वह अगर स्वस्थ हो जाए या उसकी स्मरण-शक्ति लौट आए तो डॉक्टरों का बड़ा ही नाम फैलेगा, पैसे मिलेंगे, ख्याति प्राप्त होगी। डॉक्टरों की जमात नाम कमाने के उद्देश्य से उसको लेकर खींचतान कर रही है। उसका जिन्दा रहना या मरना एक जैसा है। इससे किसी का कुछ बनता-बिगड़ता नहीं।

"मेट्रन, कल से इसे सिर्फ नीम के पत्ते खिलाकर रखना।"

डॉक्टर परामर्श देकर चले गए। भय से उसकी संपूर्ण देह सिहर उठी। दिन पर दिन, साल पर साल उसको लक्ष्य बनाकर यही सिलसिला चलता रहेगा। इसका कोई अन्त नहीं। कितने सालों से यह सिलसिला चल रहा है, वह इसे याद नहीं कर पा रहा है। फिर भी उसे बड़ा कष्ट होता है। शारीरिक कष्ट।

जब कमरे के अन्दर कोई नहीं रहता है, वह बिस्तर से उठकर खिड़की के पास खड़ा होता है। वहां कितनी विशाल धरती है! कितने ही आदमी!

कितना आनन्द, कितनी हंसी-खुशी ! वहां जाने का उसे कोई अधिकार नहीं। उसे केवल कैदी बनकर रहना होगा। डॉक्टरों की मरजी पर निर्भर रहकर उसे जीवन जीना है। डॉक्टरों की अभिरुचि पर उसका जीना या मरना निर्भर करता है।

शरीर के घाव भर गए हैं। अब किसी किस्म की यातना का अहसास नहीं होता। वह काफी स्वस्थ हो गया है। अनुमति मिले तो वह बाहर निकल जाए। समुद्र के किनारे रेत पर जाकर मछलियों का पकड़ना देख सकता है।

कुछ दिन पहले उसके सिर में बैंडेज बंधी थी। सिर बड़ा ही भारी-भारी जैसा लगता था। उसके बाद एक दिन डॉक्टर आया और बैंडेज खोल दी। अब सिवा इस तकलीफ के उसे और कोई दूसरी तकलीफ नहीं है। ये लोग ऐसी-ऐसी चीजें उसे खाने के लिए देते हैं जो उसे पचती ही नहीं। पूरा मुंह, पूरी आत्मा कसैलेपन से पूर्ण हो जाते हैं। काश वह आसमान के गिद्ध की तरह उड़ पाता ! काश वह कम से कम मछुआरों के साथ नाव में बैठकर समुद्र में मछलियां पकड़ पाता ! यह जो जहाज आया हुआ है उसमें आज कितनी भीड़ है ! बड़ा डॉक्टर पैदल जा रहा है। कितना ही माल-असबाब उतर रहा है ! ये लोग स्वतंत्र हैं। कोई उन्हें रोककर नहीं रखता। एकमात्र वही बंदी है।

कभी-कभी रात में, गहरी रात में, जब नींद उसकी आंखों में नहीं उतरती, वह कमरे के अन्दर चहलकदमी करने लगता है। चहलकदमी करता है और सोचता रहता है। असंलग्न चिंताएं—जिनका न कोई आदि है और न कोई अंत। उसे याद आता है कि वह यहां कहां से आया है ? वह जाए तो कहां जाए ? वह यहां क्यों रह रहा है ? उसे कौन यहां ले आया है ? डॉक्टर आकर अजीब-अजीब किस्म के सवाल करते हैं, वह कैसे सारी बातों का उत्तर दे ! और जब तक वह उत्तर न देगा, ये छोड़ेंगे नहीं। ये लोग उसे चाकू से काट-काट कर चीर-फाड़कर देखना चाहते हैं। सवाल यह बड़ा नहीं है कि वह जिन्दा रहे।

डॉक्टर आकर पूछते हैं, "तुम्हें कौन-सी चीज खाने की इच्छा होती है ?"

वह काफी देर तक सोचता है। सचमुच उसे क्या खाने की इच्छा होती है ? बहुत देर तक सोचने-विचारने के बाद भी उसे कोई कूल-किनारा नहीं

मिलता। अंत में वह कहता है, "मुझे छोड़ दें, डॉक्टर साहब..."

"छोड़ दूं तो तुम कहां जाओगे?" डॉक्टर पूछता।

"समुद्र के किनारे जाऊंगा—जहां मछुआरे मछली पकड़ रहे हैं। उसके बाद नाव पर चढ़कर समुद्र के बीच जाऊंगा।" वह कहता।

"अगर तुम डूब जाओ?"

हां, बात तो सही है। डूब जाने का मानी है सांस का बंद होना और मौत के मुंह में समा जाना। यानी फिर वह ज़िन्दा न रह पाएगा। धरती, प्रकाश, वायु, परिन्दे, समुद्र—किसी को वह देख नहीं पाएगा।

डॉक्टर फिर से पूछता, "क्या खाओगे? क्या खाकर ज़िन्दा रहोगे? तुम्हें खाने को कौन देगा?"

उन बातों का वह कोई उत्तर नहीं दे पाता है। कोई खाना देता है तभी न आदमी खा पाता है! सचमुच वह क्या खाएगा? कौन उसे खाना देगा? यहां उसे अवश्य ही तकलीफ होती है, मगर रात में नर्स आकर बिस्तर बिछा जाती है, मच्छरदानी लगा जाती है। नहाने के लिए तेल दे जाती है।

डॉक्टर सोचते हैं कि मरीज़ अब तक स्वस्थ नहीं हो पाया है। धीमी आवाज़ में वे मेट्रन से क्या कहते हैं, वह सुन नहीं पाता। कठोर दृष्टि से वह डॉक्टर का पीछा करता है। कितने निष्ठुर हैं ये लोग!

फिर किसी दिन हाथ में नोटबुक थामे डॉक्टर आता है। वही एक ही प्रश्न की पुनरावृत्ति:

"तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हार देस कहां है? तुम्हारे पिताजी का नाम क्या है? तुम्हारे रेजिमेण्ट का नम्बर क्या है?"

संख्यातीत प्रश्न। इयत्ताहीन कौतूहल। वह एक बात का भी उत्तर नहीं दे पाता है। समग्र पृथ्वी को टटोले चलता है। कहीं किसी आशा का इंगित नहीं। इन तमाम प्रश्नों का जब तक वह उत्तर नहीं देगा तब तक उसे छुटकारा नहीं मिलेगा। उत्तर न दे पाएगा तो दिन के बाद दिन, साल के बाद साल इसी तरह का अत्याचार चलता रहेगा। कितनी तरह की दवाएं, कितने तरह के इलाज चलते रहते हैं। कुछ भी कारगर साबित नहीं होता, और इसीलिए उनकी जांचों का क्रम अनवरत चलता रहता है।

एक दिन मेट्रन आई और बहुत-सी किताबें दे गई। तमाम किताबें

अलग-अलग रंगों की। पहले पहल पढ़ने में थोड़ी ऊब महसूस हुई। कितने दिनों से, कितने वरसों से उसने पुस्तकें नहीं पढ़ी हैं। किताब पढ़ते-पढ़ते वह तल्लीनता में डूब गया है। दुनिया में कितने देश, कितने आदमी, कितना आकाश, कितनी वातें हैं! कितने समुद्र, कितना नीलापन लिए हैं; कितना सुख है, कितना मधुर और गंभीर! इस छोटे अस्पताल के वाहर वहुत वड़ी दुनिया फैली है! इस समुद्र के उस पार कितने जनपद, कितने मनुष्य हैं! वहां आदमी आदमी को प्यार करता है, आदमी-आदमी को रुलाता है—हास-रोदन से परिपूर्ण है हमारी यह पृथ्वी! आकाश के जो तारे टिमटिमाते रहते हैं, वे कितने वड़े-वड़े ग्रह हैं! आकाश की जैसे कोई सीमा नहीं, लगता है, इस पृथ्वी की भी कोई सीमा नहीं है। इस सीमाहीन पृथवी का वह खुद भी एक व्यक्ति है, उसे भी यहां जीवन जीने का अधिकार है, जीवन भोगने का अधिकार है। आकाश की नीलिमा और धरती की हरीतिमा से उसका भी तो मन थिरकने लगता है; वह यहां क्यों वंदी है? इस तरह की असंगत चिन्ताएं उसे रात-दिन जकड़े रहती हैं।

मेट्रन उसे विभिन्न देशों के समाचार पत्र लाकर देती है। कितनी ही खवरें रहती हैं। कव तो विश्वव्यापी युद्ध हुआ था। चारों तरफ उसी की अनुवृत्ति चल रही है। एटमवम किसे कहते हैं? लगता है, एक के ही विस्फोट से सव कुछ ध्वस्त हो जाता है। अमरीका और इंगलैंड, अफ्रीका और रूस, चीन और हिन्दुस्तान—यह सव देशों के नाम हैं।

एक दिन पुस्तक पढ़ते-पढ़ते सहसा उसे एक प्रकार की अद्भुत अनुभूति हुई—वड़ी ही अद्भुत अनुभूति। तमाम शिराओं में रक्त का संचालन होने लगा, जैसे उसने नये सिरे से जन्म लिया हो, नये सिरे से दृष्टि-शक्ति उपलब्ध की हो, नये सिरे से सांसें ली हों। समग्र अनदेखी पृथ्वी का परिदर्शन जैसे नये सिरे से हुआ हो। संपूर्ण शरीर रोमांचित हो उठा।

एकाएक उसे अहसास हुआ कि वह अकेला नहीं है। उसके भी आत्मीय हैं, स्वजन हैं। लगा, वह वेवजह यहां कैदी वनकर है। अगर वह शक्ति का उपयोग करे तो मुक्त हो सकता है। पुस्तक पढ़ते-पढ़ते उसकी आंखें लाल हो गईं। दोनों हाथ अवश हो गए। तीक्ष्ण दृष्टि से पांच सौ पन्नों की उस पुस्तक के पन्नों को पढ़ने लगा। वह जिस पुस्तक को पढ़ रहा है उसमें उसी की वातें

हैं। हूबहू जैसे उसका ही जीवन है। कलकत्ते में शंभुनाथ लेन का वह मकान उसी का है। वह उसी का नौकर गोविन्द है। गली है, मगर है मकान विशाल। उतने विशाल मकान में वह और उसके पिता रहते थे। जिस दिन दोपहर के वक्त स्कूल में छुट्टी रहती थी और उसके पिताजी कालेज में पढ़ाने गए हुए होते थे, उसका एकाकीपन। गरमी के दिनों में आइसक्रीम बेचनेवाले की चिल्लाहट : बरफ चाहिए···आइसक्रीम··· फिर टनटन आवाज करते हुए बर्तनवाले का जाना।

हूबहू ठीक उसी की तरह···

उसकी बातें इस तरह किसने लिखी ? वह एक दिन किसी को बिना कहे-सुने लाम पर चला गया था। बाप का एकलौता लड़का था—प्रचुर धन और वैभव का अधिपति। सब कुछ त्यागकर वह लड़ाई में शामिल हुआ। लेकिन क्यों ?—केवल एकाकीपन को दूर करने के लिए। दुनिया को जानने का उसमें आग्रह नहीं था ? या छुटपन में उसने अपनी जिस मां को खो दिया था, हो सकता है कि उसी मां ने आकाश के हर तारे से इंगित करके घर की मोह-ममता से उसे दूर कर दिया हो। कौन कह सकता है !

पांच सौ पन्नों की पुस्तक थी। उस पुस्तक ने उसकी आंखों की निद्रा और शरीर का विश्राम हर लिया।

एक-एक कर सब कुछ याद आने लगा।

···उसके बाद वह युद्ध—प्रलयंकर युद्ध। वह बेहोश होकर गिर पड़ा। कितनी भयंकर आवाज थी ! कितना कठोर आघात ! सिर पर तोप के गोले का टुकड़ा आकर लगा और वह छिटककर जमीन पर गिर पड़ा। उसके बाद होश में आते-न आते तोप से एक गोला सामने आकर गिरा। भुरभुरी मिट्टी और घास की थिगलियों से वह ढक गया। सभी को पता चला कि वह मारा गया। उसके बाप के पास तार आया : उसके पुत्र ने ससम्मान लड़ाई के मैदान में वीर की तरह प्राणों का त्याग किया···

पिता ने पांच सौ पन्नों की पुस्तक उसको ही केन्द्र मानकर लिखी है। दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक नित्यानंद सेन को इस पुस्तक पर विश्वविद्यालय की ओर से डी० लिट्० की उपाधि मिली है। यह पुस्तक बेजोड़ है ! सारे देश में उनका नाम फैल गया है। परलोक तत्त्व से सम्बद्ध इस पुस्तक ने चारों तरफ

उत्तेजना फैला दी है। दुनिया में इसकी कितने हजार की संख्या में खपत हुई है, यह बात पुस्तक के प्रथम पृष्ठ में अंकित है। कितनी आश्चर्यजनक पुस्तक है! पढ़ने का नशा सवार हो गया।

रातुल! रातुल!

केस नम्बर ४९ को एकाएक याद हो आया। उसका नाम रातुल है। रातुल सेन। उसका देस कलकत्ता है, शम्भुनाथ पंडित लेन में। उसे सब कुछ याद आया : उसका देस है, पिता हैं। वह कैदी नहीं है।

मेट्रन ने आकर पूछा, "किताब पढ़ना खत्म नहीं हुआ?"

"नहीं; इसे रहने दें।" रातुल ने कहा।

बार-बार पढ़ने पर भी पुरानी नहीं हुई। उसने फिर कोई दूसरी पुस्तक नहीं पढ़ी। पढ़ने की इच्छा ही नहीं हुई। अपने पिता डॉक्टर सेन की लिखी 'परलोक तत्त्व' लेकर वह सोता था और फिर जगकर पढ़ना शुरू कर देता था। कहीं जैसे यह रत्न छिपा हुआ पड़ा था और बहुत दिनों के बाद उसे प्राप्त हुआ है। उसके बारे में उसके पिता ने पुस्तक लिखी है। ठीक उसके बारे में नहीं, बल्कि उसकी आत्मा के बारे में। रातुल की मृत आत्मा से उनका वार्तालाप, रातुल की पितृभक्ति, स्वर्ग जाने के बावजूद पिता से मिलने की उसकी तीव्र आकांक्षा—सारी बातें हैं। मगर कितना गहरा अनुराग है! रातुल को याद आया—जब वह लड़ाई में भरती हुआ तो पिता के हृदय में कितनी प्रबल यातना थी! वही यातना उनकी तमाम चिट्ठियों में गहरे अनुराग के रूप में व्यक्त हुई है। सिंगापुर से मलय देश, मलय देश से फिलिपाइन्स—वह जहां-जहां गया है, पिता की चिट्ठियों ने उसका पीछा किया है। तब कभी-कभी उसे लगता कि वह लड़ाई में क्यों भर्ती हुआ! पिता के मन में कष्ट पहुंचाकर वह क्यों विश्व-विध्वंसक युद्ध में सम्मिलित हुआ? राइफल चलाते-चलाते जब धुएं से सारा आसमान भर जाता, वह असीम में खो जाता था। उसे कोई चेतना नहीं रहती थी। उसके दोस्त-मित्र कहा करते थे कि वह बड़ा ही साहसी है, कि उसके समान उन लोगों के रेजिमेंट में कोई दूसरा वीर पुरुष नहीं है। लेकिन रातुल खुद जानता था कि वह कितना असहाय है। दूर से पिता की यादें उसे पागल बनाकर छोड़ती थीं, पिता की याद आते ही वह धीरज खो बैठता था। तब उसे होश-हवास नहीं रहता था, राइफल

के धुएं के गुब्बारे से वह आसमान को काले रंग में बदल देता था ताकि कहीं कोई रिक्त स्थान न रह जाए। रह जाएगा तो पिता के चेहरे की याद आने लगेगी।

पुस्तक की हर पंक्ति में रातुल के लिए कितनी उद्विग्नता है! रातुल से साक्षात्कार करने की उनमें कितनी प्रबल आसक्ति है! उसे मृत समझकर अत्यन्त व्यस्तता में तल्लीन हो परलोक के बारे में लगातार साधना कर रहे हैं। यह तो मात्र रातुल से मिलने की आसक्ति और उससे बातचीत करने की तीव्र इच्छा करने के कारण ही है।

अचानक पिता से मिलने की रातुल को इच्छा हुई।

सवेरा होते ही मेंट्रन आएगी। रोजमर्रे की तरह वह एकरस प्रश्नों की झड़ी लगा देगी।

रातुल ने आहिस्ता से दरवाजा खोला। शायद हलकी-सी आवाज हुई। सो हो, कोई हानि नहीं। सभी नींद की बाहों में ऊंघ रहे हैं। दबे पावों वह सीढ़ियां उतरा। सीढ़ी की बत्ती तब जलो हुई थी। पता नहीं क्यों, रातुल को डर नहीं लगा। वह फिर से पिता से मिलने जाएगा। अब डरने से काम चलने का नहीं है। पीछे के फाटक को पारकर सीधे उस ओर निकला जहां जहाज-घाट है।

आज मछुआरों की छुट्टी का दिन था। बड़े-बड़े घड़ियालों की तरह नौकाएं पेट के बल पड़ी थीं। नारियल के दरख्तों की पत्तियां सर-सर आवाज कर रही थीं। पीछे से पता नहीं, कौन-कौन उसका पीछा कर रहे हैं। कहीं वे उसको पकड़वा न दें! रातुल ने मुड़कर अस्पताल की ओर निगाहें फेरीं। साधारण-सी कई बत्तियां टिमटिमा रही थीं। चारों तरफ हवा चल रही थी।

आहिस्ता-आहिस्ता रातुल जेटी के ऊपर पहुंचा। रात का अंतिम पहर ऊंघ रहा था। जेटी का पहरेदार तिपाई पर नींद में डूबा हुआ था। रातुल चुपचाप डेक पर आकर खड़ा हुआ। सिर पर मुक्त आकाश है। अनगिनत तारों का जमघट। एकाएक बगल में किसी के पैरों की आहट हुई

झटपट, एक ही लमहे के अन्दर रातुल डेक के नीचे छिप गया

कर्नल वाटसन मेंट्रन की ओर मुड़े।

बोले, "केस नम्बर ४६ कहां है? तुम्हारा मरीज?"

मेट्रन का चेहरा बुझ गया। कोई उत्तर खोज न पाने के कारण वह चुप्पी ओढ़े खड़ी रही।

कर्नल वाटसन की आवाज़ में तीखापन आ गया, "मरीज़ कहां है? जवाब दो···"

मेट्रन मौन थी। वाटसन ने अब बोलना फिज़ूल समझा। सीधे नीचे उतर आया। "दरवान, दरवान!"···उसने पुकारा।

दरवान आया। मलयदेशीय दरवान। उम्र चालीस वर्ष, दाढ़ी-मूंछ उगी नहीं है।

"दरवान, चारों तरफ आदमी भेजो," डॉक्टर ने कहा, "अभी तुरन्त, केस नम्बर ४६ भाग खड़ा हुआ है। जहां भी हो, खोजकर लाओ···"

मोटे कांच के चश्मे के नीचे वाटसन की आंखों में उद्विग्नता मंडराने लगी।

केस नम्बर ४६ भाग खड़ा हुआ है।

लोग शहर के उत्तरी मुहल्ले में गए। एक व्यक्ति चीनी मुहल्ले के बाज़ार के ल्यां तोयां के चण्डूखाने के अड्डे पर पहुंचा जहां विधवा मांतु होटल के सामने तल्लीनता के साथ पांव हिलाती रहती है। सामने के होटल में तब रेडियो का बजना शुरू नहीं हुआ था। दांतों के डॉक्टर की शीशे की आलमारी में बत्तीसो दांत निकाले हुए एक विशाल नर-मुंड सजा हुआ था। केले के बगीचे के मालिक विलसन साहब की गाड़ी तब साहब को लिए सरसराती हुई दक्खिन तरफ जा रही थी।

एक आदमी पूर्वी मुहल्ले के समुद्र से सटे मछुआरों के मुहल्ले में गया। तब मछुआरे नावें लेकर बहुत दूर निकल चुके थे। कल उन्हें हफ्ता मिला था। इसलिए वे काफी रात तक जगे हुए थे। मगर सवेरे से ही सभी काम में मशगूल हो गए थे।

विशुख समुद्र के किनारे खड़ा धूप में जाल सूखने के लिए डाल रहा था। कल पेट की बीमारी से पीड़ित रहने के कारण आज वह काम पर नहीं गया है।

विशुख ने कहा, "किसे खोज रहे हैं, सिपाही जी?"

"मरीज़ भाग गया है—अस्पताल का मरीज़! इधर देखा है?"

आश्चर्य की बात है ! विशुन को दिलचस्प लगा । अस्पताल से कहीं मरीज भागता है ? जाकर चीनी मुहल्ले में देखो—ल्यां तोयां के चंडूखाने में । हो सकता है अब तक चिलम से दम लगाकर लुढ़क गया हो और सर पर ईंट मारकर बेहोश पड़ा हो, या केले के बगीचे के जंगल के बीच होगा । अगर वहां जाकर छुपा होगा तो अब तक क्या ज़िन्दा होगा ? हो सकता है, जंगली सुअर ही उसे चट कर गए हों ।"

विधवा बूढ़ी मांतु के कानों में भनक पहुंची ।

उस तरफ भीड़-भाड़ देखकर पूछा, "क्या हुआ है जी ?"

उसकी बात का उत्तर किसी ने न दिया । विधवा मांतु की बातों का कोई कभी उत्तर नहीं देता है ।

हाथ में संड़सी लिए बाहर निकलकर दांतों के डॉक्टर ने पूछा, "क्या हुआ ?"

विलसन साहब की गाड़ी यमदूत की तरह सरसराती हुई आ रही थी । भीड़-भाड़ देखकर एक क्षण रोक ले, सो नहीं । बाप रे बाप ! गर्दन पर चला देगा क्या ? भागो···भागो···अहंकार से ड्राइवर जमीन पर पांव ही नहीं रखता । लोगों की जमात हटकर खड़ी हो गई और गाड़ी सायं-सायं करती करीब से निकल गई ।

चलती हुई गाड़ी से विलसन साहब की बुदबुदाहट सुनाई पड़ी, "ब्लडी स्वाइन···"

लोगों की जमात हर तरफ से घूम-घामकर अस्पताल लौट आई । एक-एक कोना ढूढ़ मारा, लेकिन कहीं न मिला ।

कर्नल वाटसन गुस्से से उबलने लगे । मोटे चश्मे के अन्दर की आंखों की आकृति स्पष्ट न हुई ।

सामने खड़ी मेट्रन कांपने लगी ।

"तुम लोगों ने कहां-कहां तलाश की ?" कर्नल वाटसन ने गंभीर स्वर में पूछा । हुजूर का हुक्म मिलते ही उन लोगों ने कोई कोना बाकी न रखा । शहर छान डाला है । चीनी मुहल्ला, मछुआ टोली, उत्तरी मुहल्ला, केले के बगीचे सब···

"जहाज पर गए थे—जहाज के अन्दर और बाहर···?"

लगा, ऊपर के जीने से कोई नीचे उतर रहा है। हलकी-सी आहट मिल रही है। चार-पांच व्यक्ति टार्च जलाए नीचे उतर रहे हैं, पैरों की भारी आवाज़। लकड़ी की सीढ़ी के ऊपर पैरों की चीखती आवाज़ें सीने पर जैसे खट्-खट् आवाज़ कर रही हैं।

"सांप की पिटारी किस ओर है गोदाम बाबू?"

सांप! इस बार चौंक उठा। सांप की पिटारी! सांपों का चालान हो रहा है क्या? "सांपों की बारहों पिटारी अब इस बंदरगाह में उतारनी हैं। उधर एक सिंह है, उसे अलीपुर चिड़ियाखाने में भेजना है···" किसी एक व्यक्ति ने कहा।

"अब याद आया। यही वजह है कि हर रोज दहाड़-दहाड़कर कलेजे को कंपा जाता था। अंधेरे में टटोलकर कितनी ही जगहों की चहलकदमी की है। अगर सांप की पिटारी से हाथ छू जाता तो क्या होता! पता नहीं सांप की पिटारियां कैसी हैं! हवा जिससे आ-जा सके, इसके लिए छोटी-छोटी सूराखें अवश्य होंगी। अगर कोई साप बाहर निकल आता···या सिंह के पिंजड़े की सलाखों के अन्दर असावधानी से हाथ चला जाता तो···

"बिजली-बत्ती खराब हो जाने से कितनी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है···"

"अजी ओ, मशाल ले आओ।"

फिर लोगों की जमात क्या इसी तरफ चली आ रही है? बड़ी-बड़ी गठरियों को लांघते हुए, पैकिंग बक्सों की बगल से टार्च जलाते हुए उसी की तरफ आ रहे हैं।

कितनी अजीब बातें हैं! उसने इतने दिन सांप और सिंह के बीच ही गुज़ारे हैं! वह सर से पैर तक कांप उठा।

अचानक ऊपर की सीढ़ी के इर्द-गिर्द का हिस्सा रोशनी से भर उठा। एक बड़ी-सी जलती मशाल लेकर एक आदमी नीचे उतर रहा है। अब छिपकर रहने की कोई संभावना नजर नहीं आ रही है। अब वह आसानी से पकड़ लिया जाएगा। फिर उसे पकड़कर लोग अस्पताल के सेल में रख देंगे। उसका नाम फिर से रखा जाएगा केस नम्बर ४९। फिर वही तोंदवाली मेट्रन आकर खाने के लिए कूड़ा-कचरा देगी। एक आदमी उसकी तसवीर खींचेगा।

उसी तरह के एकरस प्रश्नों का सिलसिला चलेगा। प्रश्नों का फव्वारा··· और सचमुच अगर वह अपना नाम वता दे तो उसी कैदखाने में रखा जाएगा। तव न तो उसके पास टिकट रहेगी और न रुपया-पैसा। वह किस चीज़ से टिकट खरीदेगा ? अगर वह किसी तरह अपने पिता के पास पहुंच जाए तो फिर उसके लिए डरने की कोई वात नहीं है। तव उसके लिए कोई चिन्ता की वात न रहेगी। वह आराम से वहां पड़ा रहेगा। वह अपने पिता का इकलौता पुत्र है। युद्ध में क्यों सम्मिलित हुआ था ? —सिर्फ खामखयाली के कारण ही न ! गोविन्द अब भी ज़रूर होगा। गोविन्द ही उसे क्या कम प्यार करता था !

"कौन···कौन है यहां ?"

"किससे कह रहे हैं गोदाम वाबू ?"

"लगा, वहां किसी चीज़ की आवाज़ हुई···लगा, जैसे कोई हिला-डुला है···"

"वह तो मेरे जूतों की आवाज़ थी, जूते से टकराकर बांस गिर पड़ा।"

"होशियार रहना, अगर कहीं कोई टूट जाए तो कोई जिन्दा न वचेगा। दरअस्ल सबके सब अफ्रीका के अजगर हैं···"

सिर के ऊपर दो बड़े-बड़े पैकिंग केस हैं और दोनों वगल में दो अदद और। उसके बीच सिकुड़कर वह बैठ गया। अब वह किसी भी ओर से पकड़ा नहीं जा सकता है। लेकिन अगर इन पैकिंग केसों को भी उठा लिया तो फिर ···? तव कहीं कोई उपाय न रह जाएगा।

एकाएक उसे महसूस हुआ कि लोगों की जमात मशाल लिए उसके इर्द-गिर्द खड़ी हो गई है। उसे घेरकर वे लोग वातचीत कर रहे हैं।

"फिर वे लोग इन्हें उठाकर ले जाएं···"

"उफ, विजली की लाइन खराव हो जाने से कितनी कठिनाई होती है···"

"अरे, इन सवों को भी उठाकर ले जाओ···नीचे लोहे का गैंता लगाकर ज़ोर से उठाना पड़ेगा, वरना वहुत ही वजनदार हैं···"

पैकिंग वाक्स के नीचे लेटने के कारण छाती धड़-धड़ करने लगी है। क्या कह रहे हैं ये लोग ! सचमुच क्या वे लोग उसकी देह पर गैंता चला देंगे !

अगर सचमुच गैंते की नोक से दे मारे तो तुरन्त हरहराकर उसका···

"ऐ गोदाम बाबू, जल्दी आइए जल्दी···"

अचानक ऊपर से पुकार आई।

"फिर क्या हुआ ! चल बेटे, ऊपर चल, कोई काम खत्म नहीं करने देगा। ···गोदाम के कामों से नाकोदम हो गया हूं···"

वे लोग जिस तरह आए थे उसी तरह सदल-बल लौट गए। खैर, अब अन्दर रह पाऊंगा। भगवान ने रक्षा की। राखे राम तो मारे कौन! मगर अभी भी बहुत कुछ बाकी है। कितने दिन बाकी हैं, कहां जा रहा हूं, मालूम नहीं। सरकता हुआ बाहर आता है ! बाहर यानी पैकिंग बॉक्स के नीचे से बाहर— दमघोंटू घने अंधेरे में। हो सकता है, वे लोग फिर नीचे उतरें। अबकी किसी निरापद जगह की तलाश कर लेनी है।

दूसरे दिन जहाज कहीं आकर रुका। अब हिलना डुलना नहीं है। लोगों की आवाज मन्द हो गई है। बहुत-सा माल ऊपर उठाकर ले गया है। अब कोई अन्दर नहीं आ रहा है।

सभी आदमी क्या जहाज से नीचे उतर गए ? खैर अब चैन की सांस ले पाऊंगा। अब आराम से सो पाऊंगा। सिर्फ इसकी ही जानकारी नहीं है कि सिंह का पिंजड़ा कहां रखा हुआ है। दहाड़ वहां से, उस कोने से आ रही है। लगता है, कोई आदमी कई दिनों के अन्तराल पर मांस खिला जाता है। सांपों की पिटारियां ले गया है; खैर, जान बची। लेकिन इस बन्दगाह में अगर माल लादा जाए तो ?

बड़ी ही भूख लग गई है। सूखी मछलियां खाई नहीं जातीं। खाने की कोई चीज यहां नहीं है क्या ?

अकेले चक्कर काटते-काटते हाथ से कोई चीज छू गई। गोल फुटबॉल की तरह। इतने-इतने फुटबॉल हैं ! बड़ी-बड़ी टोकरियों में भए हुए। हाथ से अच्छी तरह टटोलने लगा। चिकने जैसे हैं। उनमें से एक को उठाया। वजन-दार है। किसी तरह की कोई गंध नहीं है। कोंहड़ा भी हो सकता है। भूख के मारे इसे भी खाया जा सकता है। काटने का कोई यंत्र नहीं है। दांत। हां, दांत तो है। दांत से काटा। लार टपकने लगी।

फुटबॉल नहीं, कोंहड़ा भी नहीं, बल्कि तरबूज !

उसी तरह के एकरस प्रश्नों का सिलसिला चलेगा। प्रश्नों का फव्वारा··· और सचमुच अगर वह अपना नाम बता दे तो उसी कैदखाने में रखा जाएगा। तब न तो उसके पास टिकट रहेगी और न रुपया-पैसा। वह किस चीज़ से टिकट खरीदेगा ? अगर वह किसी तरह अपने पिता के पास पहुंच जाए तो फिर उसके लिए डरने की कोई बात नहीं है। तब उसके लिए कोई चिन्ता की बात न रहेगी। वह आराम से वहां पड़ा रहेगा। वह अपने पिता का इकलौता पुत्र है। युद्ध में क्यों सम्मिलित हुआ था ? —सिर्फ खामखयाली के कारण ही न ! गोविन्द अब भी ज़रूर होगा। गोविन्द ही उसे क्या कम प्यार करता था !

"कौन···कौन है यहां ?"

"किससे कह रहे हैं गोदाम बाबू ?"

"लगा, वहां किसी चीज़ की आवाज़ हुई···लगा, जैसे कोई हिला-डुला है···"

"वह तो मेरे जूतों की आवाज़ थी, जूते से टकराकर बांस गिर पड़ा।"

"होशियार रहना, अगर कहीं कोई टूट जाए तो कोई ज़िन्दा न बचेगा। दरअस्ल सबके सब अफ्रीका के अजगर हैं···"

सिर के ऊपर दो बड़े-बड़े पैकिंग केस हैं और दोनों बगल में दो अदद और। उसके बीच सिकुड़कर वह बैठ गया। अब वह किसी भी ओर से पकड़ा नहीं जा सकता है। लेकिन अगर इन पैकिंग केसों को भी उठा लिया तो फिर ···? तब कहीं कोई उपाय न रह जाएगा।

एकाएक उसे महसूस हुआ कि लोगों की जमात मशाल लिए उसके इर्द-गिर्द खड़ी हो गई है। उसे घेरकर वे लोग बातचीत कर रहे हैं।

"फिर वे लोग इन्हें उठाकर ले जाएं···"

"उफ, बिजली की लाइन खराब हो जाने से कितनी कठिनाई होती है···"

"अरे, इन सबों को भी उठाकर ले जाओ···नीचे लोहे का गैंता लगाकर ज़ोर से उठाना पड़ेगा, वरना बहुत ही वजनदार हैं···"

पैकिंग बाक्स के नीचे लेटने के कारण छाती धड़-धड़ करने लगी है। क्या कह रहे हैं ये लोग ! सचमुच क्या वे लोग उसकी देह पर गैंता चला देंगे !

अगर सचमुच गैंते की नोक से दे मारे तो तुरन्त हरहराकर उसका···

"ऐ गोदाम बाबू, जल्दी आइए जल्दी…"

अचानक ऊपर से पुकार आई।

"फिर क्या हुआ ! चल बेटे, ऊपर चल, कोई काम खत्म नहीं करने देगा। …गोदाम के कामों से नाकोदम हो गया हूं…"

ये लोग जिस तरह आए थे उसी तरह सदल-बल लौट गए। खैर, अब अन्दर रह पाऊंगा। भगवान ने रक्षा की। राखे राम तो मारे कौन! मगर अभी भी बहुत कुछ बाकी है। कितने दिन बाकी हैं, कहां जा रहा हूं, मालूम नहीं। सरकता हुआ बाहर आता हूं ! बाहर यानी पैकिंग बॉक्स के नीचे से बाहर—दमघोंटू घने अंधेरे में। हो सकता है, वे लोग फिर नीचे उतरें। अबकी किसी निरापद जगह की तलाश कर लेनी है।

दूसरे दिन जहाज कहीं आकर रुका। अब हिलना डुलना नहीं है। लोगों की आवाज मन्द हो गई है। बहुत-सा माल ऊपर उठाकर ले गया है। अब कोई अन्दर नहीं आ रहा है।

सभी आदमी क्या जहाज से नीचे उतर गए ? खैर अब चैन की सांस ले पाऊंगा। अब आराम से सो पाऊंगा। सिर्फ इसकी ही जानकारी नहीं है कि सिंह का पिंजड़ा कहां रखा हुआ है। दहाड़ वहां से, उस कोने से आ रही है। लगता है, कोई आदमी कई दिनों के अन्तराल पर मांस खिला जाता है। सांपों की पिटारियां ले गया है; खैर, जान बची। लेकिन इस बन्दरगाह में अगर माल लादा जाए तो ?

बड़ी ही भूख लग गई है। सूखी मछलियां खाई नहीं जातीं। खाने की कोई चीज यहां नहीं है क्या ?

अकेले चक्कर काटते-काटते हाथ से कोई चीज छू गई। गोल फुटबॉल की तरह। इतने-इतने फुटबॉल हैं ! बड़ी-बड़ी टोकरियों में भए हुए। हाथ से अच्छी तरह टटोलने लगा। चिकने जैसे हैं। उनमें से एक को उठाया। वजनदार है। किसी तरह की कोई गंध नहीं है। कोहड़ा भी हो सकता है। भूख के मारे इसे भी खाया जा सकता है। काटने का कोई यंत्र नहीं है। दांत। हां, दांत तो है। दांत से काटा। लार टपकने लगी।

फुटबॉल नहीं, कोहड़ा भी नहीं, बल्कि तरबूज !

उसी तरह के एकरस प्रश्नों का सिलसिला चलेगा। प्रश्नों का फव्वारा··· और सचमुच अगर वह अपना नाम बता दे तो उसी कैदखाने में रखा जाएगा। तब न तो उसके पास टिकट रहेगी और न रुपया-पैसा। वह किस चीज़ से टिकट खरीदेगा ? अगर वह किसी तरह अपने पिता के पास पहुंच जाए तो फिर उसके लिए डरने की कोई बात नहीं है। तब उसके लिए कोई चिन्ता की बात न रहेगी। वह आराम से वहां पड़ा रहेगा। वह अपने पिता का इकलौता पुत्र है। युद्ध में क्यों सम्मिलित हुआ था ? —सिर्फ खामखयाली के कारण ही न ! गोविन्द अब भी ज़रूर होगा। गोविन्द ही उसे क्या कम प्यार करता था !

"कौन···कौन है यहां ?"

"किससे कह रहे हैं गोदाम बाबू ?"

"लगा, वहां किसी चीज़ की आवाज़ हुई···लगा, जैसे कोई हिला-डुला है···"

"वह तो मेरे जूतों की आवाज़ थी, जूते से टकराकर बांस गिर पड़ा।"

"होशियार रहना, अगर कहीं कोई टूट जाए तो कोई ज़िन्दा न बचेगा। दरअस्ल सबके सब अफ्रीका के अजगर हैं···"

सिर के ऊपर दो बड़े-बड़े पैकिंग केस हैं और दोनों बगल में दो अदद और। उसके बीच सिकुड़कर वह बैठ गया। अब वह किसी भी ओर से पकड़ा नहीं जा सकता है। लेकिन अगर इन पैकिंग केसों को भी उठा लिया तो फिर ···? तब कहीं कोई उपाय न रह जाएगा।

एकाएक उसे महसूस हुआ कि लोगों की जमात मशाल लिए उसके इर्द-गिर्द खड़ी हो गई है। उसे घेरकर वे लोग बातचीत कर रहे हैं।

"फिर वे लोग इन्हें उठाकर ले जाएं···"

"उफ, बिजली की लाइन खराब हो जाने से कितनी कठिनाई होती है···"

"अरे, इन सबों को भी उठाकर ले जाओ···नीचे लोहे का गैंता लगाकर ज़ोर से उठाना पड़ेगा, वरना बहुत ही वज़नदार हैं···"

पैकिंग बाक्स के नीचे लेटने के कारण छाती धड़-धड़ करने लगी है। क्या कह रहे हैं ये लोग ! सचमुच क्या वे लोग उसकी देह पर गैंता चला देंगे !

अगर सचमुच गैंते की नोक से दे मारे तो तुरन्त हरहराकर उसका···

"ऐ गोदाम बाबू, जल्दी आइए जल्दी…"

अचानक ऊपर से पुकार आई।

"फिर क्या हुआ! चल बेटे, ऊपर चल, कोई काम खतम नहीं करने देगा। …गोदाम के कामों से नाकोदम हो गया हूं…"

वे लोग जिस तरह आए थे उसी तरह सदल-बल लौट गए। खैर, अब अन्दर रह पाऊंगा। भगवान ने रक्षा की। राखे राम तो मारे कौन! मगर अभी भी बहुत कुछ बाकी है। कितने दिन बाकी हैं, कहां जा रहा हूं, मालूम नहीं। सरकता हुआ बाहर आता है! बाहर यानी पैकिंग बॉक्स के नीचे से बाहर—दमघोंटू घने अंधेरे में। हो सकता है, वे लोग फिर नीचे उतरें। अबकी किसी निरापद जगह की तलाश कर लेनी है।

दूसरे दिन जहाज कहीं आकर रुका। अब हिलना डुलना नहीं है। लोगों की आवाज मन्द हो गई है। बहुत-सा माल ऊपर उठाकर ले गया है। अब कोई अन्दर नहीं आ रहा है।

सभी आदमी क्या जहाज से नीचे उतर गए? खैर अब चैन की सांस ले पाऊंगा। अब आराम से सो पाऊंगा। सिर्फ इसकी ही जानकारी नहीं है कि सिंह का पिंजड़ा कहां रखा हुआ है। दहाड़ वहां से, उस कोने से आ रही है। लगता है, कोई आदमी कई दिनों के अन्तराल पर मांस खिला जाता है। सांपों की पिटारियां ले गया है; खैर, जान बची। लेकिन इस बन्दगाह में अगर माल लादा जाए तो?

बड़ी ही भूख लग गई है। सूखी मछलियां खाई नहीं जातीं। खाने की कोई चीज यहां नहीं है क्या?

अकेले चक्कर काटते-काटते हाथ से कोई चीज छू गई। गोल फुटबॉल की तरह। इतने-इतने फुटबॉल हैं! बड़ी-बड़ी टोकरियों में भरे हुए। हाथ से अच्छी तरह टटोलने लगा। चिकने जैसे हैं। उनमें से एक को उठाया। वजनदार है। किसी तरह की कोई गंध नहीं है। कोहड़ा भी हो सकता है। भूख के मारे इसे भी खाया जा सकता है। काटने का कोई यंत्र नहीं है। दांत। हां, दांत तो है। दांत से काटा। लार टपकने लगी।

फुटबॉल नहीं, कोहड़ा भी नहीं, बल्कि तरबूज!

पके हुए तरबूज ! सारी बातें याद आने लगीं। उसके बचपन के दिनों में गरमी के मौसम में गोविन्द बाजार से बहुतेरे तरबूज ले आता था। कितने दिनों बाद, कितने बरसों बाद पहले का यह खाद्य आज प्राप्त हुआ है !

पूरा का पूरा एक तरबूज खा डाला।

पेट भरते ही आंखें नींद से बोझिल हो गईं। एक पैंकिंग बॉक्स की बगल में अंधेरे में उसने अपने आपको निढाल छोड़ दिया। आरम्भ में एक डकार आई। क्या ही आराम महसूस हो रहा है ! दुनिया में कहीं कोई इस तरह आराम से नहीं है। आरामकुरसी पर उठंगकर सोने जैसा यह सोना है।

उसके बाद फिर हिलना-डुलना शुरू हो गया है। लगता है, जहाज खुल चुका है।

डिग-डांग···डिग-डांग···

घड़ियाल के घंटे जैसा ऊपर कुछ बजने लगा। डेक के ऊपर लोहे की मोटी सांकले घूम रही हैं किरं···किरं···

बगल के इंजन-घर में पट-पट कोयला डाला जा रहा है। कोयला तोड़ने की ठक्-ठक् आवाज हो रही है···और पैंकिंग बॉक्स की बगल में गोदाम के अंधकूप में लेटकर बेटिकट की निरुद्देश्य यात्रा हो रही है। उसके बाद कलकत्ते की वही छत होगी। छत की तरंगें···उन तरंगों को फलांगने के बाद शंभुनाथ पंडित लेन···गोविन्द नौकर···गरमी की छुट्टी में आइसक्रीम वाले की वही चिल्लाहट···बरफ, आइसक्रीम बरफ···उसके बाद टन-टन आवाज करते हुए बर्तनवाले का जाना।

"ऐ, तुम कौन हो जी ? कौन हो ?"

अब हड़बड़ाकर उठ बैठता है। भय से सर्वांग सिहर रहा है।

"ऐ, तुम कौन हो जी ? कौन हो ? उठो, उठो···"

जरूर ही कोई लंबा-तगड़ा आदमी है, वरना गले की आवाज इतनी भारी भरकम क्यों होती ! चेहरा दिख नहीं पड़ता है, पांवों के बूटों से ही चेहरे का अनुमान किया जा सकता है।

रातुल का पूरा शरीर थर-थर कांपने लगा है। अबकी वह पकड़ा गया। अब आत्मरक्षा का कोई रास्ता नहीं है। पैंकिंग केस के नीचे से निकलना ही पड़ेगा। बाहर आकर हाथ जोड़कर माफी मांगनी होगी। तमाम घटनाओं

को स्पष्टतया कहना होगा । उसके बाद जो होना है, हो ।

अचानक कोई उसकी बगल से बोल पड़ा, "मैं भोम्बल हूं, सिपाही जी··· भोम्बल···"

"भोम्बल ! तू यहां क्या कर रहा है ? कब ड्यूटी है ?" सिपाही ने पूछा ।

"ड्यूटी तो अभी है, मगर सिर में बेहद दर्द हो रहा है, इसलिए ज़रा करवट बदल रहा था । कुछ बोलना मत । लो, यह रहे चार पैसे, पान खाना ।" भोम्बल उठकर खड़ा हुआ और दांत निपोरकर सिर खुजलाने लगा ।

रातुल बाल-बाल बच गया । लगता है, अब तक उसे किसी ने देखा नहीं है । फिर से जैसे उसकी देह में प्राण लौट आए हैं । किन्तु इस तरह कितने दिनों तक चलेगा !

सिपाही बूट से खट्-खट् आवाज़ करता हुआ दूसरी तरफ चला गया ।

सिपाही को एक भद्दी-सी गाली देकर भोम्बल फिर से अपनी जगह लेटने की तैयारी करने लगा ।

रातुल ने उस आदमी की ओर गौर से देखा । खाकी पोशाक पहने है, माथे पर पग्गड़, बगैर दाढ़ी-मूछों का चेहरा । उम्र करीब-करीब रातुल के बराबर है । कुछ देर बाद भोम्बल फिर दिख नहीं पड़ा । पैकिंग केस के अन्दर घुस गया ।

फिर से सोने की कोशिश करनी चाहिए । इसके अन्दर इस तरह कहीं सोया जा सकता है ? कभी तकलीफ सहने की आदत न थी । सारी जिन्दगी आराम से गुज़ारी है । इस लड़ाई में आते ही तकलीफ की शुरुआत हुई—बूट पहनकर परेड करना और प्रातःकाल चार बजे नींद को परे हटाकर जगना । और वह खाना ! किस चीज़ का मांस रहता था, मालूम नहीं । मांस अच्छी तरह सीझा हुआ भी नहीं होता था । फिर पाव रोटी दांत से काटना । सवेरे कैंटीन के सामने पंक्ति में खड़ा होना । हाथ में एक मग रहता था । उसी मग में थोड़ी-सी चाय दी जाती थी और दाहिने हाथ में पाव रोटी की चार टुकड़ियां और एक अंडा । रसोईघर के सामने कीचड़ फैला रहता था—इतना

कि पांव डूब जाएं। उसी कीचड़ पर पलथी मारकर धान मिले चावल का भात खाना पड़ता था। बायें हाथ में पानी का मग रहता था। अगर किसी दिन जूते में पालिश नहीं की जाती थी तो सज़ा मिलती थी। सज़ा यानी मज़दूर का काम करना पड़ता था। कुदाल से मिट्टी कोड़ना या फिर गेट पर पहरा देना। चुपचाप एटेन्शन की मुद्रा में पहरा देना, और कोई अफसर अगर पास से गुज़रे तो सलामी ठोंकना। सलामी देने में अगर ज़रा भी चूक हो जाए तो फिर से सज़ा दी जाती थी।

यह तो साधारण समय की बात हुई। लेकिन फ्रांट पर! सिंगापुर के खजूरों के झुंड में लेटकर युद्ध करना पड़ता था। किसी भी क्षण ऊपर से बम गिरने की संभावना रहती थी। जंगल में सांप काट सकता था। खाना ठीक समय पहुंच जाता था तो जान में जान आती थी, अन्यथा इसके अभाव में नाहीं न कर सकता था। मार्च करते हुए जाता था तो अनवरत चलना ही पड़ता था, दर्द से पांव दुखने लगें तो भी रुक नहीं सकता था। दस-बारह मीलों तक लगातार चलना पड़ता था। चलते-चलते यदि कोई बेहोश होकर गिर पड़े तो कोई 'आह' तक निकालने वाला नहीं। हो सकता है कि हज़ारों फीट नीचे दौड़-कर उतरना पड़े। अगर पांव मुड़क जाए तो मुड़के। इसके कारण तुम्हारे लिए कोई बैठा नहीं रहेगा।

उसके बाद जब जापानियों के हाथ में पड़कर बंदी बनाया गया, उसकी घटना और भी ज्यादा तकलीफदेह है। दिनभर माटी कोड़ो, पौधे लगाओ। अगर उस पौधे से फसल मिली तो तुम्हें खाना मिलेगा। पीठ की तरफ चाबुक तैनात रहता था। दिन-रात उसी चाबुक का भय बना रहता था। वे लोग खा-पी लें फिर यदि कुछ बच जाएगा तो तुम्हें खाना मिलेगा।

उफ, कितना कष्ट उठाना पड़ा है! इस तरह वह लड़ाई में क्यों आया था? लड़ाई में आने का उस पर शौक क्यों सवार हुआ था? उसे किस बात का दुख था? वह बाप का इकलौता बेटा है। शंभुनाथ मित्र लेन में उन लोगों का उतना बड़ा मकान है। गोविन्द जैसा नौकर है। चाहे दिन भर घर में बैठे-बैठे पुस्तकें ही क्यों न पढ़े—उतनी बड़ी लाइब्रेरी जो है। या छत पर बैडमिण्टन खेले। और अगर कुछ अच्छा न लगे तो मोटर लेकर बाहर निकल जाओ— या तो विक्टोरिया मेमोरियल के मैदान की ओर या प्रिंसेस

घाट की ओर। इसके अतिरिक्त कलकत्ते शहर में काम का कोई अभाव नहीं। सिनेमा देखने जाओ, फुटबाल के मैदान की ओर···हजारों किस्म की और भी दिलचस्पियां इधर-उधर, चारों तरफ बिखरी पड़ी हैं।

"कौन ? कौन है जो ? यहां किसका पांव हिल रहा है ?"

लगा, भोम्बल के गले की आवाज है। मगर उसे क्योंकर देख लिया ?

"तुम कौन हो ? कौन हो ? जवाब क्यों नहीं दे रहे हो ?"

रातुल ने गरदन घुमाकर चारों तरफ आंखें दौड़ाई। कोई कहीं से उसे पुकार रहा है। फिर क्या अन्ततः वह पकड़ा ही गया ?

"इधर, इधर पीछे की ओर देखो—पैरों की तरफ !"

पैरों की ओर दृष्टि फेंकते ही रातुल को एक जोड़ा आंखें दिखाई पड़ीं जो पैकिंग केस की सूराख से उसकी ओर ताक रही थीं। वह भोम्बल है।

"बाहर निकलो, बाहर···"

रातुल सोचने-विचारने लगा कि बाहर निकले या नहीं।

"बाहर निकलो वरना पकड़वा दूगा।" भोम्बल ने दूसरी बार कहा।

रातुल को बहुत तकलीफ उठाकर, सिकुड़-सिमट कर आखिरकार बाहर निकलना पड़ा।

भोम्बल बाहर निकला ! निकलते ही चट से रातुल का हाथ पकड़ लिया।

"टिकट है, टिकट !" भोम्बल ने आखें तरेरकर पूछा।

रातुल ने कहा, "टिकट नहीं है, मगर तुम मेरा हाथ छोड़ो···"

"ऊपर चलो, एक तो टिकट है नहीं और उसपर हेकड़ी दिखा रहे हो ?"

सचमुच खींचते हुए ऊपर ले जाएगा क्या ? पकड़वा देगा ?

"किस जात के हो ? बंगाली हो ?"

"हां।"

"अरे अब तक बताया क्यों नहीं ? कितने ही बंगालियों को कालापानी के पार पहुंचा दिया है। किस जिले में घर है ?"

"कलकत्ता।"

इस बीच भोम्बल उसका हाथ छोड़ चुका था।

"समझ गया, कि तुम कलकत्ते के युवक हो, गुस्से में मां से झगड़कर भाग आए हो। अब कहने की जरूरत नहीं। लो मूंगफली खाओ।" भोम्बल

खांकी कमीज़ की जेब से मुट्ठी भर मूंगफली निकालकर रातुल के हाथ में
मा दीं और खुद भी खाने लगा।

भोम्बल बोला, "चलो, यहां कोई देख लेगा, हम लोग वहां चलकर
बैठें।"

४

पैकिंग केस को लांघकर भोम्बल रातुल को और भी कोने की तरफ ले गया। एकान्त जगह में जाकर बोला, "यहां बैठो, किसी के बाप की मजाल नहीं कि हमें यहां देख ले..."

"अब बताओ, कहां गए थे ? जेब में रुपया-पैसा है !" इतना कहकर भोम्बल ने और कई एक मूंगफलियां बढ़ा दीं।

"पैसा-कौड़ी है या ठनठन गोपाल ?" भोम्बल ने फिर पूछा।

रातुल को उस बात का जवाब नहीं देना पड़ा। उसकी आंखों को देखते ही भोम्बल की समझ में बात आ गई।

"अब कहने की कोई ज़रूरत नहीं, समझ गया। मां के गहने चुराकर भाग आए थे, अब पैसे खत्म हो गए हैं, इसीलिए मां के लिए मन उदास है। सब समझ गया। दो साल से जहाज़ में काम कर रहा हूं, कितने ही बंगाली लड़कों को काला पानी के पार पहुंचा चुका हूं।"

उसके बाद मालूम नहीं क्या सोचकर कहा, "मगर अब वे दिन नहीं रहे भाई, अब बड़ा ही कठिन नियम लागू हो गया है।"

रातुल को भी थोड़ी घबराहट महसूस हुई।

"फिर भी कोई परवाह नहीं," रातुल पर आंख टिकाते हुए भोम्बल ने कहा, "जब तक मैं हूं, किसी भी बंगाली युवक के लिए कोई चिन्ता की बात नहीं है..."

"खैर, वह बात रहे। दाढ़ी बना लो, मैं अपनी एक खाकी पोशाक तुम्हें दूंगा। उसको ही पहनना। कोई कुछ न कहेगा। इन कई दिनों के दरमियान तुम्हारे पेट में तो चूहे कूद रहे होंगे ! क्या खा रहे हो ?"

"वो तरबूज।" रातुल ने उंगली से इशारा किया।

"वाह, बड़े ही बहादुर हो! घबराना मत, मैं तुम्हें ही अपना शागिर्द बनाऊंगा। बन सकोगे?" भोम्बल ने पूछा।

रातुल ने पूछा, "किस चीज का शागिर्द?"

"यह देख..."

कहकर भोम्बल ने जेब से एक पैसा निकाला। हथेली पर रखकर पूछा, "मेरे हाथ में क्या देख रहे हो?"

रातुल बोला, "एक पैसा।"

भोम्बल ने मुट्ठी बन्द की। उसके बाद मुट्ठी पर एक फूंक मारकर मुट्ठी फिर से खोल दी।

"अब क्या देख रहे हो?"

रातुल ने आश्चर्य में आकर देखा—ढेर सारे पैसे थे। इतने कि हाथ में समा नहीं रहे थे। भोम्बल ने फिर से अपनी मुट्ठी बन्द की। रातुल ने देखा—अबकी हथेली एकदम खाली थी—कानी कौड़ी तक नहीं थी।

रातुल पर आंख टिकाकर भोम्बल बोला, "यह तो मामूली बात है, अभी तुरन्त तुम्हारी जेब से मुर्गी का एक अंडा निकाल सकता हूं। देखोगे..."

डिंग-डांग, डिंग-डांग। ऊपर से घण्टे की आवाज आई।

भोम्बल उछल पड़ा।

बोला, "छः बज गया। चलूं, अब ड्यूटी में हेर-फेर होगा।"

"किस बात की ड्यूटी?" रातुल ने पूछा।

"दुत पगले, मैं नौकरी जो करता हूं, ड्यूटी में हेर-फेर न होगा। अब तक ड्यूटी हुई, अब छुट्टी। जाऊंगा और चट से लौट आऊंगा। मसाला पीसना, झाड़ू देना—सभी काम मुझको करना पड़ता है। काम न करूं तो तनखा दे भला! पचास रुपये माहवार क्या मुंह देखकर देता है?"

उसके बाद जेब से और मूंगफलियां निकालकर रातुल के हाथ में थमा दीं और कहा, "अब यह नौकरी अच्छी नहीं लगती है भाई। आदमी का गला काटकर फिर से जोड़ना सीख जाऊंगा तो इस नौकरी को छोड़ दूंगा।"

"गला काटकर जोड़ना!" रातुल ने आश्चर्य में डूबकर पूछा।

"यह सब बाद में बताऊंगा। हां, रात में क्या खाओगे?"

रातुल जैसे अवाक् हो गया हो।

भोम्वल बोला, "मांस वगैरह खाते हो न ! या पूरे वैष्णव हो ? चॉप खाओगे या कटलेट ? मछली नहीं मिलेगी। गरम भात और मांस करी हीं मिलेगा। तुम कलकत्ते के बाशिन्दे हो, संदेश या रसगुल्ला नहीं मिलेगा, पहले से ही कहे देता हूं।"

जवाब का इन्तजार वगैर किए भोम्वल वहां से भागा। उसके जूतों की खट्-खट् आवाज़ दूर से कानों में आती रही।

रातुल निःसंग बैठा-बैठा सोचने लगा।

भोम्वल उसके बाद नहीं आया। आहिस्ता-आहिस्ता अंधेरा उतरने लगा। तलघर की बत्ती अब तक मरम्मत नहीं हुई है। आज भी शायद अंधेरे में ही वक्त गुज़ारना पड़े। बत्ती की मरम्मत होते ही उसे कठिनाई का सामना करना पड़ेगा।

बहुत दिनों के बाद आराम से खाना खा रहा है। गरम-गरम भात और मुर्गी का शोरबा। अहा-हा, अमृत !. पैकिंग केस का ही बिस्तरा क्यों न हो, चाहे सिर के नीचे तकिया न रहे, लेकिन गहरी नींद आई। ऐसा बहुत दिनों से हो नहीं पाया था। सौभाग्यवश भोम्वल था, इसीलिए राहत की सांस लेने का मौका मिला ! ऐसी मुसीबत में कोई कहीं सहायता मिलती है !

सवेरा होते-न होते भोम्वल आकर उपस्थित हो गया। बोला, "मैं ख... और तुम बैठे-बैठे खाओ, यह नहीं चलेगा।...मेरे पास कोई ज़मींदारी न... है कि बंगाली पर नजर पड़ते ही नाचना शुरू कर दूं। भोम्वलदास के सा... यह सब नहीं चलेगा। पैसा फेंको, तमाशा देखो—मैं भैया इसी बात को म... हूं..."

इसके बाद खाकी पोशाक निकालते हुए कहा, "देखूं, पहनो तो... अब से तुम भोम्वलदास बनोगे। समझे !"

रातुल भय से सिकुड़ गया। बोला, "अगर कोई पहचान ले ?"

"पहचान लेगा तो पकड़े जाओगे। पुलिस के हाथों सौंप देगा, हव... डाल दिए जाओगे।"

फिर ज़ोर-जबरदस्ती कोट, पैंट और पगड़ी पहनाते हुए बोल...

भी पहचान नहीं पाएगा, तुम भी काले-कलूटे हो और मैं भी। फर्क महज इतना ही है कि तुम्हारे बाल घघुंराले हैं। सो पगड़ी से ढंक दिया है। तुम्हारे और मेरे गले की आवाज एक जैसी है।

साज-सज्जा करने के बाद भोम्बलदास ने कहा, "लाओ, चेहरा मेरी तरफ करो तो।"

रातुल ने अपना मुंह घुमाया।

भोम्बल बोला, "सब ठीक-ठाक है। दाढ़ी-मूंछ बनाकर तुम एकबारगी भोम्बलदास हो गए हो।"

उसके बाद रातुल की पीठ पर धक्का लगाकर कहा, "जाओ···"

रातुल को एक प्रकार के भय ने जकड़ लिया।

"डरने की कौन-सी बात है जी," भोम्बल ने कहा, "तुम मेरे शागिर्द बन चुके हो। सीधे सीढ़ियां तय करने के बाद नलघर के पास रसोईघर मिलेगा। वहां देखोगे कि चटगांव का गोरा-चिट्टा ब्राह्मण रसोई बना रहा होगा। जाकर उससे कहना: महराज जी, क्या-क्या मसाला पीसना है? वह तुम्हें आधा सेर धनिया, एक सेर लाल मिर्च और आधा सेर हल्दी देगा। पीस सकोगे न? बहुत महीन पीसना।"

"जिन्दगी में कभी मसाला पीसा नहीं है।" रातुल ने कहा।

"फूल जैसे मुलायम हो न! मसाला पीसने से इनका हाथ घिस जायेगा! मसाला अगर पीस नहीं सकते हो तो फिर मां की ही गोद में क्यों न पड़े रहे?" भोम्बल ने मुंह बिदकाकर कहा।

फिर भी रातुल को हिलते-डुलते न देखकर भोम्बल बोला, "मसाला जब खत्म हो जायेगा तो सारंग साहब के कमरे में जाकर उनका पैर दाबना होगा। देखना, ज़ोर से मत दाबना। फिर सारंग साहब जब ड्यूटी पर चले जाएं, उनके कमरे से लौटकर नल से पानी भरना। बाल्टी से महराज के ड्राम में पानी भर देना। उसके बाद जब महराज कहें कि अब पानी की ज़रूरत नहीं है, सीधे गोदाम बाबू के पास चले जाना। गोदाम बाबू का कमरा तीन-मंजिले पर है। गोदाम बाबू के हुक्म से इधर-उधर जाना पड़ेगा। उसके बाद गोदाम बाबू जब नहाने चले जाएं, तमाम केबिनों में झाड़ू लगा देना—बाहर झाड़ू देने की ज़रूरत नहीं, सिर्फ अन्दर ही। बाहर झाड़ू लगाने के लिए

धर्मदास है। जाओ, जल्दी जाओ। हो सकता है कि अब तक गुस्से में आकर ब्राह्मण देवता ने चिल्लाना शुरू कर दिया हो।"

रातुल तब भी निःशब्द खड़ा था। अब यह कौन-सी मुसीबत आई। कहीं तीनमंजिला है, कहां केबिन ! वह किसी को पहचानता नहीं, किसी का नाम उसे मालूम नहीं, रास्ता जाना-पहचाना नहीं। भोम्बल ने उसे कैसी मुसीबत में डाल दिया। यह तो यही हुआ, कि दो मुट्ठी अनाज खिलाकर शेर के मुंह में डाल देना। यह कैसा प्रेम है !

"तब हां, एक बात।"

भोम्बल ने उसे चेतावनी दी।

"वह कल जो सिपाही था, नम्बरी शैतान है। उसे देखते ही दो-चार सलाम करना और यह लो…"

दो इकन्नियां थमाकर भोम्बल बोला, "अगर ज्यादा डांट-डपट करे तो उसके हाथ में एक आना पैसा थमा देना। पट्ठा चुप्पी साध लेगा। बड़ा टेढ़ा आदमी है…"

कल के सिपाही को रातुल थोड़े ही पहचानता है। उसका चेहरा रातुल ने देखा नहीं था। इसके अलावा कितने ही सिपाही चारों तरफ चक्कर काट रहे हैं। कब किसको पैसा देकर कहीं वह कोई अन्याय न कर बैठे।

भोम्बल पैकिंग केस पर लेट गया है, उसकी पलकें मुंदी हैं। पलकों को फिर से खोलकर कहा, "अयं, अब तक तुम गए नहीं ? मेरी नौकरी लेने का इरादा है ? जाओ, जल्दी जाओ।"

रातुल एक-एक कदम सीढ़ी पर यों रखने लगा जैसे वह बलिवेदी पर अपना माथा चढ़ाने जा रहा हो। बहुत दिनों से सूर्य की रोशनी उसने देखी नहीं थी। डेक पर जाकर चारों ओर आंख दौड़ाते ही उसका सिर चकराने लगा।

चारों तरफ धम-धम आवाज हो रही है। हवा में तपिश है। समुद्र से हवा सनसनाती हुई आ रही है। समुद्र का रंग कितना गहरा हरा है ! देखने से ही भय का बोध होता है। यह कैसा दृश्य है। डरावना, बीभत्स रूप। चारों तरफ कहीं मिट्टी के टीले का नामोनिशान तक नहीं। बीच-बीच में मात्र कुछ सफेद और काले परिंदे दूर से उड़कर आते हैं, जहाज के ऊपर

बैठते हैं और फिर उड़कर चले जाते हैं। एकाएक समुद्र में कूदकर मछलियां पकड़ते हैं, फिर उड़कर जहाज पर बैठ जाते हैं।

किन्तु तब उस ओर देखने का वक्त उसके पास न था। सामने और पीछे से लोगों का आना-जाना लगा हुआ था। कोई उसे छद्मवेश में पकड़ ले तो जेल जाने की नौबत आ जायेगी। हवालात में सड़ना पड़ेगा।

शायद रसोईघर वह रहा। प्याज़ और मांस की गंध आ रही है।

वर्दी में लैस एक गोरा उधर ही जा रहा था। सामने आते ही राहुल ने उसे सलामी दी। साहब सिर हिलाकर चला गया।

महराज लेकिन आदमी के लिहाज से भला निकला। ज्यादा बातूनी नहीं है। बस सिर्फ एक बार ही कहा, "तुम्हें इतनी देर हो गई भोम्बल?"

"नींद जरा देर से टूटी, महराज जी!" इतना कहने के बाद फिर कोई दूसरा सवाल नहीं किया गया।

महराज अपने हाथों से रसोई बनाने और रात-दिन बीड़ी पीने में ही मशगूल रहता है।

देह से पसीने की बूंदें गिर रही हैं। लाल मिर्च, धनिया, हल्दी, प्याज वगैरह निकालकर दिया। प्रोफेसर नित्यानन्द सेन ने जीवन में कभी सोचा भी न होगा कि उनके जैसे बड़े आदमी के इकलौते पुत्र को किसी दिन जहाज के रसोईघर में बैठकर मसाला पीसना होगा। फिर भी क्योंकि घटना-चक्र के कारण एक दिन उसने बंदूक के कुंदे को पकड़कर गोली छोड़ने का अभ्यास किया था और भाग्यवश जापानियों की कृपा के कारण मिट्टी कोड़ने से लेकर तमाम किस्म के कामों की शिक्षा प्राप्त की थी, इसीलिए आज श्रम के भार से उसने अपनी चेतना नहीं खोई।

"आज यह कैसा मसाला पीसा, भोम्बल! खूब महीन नहीं हुआ है." उंगलियों से छू-छूकर महराज ने नाराजगी जाहिर की, "लगता है, कल तुमने-फिर नशाखोरी की थी।"

क्या उत्तर दे, सोच पाने में अपने आपको असमर्थ पाकर उसने एक उपाय का सहारा लिया।

"नहीं महराज जी," उसने कहा, "कल गोदाम बाबू का पैर दबाते-दबाते मेरी नाड़ी दुखने लगी है।"

महराज गुस्से में आकर वोला, "यह वात है !"

एक क्षण चुप रहने के वाद फिर कहा, "चलो, कप्तान साहव के पास चलो। कह सकोगे जो मुझसे कहा ! कहोगे न ! देखना, गोदाम वावू की नौकरी आज मैं ले वैठूंगा। लो, चलो, कप्तान साहव के पास चलो।"

"नहीं महराज जी, मेरी नौकरी चली जायेगी।" रातुल ने अनुनय-भरे स्वर में कहा।

"अच्छा तो फिर जाओ, मगर तुम देख लेना, भोम्वल, गोदाम वावू की नौकरी मैं लेकर ही छोड़ूंगा। तभी मेरा चटगांव के ब्राह्मण का लड़का होना सार्थक होगा। दाल क्योंकि कड़वी हो गई थी इसलिए पिछले महीने गोदाम वावू की रपट की वजह से मुझे आठ आना जुर्माना भरना पड़ा था। लेकिन मैं भी मज़ा चखाऊंगा। किसी दिन रंगे हाथ पकड़वा दूंगा। भंडारघर के नौकर से पैर दववाने का तुम्हें मज़ा चखाता हूं···" क्रोध के अतिरेक के कारण लंवी छोलनी को देगची के अन्दर डालकर खट्-खटाक्, खट्-खटाक् आवाज़ करने लगा।

"और कहता क्या है, मालूम है !"

झटपट वीसेक लालमिर्च चने की दाल में डालकर महराज ने कहा, "और कहता क्या है कि मैं ज़मींदार वंश का हूं। कि एक सौ आदमी के लिए इस वक्त और एक सौ आदमी के लिए उस वक्त मेरे घर में पत्तल विछता है, कि मेरे गुहाल में अभी भी तीस गायें हैं।"

दाल नीचे उतारकर थोड़ी-सी चख ली। उसके वाद एक मुट्ठी नमक डालकर छोलनी चलाने लगा।

"तुम्हीं सोचकर देखो, भोम्वल ! अगर तुम इतने वड़े ज़मींदार हो, तुम्हारे घर में इतनी-इतनी गायें हैं, दूध, घी, मक्खन, मांस, मछली इतना ज्यादा खाने की तुम्हें आदत है तो मामूली मिर्च का कड़ुवापन तुम्हारे पेट को वरदाश्त न हुआ ? सवेरे से तीस वार तुम्हें पाखाना हुआ···"

"मैं कोई नया रसोइया नहीं हूं," एक क्षण रुककर महराज फिर कहने लगा, "डंकन साहव जव इस जहाज़ का कप्तान था, तव एक दिन मुझे क्या सूझा, कहूं ? मुर्गी की करी अच्छी तरह से पकाई। जाड़े का दिन था, वड़े दिनों की छुट्टी, नये साल का पहला दिन। झमाझम वारिश हो रही थी।

शाम सात बजे रसोई पकाना खत्म हो गया। आठ बजे साहब खाना खाने बैठा। खाकर इतनी तारीफ की, इतनी कि···फलहारी से पूछना। बैजू को भी मालूम है। ऐसी तारीफ की···मेरी ओर पचास रुपये बढ़ा दिए। आदमी थे तो बस वे लोग ही थे। न तो अब वैसा वक्त रहा और न उस तरह के आदमी।"

"तुम्हें भूख लगी है क्या?" अपने मुंह में मांस का एक टुकड़ा डालकर महराज ने पूछा।

"हां।"

"लो, ड्राम की ओट में बैठकर खा लो। अभी-अभी खानसामा आ चला।"

एक छोटी कटोरी में थोड़ा मांस, दो अदद आलू के टुकड़े और जहर की तरह कड़ुआ शोरबा डालकर उसकी ओर बढ़ा दिया।

"कहो, कैसा लगा? कड़ुआ है?"

कड़ुवेपन के कारण रातुल को हिचकियां आने लगीं। फिर भी उसने कहा, "अहा-हा, तुम्हारी रसोई बड़ी मजेदार है, महराज जी!"

"थोड़ा और दूं?"

महराज अच्छा आदमी है। खुशामद करने से गद्गद हो जाता है। खाने-पीने के बाद बाल्टी लेकर ड्राम में पानी भरना पड़ा।

काम समाप्त होने पर गोदाम बाबू के कमरे में जाने की बात है। मालूम नहीं, कमरा किधर है। रसोईघर से निकलने के बाद रातुल क्या करेगा, यही सोचने लगा। इस तरफ से टहलते-टहलते उस तरफ चलूं। आसपास के आदमी काम की वजह से इधर-उधर आ-जा रहे हैं।

बगल के एक आदमी ने एकाएक रुककर पूछा, "क्यों जी, पहचाना ही नहीं? नशे में हो क्या?"

"बुरा मत मानो भैया, बुरा मत मानो···" और रातुल उसकी बगल से होकर निकल गया। थोड़ी देर और हो जाती तो वह पकड़ा जाता। लेकिन गोदाम बाबू का कमरा जब तक नहीं मिल जाता, चैन नहीं मिलेगा। जाते-जाते एक जगह उसने लकड़ी की दीवार पर लिखा देखा: 'स्टोरकीपर।'

अन्दर घुसे कि इसके पहले ही किसी ने पुकारा, "यह रहे लाटसाहब भोम्बलदास! इतनी देरी क्यों की?"

प्रणाम-पांती कर रातुल आगे बढ़ा और बोला, "महराज के कामों के
ते थोड़ी देर हो गई।"

गोदाम बाबू झुंझला उठे। चश्मे का फ्रेम नाक पर और ज़्यादा खिसक
आया। बोले, "अगर भलाई चाहते हो तो महराज की बात पर ज़्यादा मत
ाचा करो। पिछले महीने आठ आना जुर्माना किया था। अबकी तुम्हें भी
जुर्माना करूंगा..."

"अयं, बैठ क्यों गए? पैर दाबना नहीं है? सब भुला बैठे!" गोदाम बाबू
फिर से झुंझला उठे।

बोले, "आज तुम बहुत अच्छी तरह दाब रहे हो! नींद आने लगी।"

फिर अपने आप बुड़बुड़ाने लगे, "यह कोई तुम्हारे महराज की तरह
खड़े-खड़े काम करने जैसा काम नहीं है। मेरी तरह अगर दिन भर चक्कर
काटना पड़ता तो पट्ठे की समझ में बात आती। देख रहे हो न, एक बार
ऊपर जाओ, एक बार नीचे। इत्मीनान से पल भर भी खड़ा होने न देगा।
गोदाम का काम बड़ी झंझट का काम है।"

कुछेक क्षणों के बाद गोदाम बाबू की नाक घरं-घरं बजने लगी। लेकिन
वैसी स्थिति कुछ ही क्षणों तक रही। उसी तरह लेटे-लेटे बोलने लगे, "ठहरो
भोम्बल, दो-चार दिन धीरज धरो। तुम्हारे महराज की नौकरी मैं ले
बैठूंगा। फिर वही बात! मुझसे चालाकी? कहता क्या है कि मैं रिश्व
लेता हूं। महराज ने तुमसे यह कहा है नहीं, बताओ तो सही।"

"कहा है हुज़ूर!" मजा देखने के खयाल से रातुल ने आहिस्ता से कह

"देख रहे हो न, चटगांव के ब्राह्मण का वह बच्चा कितना शैतान है!
ही दया में आकर उसकी नौकरी लगा दी थी। दुनिया में आदमी की
नहीं करनी चाहिए।"

"आपने नौकरी लगा दी थी? वह तो कहता है कि डंकन स
ज़माने से है।" रातुल ने उसे उकसाने के खयाल से कहा।

"फिर सुनो, खाना नसीब नहीं हो रहा था, बदन की हाड़-हाड़
निकल आई थी, फटेहाल की तरह बर्मा की सड़कों पर भीख मांग
था। एक दिन मैं बंदरगाह के सामने घूम-फिर रहा था। लंगड़ात
बूढ़ा मेरे पास आया और भीख मांगने लगा। जानते हो, हम लोग ठ

के जमींदार। बाबू जी के नाम के कारण अभी भी बाघ और बकरी एक घाट में पानी पीते हैं। गोदाम बाबू की नौकरी तो शौक से कर रहा हूं। लेकिन हम लोगों की तबियत का कोई मुकाबला नहीं कर सकता। यही वजह है कि गरीब आदमी पर नजर पड़ते ही मैंने उसके हाथ में एक रुपया थमा दिया। देते-न देते वह शैतान मेरे पैरों पर गिरकर लोटने लगा। बोला : कोई नौकरी दिला दीजिए बाबू जी। मैंने कहा : कौन-सा काम कर सकते हो? उसने कहा : हर तरह का काम कर सकता हूं, हुजूर।...सो दया से पिघलकर इसी बन्दे ने उस जमाने में दस रुपये तनखा पर पिउन की नौकरी लगा दी। अब...अब देह में कितनी चिकनाई आ गई है! बदन में खुशबूदार साबुन लगाता है, टेढ़ी मांग काढ़ता है। साफ कमीज पहनता है। देख-सुनकर हंसते-हंसते मेरा..."

एक क्षण चुप रहने के बाद फिर मीठी आवाज में बोले, "आज बड़ा ही आराम महसूस हो रहा है, भोम्बल। इसी तरह हर रोज दाबना। पैर दाबता था तो बंकू। लड़ाई के पहले की बात है—सन् ३५ की। पैर दाबना दाबना न होकर सहलाना हो जैसे। अब जमाना कितना बुरा आ गया! न तो वह पैर का दाबना ही रह गया और न वैसे आदमी ही। खैर, तुम बैठो, हां, यहां बैठे रहो, और बैठे-बैठे रेडियो सुनो।"

बगल के हॉल में रेडियो है। गोदाम बाबू ने जोर से चिल्लाकर कहा, "धर्मदास!"

"जी!"

"रेडियो एक बार खोल दे और बंगला गीत बजने दे।" गोदाम बाबू पीठ के बल लेट गए।

बगल के कमरे में रेडियो बजने लगा। बंगला गीत हो रहा था। बड़ा ही अच्छा लगा। गीत संभवतः समाप्ति पर था। एकाएक कानों में आवाज आई—

'यह आकाशवाणी कलकत्ता है। अगले कार्यक्रम प्रसारित करने के पहले एक घोषणा की जा रही है : कल रात भारतीय समय साढ़े आठ बजे डॉक्टर नित्यानन्द सेन एम० ए०, पी-एच० डी०...

रातुल ध्यान लगाकर सुनने लगा।

'डॉक्टर नित्यानन्द सेन, एम० ए, पी-एच० डी० परलोक विद्या से अपने विशिष्ट अन्वेषण के संदर्भ में भाषण देंगे। उनके एकमात्र पुत्र तुल सेन ने विश्व युद्ध में वीर की तरह हंसते-हंसते प्राण न्योछावर किया पने उसी प्राणों से प्रिय पुत्र से वह संपर्क स्थापित करके बातचीत करते उसी के संदर्भ में चर्चा करेंगे...'

५

रातुल का सिर जैसे चकराने लगा। कितने दिन, कितने महीने और कितने बरसों के बाद वह अपने पिता के गले की आवाज़ सुन पाएगा! लेकिन ऐसी गलती कैसे होती है? यह कैसे संभव होता है? रातुल तो मरा है नहीं। वह तो ज़िन्दा है। न केवल ज़िन्दा है, बल्कि वह अपने बाप के पास लौटकर जा रहा है। पहले से ही खबर भेजने की कोई ज़रूरत नहीं। एकाएक वह पिता के सामने उपस्थित होकर उन्हें चौंका देगा। कितना मज़ा आएगा! जिसके संदर्भ में इतना शोर-शराबा मचा हुआ है, वह असल में मरा नहीं है। क्या ही मज़ा आएगा! हां, क्या ही मज़ा! खुशी से रातुल की इच्छा हुई कि वह तालियां पीटे। इतनी तकलीफ जैसे तकलीफ के तौर पर उसे महसूस ही न हुई। अभी यदि वह बाबूजी को एक पत्र डाल दे तो हज़ारों रुपये उसके पास चले आएं।

गोदाम बाबू उठकर बैठ गए। बोले, "तुम्हारी दरख्वास्त मैंने रेकमेन्ड कर दी है। समझे!"

किस चीज की दरख्वास्त? रातुल को घबराहट का अहसास हुआ।

"साहब ने पूछा था कि यह नौजवान कैसा काम करता है। मैंने कह वेरीगुड। साहब ने फटाफट सेंक्शन कर दिया। अब मुझे क्या खिलाते हो तुम्हारा दो रुपया माहवार बढ़ गया। मुझे कुछ खिलाओ..."

तब रातुल के दिमाग में कुछ भी नहीं समा पा रहा था। कहां कि माहवार दो रुपया बढ़ा और कौन खिलाए! एकाएक उसे शंभुनाथ ले वह मकान याद आया। बाबूजी के पढ़ने का कमरा, जहां सामने रातुल

फोटो है बाबूजी यहां कॉलेज से लौटने के बाद बैठकर लिखा करते थे। याद आया, शाम आठ बजे का खाना खाना—एक साथ, एक ही मेज पर बैठकर। जिस दिन रातुल को लौटने में देर हो जाती उस दिन वह रातुल के लिए बहुत देर तक बैठकर प्रतीक्षा किया करते थे। जब रातुल लौटकर आता, दोनों जने एक साथ भोजन करते थे। बीच-बीच में पुकारते थे, "गोविन्द, ओ गोविन्द···"

गोविन्द आकर सामने खड़ा होता था। बाबूजी कहते, "अभी तुम क्या काम कर रहे हो?"

"काम तो है, मगर क्या करना है, कहिए!"

"ज्यादा दूर नहीं, बस ट्राम के रास्ते के मोड़ पर जाकर देख तो आओ कि मुन्ना आ रहा है या नहीं।" फिर जब गोविन्द चला जाता, वह एकबारगी खिड़की के पास चले आते थे और झांक-झांककर देखते रहते थे। जाने किसके पैरों की आहट हो रही है। पैरों की आहट ठीक मुन्ना की-सी है। फिर मुन्ना क्या आ गया! शांत और गंभीर उनके जैसे व्यक्ति ने हृदय के तल प्रदेश के सबसे कोमल स्थान को मुन्ना के लिए सुरक्षित रख छोड़ा था।

किन्तु एकांत गोपन में रक्षित उस बहुमूल्य वस्तु को डाकू लूटकर ले गए। रातुल ने उस डरावने दिन की कल्पना करने की कोशिश की, जिस दिन सैनिकों से भरा जहाज भोंपू बजाकर खिदिरपुर डॉक से रवाना हुआ था। उस जहाज को इस बात का पता भी नहीं चला कि वह अपने निष्ठुर हाथ से किसी का साबूत कलेजा छीनकर लिए जा रहा है।

लेकिन कल? छत्तीस घंटे और बाकी हैं। ये छत्तीस घंटे कैसे व्यतीत होंगे? कैसे वह इस समय-सागर को पार करेगा?

एकाएक गोदाम बाबू की पुकार आई, "अरे, क्या बात है! तुम रो रहे हो, मोम्बल?"

इस तरह घर अपनी ओर खींच सकता है, मन इस तरह चंचल हो सकता है—इसके पूर्व रातुल को कभी इसका बोध न हुआ था। कहां वह शंभुनाथ पंडित लेन! कहां कलकत्ते के किसी एक कोने का एक दोमंजिला भवन! दिशाहारा नाविक को आज वे ही अलोक-स्तंभ की तरह लोभनीय प्रतीत हुए।

सारा दिन परिश्रम में ही व्यतीत हुआ।

महराज का मसाला पीसना पड़ा, कमरों में झाड़ू लगाना पड़ा, गोदाम ाबू का पैर दावना पड़ा और फिर दो व्यक्तियों के कलह के बीच संपर्क-ूत्र बनकर पराई निन्दा सुननी पड़ी। सबसे आखिर में महराज के पास ाट भर कड़ुआ मांस खाने को मिला।

परिश्रम और भोजन के बाद दोनों पैर जैसे अवश हो गए थे। बीच में भोम्बल के लिए छिपकर खाना ले जाना पड़ा था। उसके बाद जहाज के तल-घर में अंधेरे के साये में पैकिंग केस पर खुद को निढाल छोड़कर वह गहरी नींद की बांहों में वेहोश हो गया।

कल रात साढ़े आठ बजे! रात साढ़े आठ बजे···

सागर की सीमा का अतिक्रमण कर···देश-काल की दीवारों को लांघ-कर निद्रा की तरंगें लुढ़कती हुई दूर, बहुत दूर निकल गईं। इस अशेष यात्रा का एक दिन अन्त होगा। प्रतीक्षा का अन्त होगा। तब रातुल के आकाश में पुनः सूर्योदय होगा। तब रास्ते के सफर का अन्त होगा।

सवेरे भोम्बल आया। उसके चेहरे पर गंभीरता की छाप थी। ज्यादा बातचीत नहीं कर रहा था। इतना ही कहा, "अजी बंगाली होकर भी तुमने यह सर्वनाश किया?"

"मैंने सर्वनाश किया!" रातुल के आश्चर्य की कोई सीमा न थी।

भोम्बल ने कोई जवाब न दिया। गंभीरता ओढ़े चुपचाप बैठा रहा। सामने बढ़कर रातुल ने घबराहट-भरे स्वर में पूछा "मैंने तुम्हारी कौन-सी हानि की?"

भोम्बल के मुंह से बहुत देर तक आवाज नहीं निकली। इतना बातूनी आदमी भी जैसे मौन होकर मुरझा गया है। जैसे सचमुच उसकी बहुत बड़ी हानि हुई है।

"मैंने क्या किया, बताओ न भाई!" रातुल के अनुनय में उद्विग्नता भरी थी।

"चूंकि मैं तुम्हें खाना देता था, बंगाली होने के नाते तुम्हारा आदर करता था, इसीलिए मेरा ऐसा तुमने सर्वनाश किया! इसमें तुम्हारी ही कौन-सी गलती है, यह तो हम बंगालियों में ही दोष है। अगर तुम सगे भाई भी होते तो मैं तुम्हें कत्ल कर डालता। मगर तुम मेरे होते ही कौन हो जो तुम पर

बिगड़ूं, तुम्हें मारूं-पीटूं ? कलकत्ता पहुंचने के बाद तुममें मुझमें कोई रिश्ता नहीं रह जायेगा। हम एक-दूसरे के लिए अजनबी हो जाएंगे। फिर मारी झंझट खत्म…"

हतप्रभ-सा खड़ा रातुल भोम्बल की बातें सुनता रहा।

"मां-बाप तो दूर की बात, बचपन से अपना कहकर मैंने किसी को जाना नहीं। गुंडों के दल में पला। लाटू गुंडा कहा करता था कि वह मुझे आउटराम घाट पर पड़ा देखकर उठाकर ले आया था। पता नहीं, मेरे मां-बाप जिन्दा हैं या नहीं। और जिन्दा होंगे भी तो मुझे क्या पहचानेंगे ? या हो सकता है कि इसीलिए उस तरह फेंक दिया था जिससे पहचानने की जरूरत न पड़े। कभी-कभी बहुत…"

इतना कहकर भोम्बल जैसे किसी चिन्ता में डूब गया। अपनी बात के क्रम को उसने पूरा नहीं किया। रातुल सामने के पैकिंग केस पर खामोश बैठा रहा।

"मैंने तुम्हारी कौन-सी हानि की, बताओ न !" रातुल ने फिर सवाल किया।

"कहता हूं…"

और भोम्बल ने कहना शुरू किया, "सुनो, हमारे गोदाम बाबू घांटुली के जमींदार वंश के पुत्र हैं या नहीं, मालूम नहीं। यह भी मालूम नहीं कि महराज बर्मा की सड़कों पर भीख मांगते चलता था या नहीं। फिर भी इतना जरूर मालूम है कि मैं जैसे बाढ़ के पानी में बहकर आया था…इसीलिए अब किसी को बहते हुए देखता हूं तो प्राण कलपने लगता है। मैं गुंडों के बीच पला-बढ़ा। लाटू गुंडा ने अपने पुत्र की तरह मेरा लालन-पालन किया था। सोचा था, बड़ा होकर मैं उसी की तरह नामी गुंडा होऊंगा…लेकिन उसकी उम्मीद अधूरी ही रह गई। हाथ की सफाई की कला बेशक अच्छी तरह सीख गया था, आदत बनाए रखता तो लाटू को मात कर देता, इसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं, मगर मेरा खून भरसक अलग ही जाति का है। ऐसी बात नहीं होती तो छोटे-छोटे बच्चों के गले से हार छीनने में मेरा कलेजा दहल क्यों उठता ! यही वजह है कि एक दिन गुंडों की जमात से—लाटू गुंडे की सीमा से बाहर भाग गया।"

रातुल अवाक् होकर सुन रहा था। "उसके बाद ?" उसने पूछा।
एक पल चुप रहने के बाद भोम्बल ने फिर कहना शुरू किया, "तुम
...गों के मां-बाप हैं। इसलिए यह बात तुम लोगों की समझ में नहीं आयेगी
... वह कितना वेधक होता है—दुनिया में अकेला होना कितना वेधक होता।
...! उफ, इतने बड़े आदमी के लिए दुनिया में कहीं कोई पीछे का आकर्षण
...नहीं है! दुनिया से हार मानकर जो निकल पड़ता है, सिर्फ वही इस बात को
...जान सकता है। उसके बाद कितनी ही रातें इसलिए आउटराम घाट में
चक्कर काटने और उसके दोनों किनारों पर आंख टिकाए रखने में गुजारी
हैं कि मां को पहचान लूं। मोटरगाड़ी के अन्दर, घूंघटों की फांक के अन्दर
झांककर अपनी आंखों से मां की खोज की है। फुटपाथ के भिखमंगों के चेहरों
से अपने चेहरे का मिलान किया है। अपनी मां की तलाश में कितने ही अड्डों
पर रातें गुजारी हैं। आखिरकार एक दिन मां मिल गई..."

"मिल गई ?" रातुल ने हैरत में आकर पूछा।

"हां, मिल गई, स्ट्रैंड रोड के मुहाने पर मेरी मां मिल गई। सड़क पर
बैठी-बैठी दहाड़ मारकर रो रही थी। चारों तरफ जमघट लगा था और
उसके सामने मोटर से दबा एक लहूलुहान मरा बालक...मैं समझ गया,
ही मेरी मां है।"

रातुल ने पूछा, "कैसे समझे कि वह तुम्हारी मां है ?"

भोम्बल ने उस बात का सीधा जवाब न दिया। पल भर के बाद बोल...
"सिर्फ दस महीने पेट में ही रखने से कोई मां हो जाती है ? तुम बेवकू...
हो...खैर, उस मां को सड़क से उठाकर घर ले आया..."

बात करते-करते भोम्बल बीच में चुप हो गया और फिर कहना ...
किया, "मगर मैं तुम्हें यह सब कहने गया ही क्यों ? तुम मेरे होते ही ...
हो ? तुमसे मेरा झगड़ा हो चुका है। थोड़ी-सी और देर हो जाती तो ...
मेरी नौकरी ले बैठे थे।"

रातुल बोला, "मैं कैसे तुम्हारी नौकरी ले रहा था ?"

भोम्बल उठकर खड़ा हो गया और बोला, "अभी वह सब बातें क...
मेरे पास वक्त नहीं है। अब अपने खाने-पीने का खुद ही इन्तज़ाम ...
राम नाम जपो। अब इस बंदे से किसी का कोई रिश्ता नहीं। ज...

अपनी मां ही जब छोड़कर चली गई तो फिर तुम जैसे पराये का क्या विश्वास ? न तो तुम्हारा नाम मालूम है और न ही धाम । तुम मेरा सर्वनाश करोगे, इसमें अचरज की कौन-सी बात है ?"

इतना कहकर भोम्वल ऊपर की ओर चला गया । सब कुछ सुनने के बाद रातुल के मन में भोम्वल के प्रति स्नेह उमड़ आया । किसके हृदय में कौन-सी व्यथा छिपी रहती है, इसका पता नहीं चलता । आजन्म घर से परित्यक्त इस युवक में दुनिया बसाने की इच्छा भी क्या नहीं है ? हमेशा के लिए वह क्या अपने आपको बाजीगरी में भुलाए रखेगा ? रातुल के मन में चिन्ता भी जगी । इस निरापद स्थान को अन्ततः उसे छोड़ना पड़ेगा ? कलकत्ते से वह और कितनी दूरी पर है ?

दोपहर जब बीत गई, भोम्वल आया ।

बोला, "फिर बोरिया-बिस्तर संभालो ।"

"कहां उतरना है ?"

अबकी जहाज जहां रुकेगा । आधा घंटे के बाद ही अदन आ जाएगा । बिस्तर के नाम पर तुम्हारे पास एक चादर तक नहीं है । दिन भर बिना खाये-पिये रहो । एक धोती और एक अंगोछा लेकर जहाज से उतर जाओ । उसके बाद परदेस में रास्ते-रास्ते भीख मांगकर मरो । मुझे क्या ? मैं क्यों चिन्ता करूं ? तुम मरो या जियो, मैं तुम्हें देखने नहीं आ रहा हूं । मैं तो आराम में हूं । मेरे लिए जब किसी को फिक्र नहीं तो फिर मैं ही क्यों किसी के लिए फिक्र करूं ? तुम तो मेरी नौकरी लेने पर अमादा हो गए थे ।"

"तुम्हारी नौकरी मैं कब छुड़ा रहा था ?"

"तुम्हें मैंने बार-बार कहा था कि सुबह महाराज का मसाला पीसने के बाद सारंग साहब का पैर दाब देना । कहा नहीं था तुमसे ? उधर वह गुस्से में उबलते रहे कि दिन भर कोई उनका पैर दाबने नहीं गया ।"

"मैं तो गोदाम बाबू का पैर दाब आया हूं ।"

"क्या बात है ! तुमने मुझे कृतार्थ कर दिया ! गोदाम का काम करने के लिए धर्मदास उनका नोकर है । तुम उनका पैर दाबने क्यों गए ? सारंग साहब ने मेरी हाजिरी काट दी । एक दिन की तनखा नहीं मिलेगी । तुम दोगे ? खैरियत यही है कि नौकरी नहीं गई ।"

इतना कहकर भोम्बल जा रहा था, किन्तु वह रुक गया और बोला, "अब उतर जाओ, अदन आ रहा है। पराये की भलाई करने का बढ़िया फल मिल गया। बहुत बड़ी सीख मिली है। लेकिन अब नहीं। घर का शत्रु विभीषण होता है। अब मन से दूर हो जाओ।"

और भोम्बल चला गया।

पैकिंग केस पर अकेले बैठकर रातुल सोचने लगा। कलकत्ता कितनी दूर है ? बीच सफर में यह कैसी विपत्ति आई ! फिर कब किस जहाज़ पर कोई मित्र मिलेगा, कब भोम्बलदास जैसा कोई युवक उसे भाई की तरह टिकट के बिना इतनी दूर ले जायेगा ? जहाज़ से माल उतारने के लिए गोदाम बाबू आए। कुलियों का दल आया और वे बड़े-बड़े पैकिंग केसों को उठाकर ऊपर ले जाने लगे। शाम का वक्त हो रहा था। यहां काफी अंधेरा फैला था। हो सकता है, अभी छह बजा हो। उसके बाद दुनिया की तमाम घड़ियों में साढ़े आठ बजेगा। रेडियो से बाबूजी की आवाज़ बाहर आकर तैरने लगेगी। कितने सालों के बाद बाबूजी उसके नाम का उच्चारण करेंगे। लेकिन रातुल सुन नहीं पायेगा। तब वह किस बंदरगाह में किस हालत में रहेगा, कौन कह सकता है !

चारों तरफ टन-टन आवाज हो रही है। लगता है, जहाज बन्दरगाह में लगने जा रहा है। उसके बाद जेटी से लगाया जायेगा।

भोम्बल घबराया हुआ आया।

उसके हाथ में खलासी की पोशाक थी। बोला, "इसे पहन लो।"

भोम्बल ने एक बार रातुल के चेहरे पर दृष्टि स्थिर की।

भोम्बल बोला, "मेरी ओर क्या ताक रहे हो ? इस चेहरे पर माया-ममता नहीं है—हां, कुछ भी नहीं। मेरे प्रति जब किसी में ममता नहीं है तो फिर मैं ही···आज सारंग साहब ने जब मुझे अपमानित किया तो उस वक्त तुम मेरी रक्षा तो करने नहीं आए भाईजान ! कोई भी बचाने नहीं आया। खैरियत यही हुई कि मैंने सारंग साहब के पैर पकड़ लिए, वरना मेरी नौकरी तो उसी क्षण जा चुकी थी। दुनिया में अब किसी पर यकीन न रहा। और अपनी मां ही जब···"

रातुल ने कमीज़ लेकर अपने बदन पर डाली।

सोम्यन बोला, "जेटी से लगने के पहले ही जहाज के बोट से तुम्हें उतरना है। डरने की कोई बात नहीं, दूसरे-दूसरे खलासी भी रहेंगे, उनके साथ तुम्हें भी निकाल दूंगा।" इतना कहकर सोम्यन चला गया। आज वह बड़ा ही व्यस्त दिख रहा था।

उसके बाद उसी अंधेरे में फुर्ती से निकलकर सोम्यन ने आकर उसे पुकारा। अपने पास बुलाकर जहाज के डेक पर ले गया। बोला, "इस मोटी रस्सी की सीढ़ी पकड़कर उतर जाओ। ठीक उसी तरह, जैसे और-और लोग उतर रहे हैं। जाओ, उतरो!"

रासुल ने देखा कि सभी उतर रहे हैं। वह भी रस्सी पकड़कर झूल गया। उसने दुबारा सोम्यन के चेहरे पर अपनी दृष्टि स्थिर की। सोम्यन उसी की ओर ताक रहा था। सकपकाकर उसने अपना मुंह घुमा लिया। उसके बाद चार-पांच मंजिल की ऊंचाई से रस्सी पकड़कर उतरते-उतरते रासुल को एकाएक महसूस हुआ कि वह एक अजीब ही व्यक्ति है। सोम्यन ने ही इतने स्नेह के साथ उसे आश्रय दिया था और आज उसी ने गर्दन पर हाथ रखकर धता दिया। नीचे गहरा काला पानी झलमला रहा था। छोटी-सी एक नाव थी। सभी उसी पर उतर रहे थे। नाव जहाज से सटकर खड़ी थी।

हवा तेज रफ्तार से बह रही थी। पानी छपछप आवाज करता हुआ जहाज से टकरा रहा था। सावधानी से नीचे उतरकर रासुल खड़ा हुआ।

निकट ही शोरगुल से भरा शहर था। पूरे किनारे के दायरे में जगमग रोशनी जल रही थी और इस ओर अंधेरा जमा था। उस तरफ भी ऐसी ही एक नाव लगी थी। चिल्ला-चिल्लाकर उन लोगों से ये लोग किस सांकेतिक भाषा में बातचीत कर रहे थे, मालूम नहीं।

आहिस्ता-आहिस्ता नाव जेटी के एक किनारे आकर लगी।

६

विशाल बंदरगाह। उसके बाद फाटक पार करते ही सड़क। सीधी और चौड़ी सड़क। चीनी, मारवाड़ी, मलय और कितनी ही जाति के लोग।

चायघर। खाने-पीने की दुकानें। रिक्शा, मोटर, बस और लॉरी। माल की लदाई हो रही है। फेरीवाले चिल्ला रहे हैं। रातुल को भूख की तीव्रता का बोध हो रहा है। जेब में एक भी पैसा नहीं है। यह कैसी मुसीबत है! रातुल आगे बढ़ा।

एक दुकान के सामने रेडियो बज रहा था। अंग्रेज़ी गीत। अभी कै बजा है? पता नहीं, आसपास कहीं घड़ी है या नहीं। झुककर एक दीवार पर आंखें दौड़ाने लगा। सात बज गया। अब ज्यादा देर नहीं है। साढ़े आठ बजे किसी से कहकर कलकत्ता स्टेशन लगवाना चाहिए। बहुत दिनों के बाद बाबूजी का शांत स्वर वह फिर सुन पायेगा। बाबूजी की प्रशान्त मूर्ति फिर आंखों के सामने तैरने लगेगी।

रातुल दुकान के सामने आकर खड़ा हुआ। उस क्षण-विशेष में रातुल जैसे देश-दुनिया भूलकर बहुत दिनों के बाद फिर से शंभुनाथ लेन के मकान में आकर उपस्थित हो गया। मकान के अन्दर घुसने के पहले बायीं तरफ गोविन्द का कमरा है। गोविन्द रात में वहीं सोता है। उसके कमरे में रस्सी पर उसके कपड़े-लत्ते झूल रहे हैं। बाहर बरामदे में बत्ती टिमटिमा रही है। शाम होते-न होते गोविन्द ऊंघने लगता है। गहरी नींद में बीच-बीच में वह चौंक उठता है। बाहर किसी के पैरों की आहट होते ही वह चिल्ला उठता है, "कौन? कौन जा रहा है?"

वह ठिगने कद का बूढ़ा आदमी है। कब कहां से आकर शंभुनाथ लेन के इस मकान में नौकरी स्वीकार ली थी, किसी को याद नहीं। उसके बाद एक-एक कर उतना बड़ा मकान खाली हो गया। मां चल बसी, दूर के नाते के जो लोग थे वे भी एक-एक कर विदा हो गए। मकान में रह गए बाबूजी, रातुल और गोविन्द।

दोपहर में जब सन्नाटा रेंगता रहता और मुहल्ला खाली हो जाता, सड़क के मोड़ से आइसक्रीम वाले की थकी आवाज आती। वह जब दबे पांवों सदर दरवाजे से होकर आइसक्रीम खरीदने जाता, गोविन्द की पकड़ में आ जाता।

"कौन जा रहा है?"

रातुल चुपचाप निकल रहा था मगर गोविन्द उठ बैठा।

रातुल झटपट निकलना चाहता था किंतु गोविन्द उठकर बैठ गया।

"कहां जा रहा था, मुन्ना?"

"आइसक्रीम खाने।"

"जा, अभी जाकर सो रह, नहीं तो बाबूजी से कह दूंगा। बेकार की चीजें खाने से बाबू ने तुझे मना किया है न!···आइसक्रीमवाला मरता भी नहीं।···इतनी जगह रहने के बावजूद तुम लोग इस मकान के सामने क्यों आते हो?"

उसके बाद फेरीवाले से बहुत झगड़ा-टंटा मच जाता। मुहल्ले के लोगों का जमघट लग जाता था।

फिर वह रातुल को समझा-बुझाकर कमरे में सुला देता और खुद अपने कमरे में जाकर सो जाता था।

वहां उस अदन बन्दरगाह में अनेकानेक अजीब आदमियों की भीड़ में खड़ा होकर रेडियो का गीत सुनते-सुनते रातुल स्वयं में खो गया। सड़क, आदमी, पहाड़, पानी, मैदान सब कुछ पारकर कब रातुल अपने आवास के उस एकांत स्थान में पहुंच गया, उसे याद नहीं रहा।

एकाएक कंधे पर किसी के हाथों का स्पर्श महसूसकर रातुल पीछे की तरफ मुड़ा। मुड़ते ही वह आश्चर्य में डूबने-उतराने लगा। "तुम? यहां?" उसने पूछा।

भोम्बल चुप्पी ओढ़े रहा।

रातुल ने फिर दुबारा प्रश्न किया, "तुम? फिर लौट क्यों आए?"

"इसलिए कि मन उदास हो गया।"

रातुल के कंधे पर हाथ रखकर भोम्बल ने कहा, "तुमको भगा देने के बाद मेरा मन हाहाकार कर उठा: कोई कुत्ता या बिल्ली नहीं था। आदमी को यों भगा दिया? लगा, मैं मां के द्वारा प्रताड़ित बालक हूं, इसलिए मेरी बात अलग है। तमाम दुनिया मेरे लिए पराई है, मगर तुम तो वैसे नहीं हो···"

पलभर चुप रहने के बाद वह कहने लगा, "बहरहाल तुमसे जो कहा है, उसे भूल जाओ। हमारा जहाज रात साढ़े नौ बजे रवाना हो रहा है। तुम उसके पहले ही चले आना। मैं तुम्हारे लिए जहाज के फाटक पर खड़ा

।"

मोम्वल की वातों ने रातुल को आश्चर्य में डाल दिया। यह मेघ और का अगल-वगल रहना जैसी वात है। वह विलकुल आश्रयहीन नहीं है। कलकत्ता जाने का एक मौका मिल गया।

"फिर मैं अभी चलूं। तुम्हारे लिए रात का खाना रखे रहूंगा। तव तक म-फिर कर इस मुल्क को तुम देख लो।"

और मोम्वल मुड़ा और वहां से चल दिया।

उस तरफ से कोई गाड़ी आ रही थी। हॉर्न की आवाज सुनकर रातुल फुटपाथ पर आकर खड़ा हो गया। निकट ही एक चायघर था। वहां कुछ कुरसियां रखी थीं। किसी ने वगल की कुरसी से पुकारा, "कौन ? हरिदास !"

वगल की तरफ मुड़ते ही रातुल ने देखा, सलवार पहने हुए, एक व्यक्ति जिसके सिर पर पगड़ी है, उसकी ओर ताक रहा है।

"मेरा नाम हरिदास नहीं है।" रातुल ने कहा।

"नहीं है ? आश्चर्य ! विल्कुल हरिदास की तरह देखने-सुनने में, हूवहू..."

"हरिदास कौन है ?"

"हरिदास को नहीं पहचानते ? तुम्हारा घर कहां है कलकत्ता ?...यहां किसलिए आए हो ?"

रातुल ने वताया कि जहाज आया हुआ है और वह कुछ क्षणों के लिए घूमने-फिरने निकला है।

"आप किस जात के हैं ?" रातुल ने पूछा, "आप इतनी अच्छी वंगला वोलते हैं, हालांकि पोशाक देखने से लगता है..."

एकाएक मन में कुछ सोचकर चाय के प्याले को हाथ में लिए मानस ने कहा, "चाय पियोगे, भाई...अजी, और एक प्याली चाय देना।"

चाय आई। भलामानस अपने आप वुड़वुड़ाने लगा, "हरिदास, भारी परेशानी में डाल दिया...हम दोनों ने मिल-जुल कर चाय की की। सोचा था, हम दोनों मित्र एक साथ रहेंगे। वह दुकान की फरेगा और मैं वाहर की। मगर विना कहे-सुने... उफ कितनी मु

डाल गया···" और भलेमानस का चेहरा निराशा से बुझ गया।

रातुल ने चाय के प्याले से घूंट लेकर कहा, "वह कहां गए, कुछ खबर मिली है ?"

"और कहां जायेगा, दिमाग में कीड़े जन्म लेने से जो होता है वही हुआ। बचपन से ही साधु बनने को शौक सवार थी। दसआदमी के षड्यंत्र से भगवान को भी भूत होना पड़ा था। यही लो न, मैं पंजाबी हो गया हूं और उसने गेरुआ बाना धारण किया···बात एक ही है, वरना इतने-इतने मुल्कों के रहने के बावजूद, अपना घर-द्वार रहने के बावजूद इस पाण्डववर्जित देश में आकर कहीं चाय की दुकान करता···एक तरह से बंगला भूला ही बैठा हूं··· पंजाबी औरत से शादी करके यहीं दुनिया बसा ली है···एक बात में अगर कहा जाए तो सब कुछ पा चुका हूं। और हरिदास ठीक इसी समय···बताओ मैं क्या करूं···"

पल भर के बाद भला आदमी बोला, "बंगाल से अब कोई संपर्क न रहा, यही वजह है कि आहिस्ता-आहिस्ता बंगला भाषा भी भूलता जा रहा हूं···बीच-बीच में बंगला भाषा या बंगला गीत सुनने की जब इच्छा जगती है तो रेडियो से वह कलकत्ता स्टेशन लगता हूं··· आम के बगीचे और बंसवारी की बगल से होकर बूढ़ा शिव के मंदिर में जाने के रास्ते की याद आने लगती है···"

रातुल बोला, "ज़रा कलकत्ता स्टेशन लगाइए न। बहुत दिनों से मुझे बंगला गीत सुनने का मौका नहीं मिला है।"

"ठीक है···अरे, रेडियो का स्विच घुमाकर कलकत्ता लगा दे तो···"

गोदाम बाबू के कमरे में रेडियो से बंगला गीत सुना था और आज फिर सुनने का मौका मिल रहा है। ऐसा मौका इस तरह हासिल होगा, इसकी जानकारी न थी।

भले आदमी ने एकाएक कहा, "तुम तब तक गीत सुनो भाई जी, मैं ज़रा उस तरफ देखभाल करूं···सामने न रहने पर पट्ठे चाप और कटलेट दनादन मुंह में डाल देंगे···"

तब कलकत्ता स्टेशन से गीत प्रसारित हो रहा था। सात समुद्र तेरह नदियों के पार से गीतों के परिन्दे झुंड बांधकर आकाश में उड़ रहे थे।

म आसमान में तारे डैने पसारकर उड़ रहे थे। लगता है, अदन के बंदर-
में आकर वे नीड़ का निर्माण करेंगे। रातुल की आंखों के सामने से काला
दा एक निमिष में हट गया और कोलाहल से भरी चाय की दुकान के
मने के फुटपाथ की कुरसी पर बैठे हुए उसे लगा कि वह उन परिन्दों के
ीतों के पंखों का सहारा लिए कलकत्ता शहर के बीच पहुंच गया है।
वहां जो लोग रहते हैं, वे उसके आत्मीय हैं—परम आत्मीय ! और कितने
क्षण बाकी ही हैं ! अब कितने क्षणों के बाद उसके संपूर्ण मन को आश्चर्य में
डालकर सामने पड़े रेडियो से उसके पिता का कंठ-स्वर तैरता हुआ आयेगा?
लंबे अरसे से अनदेखे अपने पुत्र की बातें फिर से उनके भाषण में करुण और
सुंदर होकर व्यक्त होंगी।

फिर साढ़े आठ बजा।

दुनिया के किसी कोने में कहीं भी अगर तलाश की जाए तो अभी, इस
वक्त संभवतः अंजुरी भर भी वायु न मिलेगी। लगता है, दुकान की तमाम
बत्तियां एक साथ गुल हो गई हैं। दुनिया के दूसरे-दूसरे तमाम आदमी कहीं
एक क्षण के अन्तराल में अदृश्य हो गए हैं और दोनों कोनों पर मात्र दो
व्यक्ति जीवित बच गए हैं—एक कोने में रातुल और दक्षिण सीमान्त के
परले छोर पर रातुल का पिता। आरंभ में बहुत देर तक आविष्ट रहने के
पश्चात् आहिस्ता-आहिस्ता रातुल की चेतना वापस आई। चुप्पी साधे व
सुनने लगा···।

"मुझे दिव्य दृष्टि उपलब्ध नहीं है अतः मुझमें ब्रह्मज्ञान की स्पर्धा
नहीं है। मात्र विज्ञान और तर्कशास्त्र के सहारे मेरी समक्ष में जो बात
है, आज मैं वही आपसे कहने जा रहा हूं।···मेरे पुत्र रातुल के देहावस
मेरे जिस दुर्भाग्य का सूत्रपात हुआ, दुनिया के तमाम आदमियों के भ
प्रतिदिन वह दुर्भाग्य घटित हो रहा है—यह बात सोचने पर मन को व
शान्ति मिलती है। लेकिन यदि हम यह भी सोचें कि मृत्यु के परे भी
अस्तित्व है, कि मरने के बाद हम एक अमर लोक में जाकर अपने-अपने
से साक्षात्कार करेंगे तो हमारी सांत्वना की नींव और भी मज़बूत ह
है। हमें इस जीवन के दुख-कष्टों के बीच एक अतुलनीय सांत्वना
मिलेगा···मेरा पुत्र रातुल आज से सात वर्ष पहले लड़ाई में घा

अजनबी, अनदेखे शत्रुओं की गोली से किस दूर देश में उसकी सांसें खो गई थीं, मुझे इसका पता भी नहीं मिला। एक दिन जो लड़का मुझे बिना कहे युद्ध के मैदान में चला गया था, उसकी मृत्यु की सूचना मुझे तार से मिली। छोटा-सा तार आया था। मगर मेरे कलेजे पर जैसे वज्रपात हुआ। न जाने, कितने दिनों तक मैं शय्याशायी रहा। पत्नी बहुत दिन पहले ही स्वर्गगता हो चुकी है, मगर पुत्र-शोक ने मुझे विचलित कर दिया। विश्व के अनन्त भंडार में सीमाहीन ज्ञानराशि बिखरी पड़ी है, उसकी तुलना में हम लोगों का मौजूदा विश्व से संबद्ध ज्ञान कितना तुच्छ है, उसकी थोड़ी-बहुत उपलब्धि हमें तभी होती है जब हम उस परम सत्ता और उसके नियमों के संदर्भ में सोचते-विचारते हैं। सृष्टि के रहस्यों को हम किसी दिन उद्घाटित पाएंगे या नहीं, मालूम नहीं, लेकिन उसे समझने के पहले हमें इस बात को समझ होनी चाहिए कि वह कौन है जिसे हम 'मैं' कहा करते हैं। यह 'मैं' मात्र दैहिक अंग-प्रत्यंग या इंद्रियों की समष्टि नहीं है···"

रातुल मौन में डूबा अपने पिता के शब्दों को सुनता रहा। कुछ उसकी समझ में आया, कुछ नहीं आया। भाषण के हर स्वर में रातुल को अपने पिता की मूर्ति साफ-साफ दिख पड़ी। मृत पुत्र के शोक से आविष्ट एक व्यक्ति अपने पुत्र का ध्यान रात-दिन कर रहा है—उसी विषय के संदर्भ में अनुसंधान कर रहा है।

उसके पिता का स्वर पुन. तैरने लगा :

"···उसी पुत्र से मेरी प्राय. हर रोज मुलाकात होती है। उसकी अशरीरी आत्मा मेरे निकट आकर प्रबल तृप्ति पाती है। रातुल मेरे सामने अपने मन के भावों को ज़ाहिर करता है, अपनी विदेही-दृष्टि से मेरी ओर ताकता है। मुझे यह स्वीकारने में तनिक भी झिझक नहीं हो रही है कि मैं रातुल को बेहद प्यार करता था, लेकिन आज मैं आपलोगों से जो कुछ कहने जा रहा हूं, उससे आपकी समझ में *यह बात आ जायेगी कि मैंने अंध संस्कारवश* किसी चीज को नहीं माना है···मेरे दोस्त-मित्रों में से अनेकों ने रातुल को देखा है। आज भी अगर उससे पूछता हूं कि उन दिनों की बातें उसे याद हैं या नहीं तो वह साफ-साफ उत्तर देता है। जो इस दुनिया में सशरीर मौजूद नहीं है, जिसके पार्थिव हृदय का अभी तक विलयन नहीं हुआ है, मेरी खोज उसी अपने मृत

पुत्र रातुल के संदर्भ में जारी है···रातुल अब इस धरा-धाम में नहीं है··· किन्तु उसकी आत्मा के निकट अपनी पहुंच के कारण मैं उसके शोक को थोड़ा बहुत भूल चुका हूं···"

भाषण के अन्त में रेडियो से प्रसारित किया गया :

"···इतनी देर तक आपने जिनका भाषण सुना वह हैं प्राध्यापक नित्या-नन्द सेन। दर्शनशास्त्र के पद को त्यागकर फिलहाल वह परलोक के संबंध में अनुसंधान कर रहे हैं। इस अनुसंधान के कारण हिन्दुस्तान के अनेक विश्व-विद्यालयों ने उपाधि प्रदान कर उन्हें सम्मानित किया है। श्रोताओं के अनुरोध की रक्षा करने के लिए अगले महीने हम पुनः उनके भाषण का आयोजन करेंगे···"

यह किस तरह होता है ? कैसे यह संभव हो पाता है ? बैठे-बैठे रातुल भावना में तल्लीन हो गया। बाबूजी का तमाम चिन्तन, कल्पना, प्रतिष्ठा उसको केन्द्र मानकर यानी रातुल की मृत्यु पर आधारित है। पहले मान लिया गया है कि रातुल की मृत्यु हो गई है, उसकी बाद खोजों का सिल-सिला चल रहा है ! क्या रातुल के बाबूजी ही सही मार्ग पर हैं और रातुल गलत मार्ग पर ? दरअसल रातुल की मौत हो चुकी है। उसने जो कुछ किया है, जो कुछ देखा है, सब-का-सब भौतिक है। ये लोग सभी बेशक आदमी हैं—यह भोम्बल, यह हरिदास का मित्र, जो चाय की दुकान का मालिक है, वे भी आदमी ही हैं। इसके अतिरिक्त वह अस्पताल, डॉक्टर, बूढ़ी नर्स सभी आदमी हैं। रातुल ने अपने पैरों के तलवों की ओर गौर से देखा, अपनी देह की चमड़ी में चिकोटी काटी। उफ, बहुत दर्द महसूस हो रहा है। वह स्थान विशेष सूज गया था। उसका शरीर अशरीरी शरीर नहीं है, उसे भूख का अहसास होता है, उसे भय का बोध होता है, रुलाई आती है। इसके अतिरिक्त अगर वह भूत ही है तो फिर उसे देखकर कोई डरता क्यों नहीं ? उसका सब कुछ आदमी जैसा ही है। उसे जीवित रखने के लिए डॉक्टर इतना प्रयास कर रहे हैं, उसे स्वस्थ बनाने के लिए कितनी ही तरह के अखाद्य खिला रहे हैं। नीम के पत्ते का स्वाद उसकी जीभ को कसैला ही लगा था। चाय उसे मीठी ही लगती है। वह कहां इस देश से उड़कर उसे देश में जा पाता है ! भूत की

तरह आंखों से ओझल हो जाने का कौशल उसे कहां मालूम है ! यही वजह है कि उसे जहाज पर छिपकर रहना पड़ा था।

फिर कौन-सी बात सही है और कौन-सी गलत ?

उसके पिताजी कैसे इस तरह की गलती कर रहे हैं ? उसके पिता जैसे विद्वान-ज्ञानवान् व्यक्ति के द्वारा यह होना संभव है ? और उसके पिता ही अगर गलती में हों तो दुनिया तो पागल नहीं हो गई है। इतने-इतने विश्वविद्यालयों से उन्हें जो डिग्रियां दी गईं, सबकी सब क्या धोखाबाजी हैं ? फिर क्या दुनिया की तमाम चीजें इस प्रकार की धोखेबाजियों और असत्य पर आधारित हैं ? यह हो ही नहीं सकता। रातुल ही गलती में है। हो सकता है कि उसकी स्मरण-शक्ति की गड़बड़ियों में अब भी सुधार न हुआ हो। हो सकता है कि असल में उसका नाम रातुल नहीं है, और कुछ दूसरा ही है। दरअसल रातुल की मौत हो चुकी है। जो असल में प्रोफेसर नित्यानन्द सेन का लड़का था, वह जिन्दा नहीं है। अचानक उस पुस्तक को पढ़ते-पढ़ते उसके दिमाग में आया कि उसी का नाम रातुल है। हो सकता है कि वह गाबरडांगा, घुघुडांगा या चड़कडांगा का रहनेवाला हो। उसका नाम चाहे हरिदास या शिवदास या कि विप्रदास है। वह अपने आप सोचता है कि उसकी बीमारी दूर हो गई है, मगर सच्चाई यह है कि उसकी बीमारी दूर नहीं हुई है। उसी बीमारी के चलते वह चक्कर काट रहा है। यह चक्कर काटना—यह चक्कर काटने की इच्छा—संभवतः एक प्रकार का रोग है। लेकिन सचमुच क्या वह युद्ध में शरीक हुआ था ? फिर अगर युद्ध पर न गया होता तो उस अजीब स्थान में वह क्यों कर पहुंचा—वहां, जहां न कोई बंगाली है और न कुछ दूसरी ही चीजें। सिर्फ एक अस्पताल और एक समुद्र। खिड़की से वह समुद्र कितना विशाल दिखता था !

लेकिन बाबूजी की उस किताब में रातुल की एक तसवीर थी।

तसवीर बेशक उसके छुटपन की थी, लेकिन उससे विशेष कोई समानता नहीं है। समानता न होना स्वाभाविक ही है। लड़ाई के मैदान में भारी चोट लगने के कारण उसके चेहरे में एक आमूल परिवर्तन आ गया है। भेजे में जैसा हरफेर हुआ था उसी तरह चेहरे में भी एक बड़ा परिवर्तन आ गया है। पुराने लोग उसे खासतौर पर पहचान न पायेंगे। अमरीका के 'मेडिकल

की केस नम्बर ४६ की तसवीर से प्रोफेसर नित्यानन्द सेन की पुस्तक
वीर में बहुत बड़ा अन्तर है। इसलिए उसके मन में यह बात क्यों आई
ी रातुल है! फिर वह क्या जा रहा है? किस मरीचिका के पीछे?
कसके पास जा रहा है? उसका बाप कौन है?

रातुल की आंखों में भारीपन के साथ धुंध सिमट आई।

उसका कोई नहीं है। इतने दिनों से वह पिता की स्मृति को सामने रखकर
गे बढ़ रहा था। उसके लिए उसके पिता ध्रुवतारा थे। पिता के अतिरिक्त
ह किसी दूसरे को पहचानता नहीं था। पर अब वह बिलकुल बेसहारा है।
उसके पिता कहां हैं? पिता ने उसके न होनेपन को मान लिया है। वह नहीं है।
रातुल उनके लिए जीवित नहीं है।

रेडियो का बजना कब बन्द हो गया था, पता न चला।

७

अचानक घड़ी ने टन-टनकर रात का दस बजाया।

दस! रातुल चौंक उठा। नौ बजे जहाज खुलने की बात थी। रातुल
उठकर खड़ा हुआ।

" अयं, तुम उठ रहे हो...?" पंजाबी सज्जन आगे बढ़ आया। शायद
दुकान बन्द करने का वक्त हो चुका था। उसके हाथ में चाबियों का गुच्छ
था। दुकान के गाहक जा चुके थे। लगता है, रातुल एकाग्र मन से रेडि
सुनते-सुनते भावनाओं के अतल में डुबकियां लगा रहा था। भोम्बल ने क
था कि वह मांस-भात लिए उसका इन्तजार करता रहेगा।

रातुल जाने-जाने को हुआ तो पंजाबी सज्जन ने कहा, "कह
रहे हो?"

"शायद मेरा जहाज चल चुका। देखूं।" रातुल ने कहा।

"देखने से कोई फायदा नहीं होगा भाई मेरे, जहाज जा चुका है।
आवाज तुमने सुनी नहीं? अब वह जहाज मंझधार में होगा..."

"फिर क्या करूं?" रातुल ने जैसे अपने आपसे प्रश्न किया। स

गया।

"अब क्या होगा ! नौकरी चली जाएगी। कितनी तनखा मिलती थी ?"

भला आदमी तब तक दुकान का दरवाजा बन्द कर चुका था। दो-चार व्यक्ति, जो दुकान की देखरेख करते हैं, छुट्टी लेकर चले गए।

भला आदमी बोला, "सोचने से अब फायदा ही क्या होगा ? चलो, मेरे घर पर चलो। कहीं न कहीं तुम्हें सोना है ही। वहां सोने की जगह है। हरिदास के कमरे में उसके बिस्तर वगैरह पड़े हैं। पहले के जैसा ही…"

"मुझे कलकत्ता जाना ज़रूरी था।"

भला आदमी हंस दिया। बोला, "तुम्हारे लिए कलकत्ता जाना बड़ी बात है। लेकिन मुझसे तुम्हारी यहां मुलाकात होना भी शायद भगवान की इच्छा ही है, वरना…"

"वरना क्या ?"

"वरना…चलो न मेरे साथ घर, वहीं बताऊंगा। अब रोने-धोने से कोई फायदा नहीं होगा…जहाज़ मिलने की कोई उम्मीद नहीं है भाई !"

घर पहुंचने के बाद वह भला आदमी अपने हाथों में भात की दो थालियां ले आया और बिस्तर पर बैठ गया। बोला, "सभी सो चुके हैं, इसलिए मैं खुद ही भात ले आया। लो, खाओ।"

मांस और भात। जोरों की भूख लगी थी। तमाम दिन खाने को कुछ भी नहीं मिला था।

मगर नियति उसे फिर कहां ले आई है ! किसी दिन रातुल ने सोचा था कि भोम्बल ही उसका एकमात्र भरोसा है। इस दुनिया में भोम्बल के लिए एक ही आदर्श है और वह है उसका जादू। एक दिन उसकी मां ने उसे दुनिया में छोड़कर अपना चेहरा शर्म से ढंक लिया था। लगता है, उसी दिन से वह तमाम दुनिया को बाज़ीगरी का खेल समझता है।

और यह भला आदमी !

भला आदमी कहने लगा, "कल तुम कहां थे और आज किसके बिस्तर पर बैठकर भात खा रहे हो…ऐसा ही होता है…देखो न, हरिदास चला गया…"

रातुल ने कहा, "कहां चला गया है ? आप ठीक-ठीक जानते हैं कि वह

बन गया है ?"
आदमी ने कहा, "उसका रुझान हमेशा इसी तरफ था···वह सिर्फ
पने साथ ले जाना चाहता था···"
रातुल बोला, "फिर ?"
"फिर क्या ? दुनियादारी में लगाने की मैंने जी-जान से कोशिश की ।
ी भी तरह भुलावे में न आया । मुझसे हरिदास कहता : भवतोष, सब
छ त्याग दो···उस आनन्द के सामने यह सब भौतिक आनन्द कुछ भी नहीं
···चलो भवतोष, हम दोनों सब कुछ छोड़कर चले जाएं । लेकिन जो होनी
हीं है वह कैसे हो ? अंत में एक दिन बिना किसी से कुछ कहे-सुने चला
गया । मेरे लिए एक पत्र छोड़ गया था ।"

रातुल ने पूछा, "चला गया ?"

"हां, चला गया," भवतोष बाबू ने कहा, "लेकिन मज़ा आया उसके बाद ?"

"क्या ?"

"मज़ा आया कि···उसके चले जाने के बाद अचानक उसके नाम से एक पत्र आया । बर्मा से एक वकील ने भेजा था । वह पत्र बहुत चक्कर काटने के बाद पता नहीं कैसे यहां आ पहुंचा । पत्र लिफाफे में था, खोलकर पढ़ा तो उसमें एक अजीब ही बात थी । बड़ी ही अजीब । उसके कोई दादा बर्मा में सागोन की लकड़ी का व्यापार करते थे । पता नहीं, उसने उनको देखा था या नहीं । उसकी ज़बान से उनका कभी नाम सुनने को नहीं मिला । वही दादा
सागौन के जंगल में ही मौत के मुंह में समा गए । मर गए तो खैर अच्छ
ही हुआ, मगर दुनिया में सिवा हरिदास के उनका कोई अपना नहीं था
लगभग दो लाख रुपये इसके नाम से रख गए हैं । यही है हरिदास
कहानी । देखो भाई, उसकी तकदीर तो देखो ! जो धन नहीं चाहता,
उसी का पीछा करता है । चिट्ठी पढ़कर मेरे हाथ थरथराने लगे । दो
रुपया ! मगर वह रुपया मेरा तो है नहीं । मेरा न भी हो, मगर हरिदा
तो है, यह सोचकर दुख हुआ कि कोई न कोई पैसे को लूट ही लेगा । स
सोचते मन बहुत ही उदास हो गया । मैंने वकील के नाम से एक प
दिया कि हरिदास तीरथ करने निकला है । वह लौटकर आयेगा तो

आपके पास रुपया लाने भेज दूंगा। उसके बाद से मुझे चैन नहीं मिल रहा है। लिखने के लिए तो चिट्ठी लिख दी, मगर हरिदास मिलेगा कहां ? पागल की तरह अजनबियों के चेहरे की ओर देखने लगा। जहाज की जेटी पर जाकर खड़ा रहने लगा। उसके बाद अकस्मात् तुम पर जब नजर पड़ी तो मैं चौंक पड़ा। चेहरा हरिदास के जैसा ही है। गले की आवाज तक···"

उसके बाद गट-गट एक कटोरा दूध पीकर भवतोष बाबू बोला, "वो देखो, वह रहे हरिदास के कपड़े-लत्ते। वह अपने साथ एक भी चीज न ले गया। इसी कमरे में, इसी बिस्तर पर वह सोता था। वह देखो, वह उसकी एक फोटो टंगी है।"

उसके बाद आवेश में आकर उसने एकाएक रातुल का हाथ पकड़ लिया। "तुम्हें जहाज की नौकरी में कितनी तनखा मिलती है भाई ?—पचास, साठ या सत्तर या कि ज्यादा से ज्यादा अस्सी—यही न ! लेकिन अगर तुम्हें यह रुपया मिल जाए तो जिन्दगी भर तुम्हें खटने की कोई जरूरत नहीं। तुम्हारा असली नाम मुझे मालूम नहीं। यह एक तरह से अच्छा ही है। आज से मैं तुम्हें हरिदास कहकर पुकारा करूंगा।"

रात गहराने लगी है। यह सब कैसी घटनाएं उसके जीवन में घटित हो रही हैं ? कहां वह अस्पताल के एक कमरे में बंद था, कहां वह पिता के आकर्षण से खिंचकर कलकत्ता जा रहा था और फिर यहां अदन के बंदरगाह के एक कोने में आ गया है। किसके घर में आकर, किसके बिस्तर पर बैठने पर यह पट-परिवर्तन हो रहा है !

भवतोष बाबू ने कहा, "हरिदास मेरा बचपन का दोस्त है ···· मैं उसकी रग-रग को पहचानता हूं। रिहर्सल कर मैं तुम्हें सब कुछ सिखा दूंगा। इसके अलावा कपड़े-लत्ते और कागजात वगैरह उसी के हैं। अब तुममें सिर्फ इच्छा जगनी चाहिए। और······"

रातुल ने पूछा, "और क्या ?"

"और मैं किसी चीज का दावा नहीं करने जा रहा हूं, भाई। तुम दया कर मुझे जो कुछ दोगे, मैं हाथ फैलाकर ले लूंगा।"

पल भर मौन रहने के बाद भवतोष बाबू ने फिर कहा, "खैर, यह सब बात अभी रहे। काफी रात हो चुकी है, तुम अच्छी तरह से सोचकर देखो।

कल सुबह मुझे बताना। ठीक है न !"

८

रातुल कब तक सोया रहा, उसे पता न चला। अचानक एक चौंकाने वाली आवाज़ से उसकी नींद गायब हो गई। निस्तब्ध रात। अजनबी घर। अनजाना देश। एक दिन के परिचित भवतोष बाबू के घर में एक रात के लिए आश्रय लेने से यह कैसी विपत्ति आई! उसकी नियति उसे कहां ले आई है? वह गृह-परित्यक्त होगा, ऐसी बात तो थी नहीं। उसके लिए सहारे की कमी नहीं है। उसका अपना घर बहुत बड़ा है। स्नेह और प्यार रात-दिन उदारतापूर्वक उसका आह्वान कर रहे हैं। उसकी स्थिति भोम्बल की जैसी नहीं है। न वह भोम्बल की तरह निराश्रय ही है। भोम्बल ने जन्म से ही घर और स्नेह की कामना की थी। क्योंकि उसे प्राप्त न हो सका, इसलिए उसने घुमक्कड़ी वृत्ति अपना ली। और रातुल? सब कुछ रहने के बावजूद वह दुनिया का आस्वाद करने के लिए बाहर निकला है। लेकिन अब नहीं, काफी हो चुका। उसकी तमाम इच्छाएं पूरी हो चुकी हैं। वह फिर से अपने पिता के स्नेह-नीड़ के शांत एकान्त में लौट जाना चाहता है।

मन की स्थिति जब कि ऐसी है तो वह इस वक्त कहां आकर अटक गया!

पाल-तनी नाव एकाएक झांझर हो गई क्या?

भवतोष बाबू की बात पर सहमत हो जाए तो उसे प्रचुर धनराशि प्राप्त हो सकती है। भवतोष बाबू ने सोचा है कि शायद वह रुपया कमाने के लिए ही बाहर निकला है। लेकिन भवतोष बाबू को इसकी जानकारी ही नहीं है कि उसे रुपये का अभाव नहीं है। वह बाप का इकलौता पुत्र है। पिता के स्नेह और धन का वह एकमात्र उत्तराधिकारी है। सिर्फ एक बार सामने जाकर खड़ा होना है। पिता उसे अपने उदार वक्ष से लगा लेंगे और फिर छोड़ेंगे ही नहीं। एक तरफ पिता की दुनिया है और दूसरी तरफ उनका पुत्र रातुल। रातुल के लिए उसके पिता तमाम दुनिया को त्यागने के लिए

रतुल है। पुत्र के अभाव में उनके पिता का जीवन सूना है। खोया हुआ लड़का मिल जाएगा तो उनका जीवन एक संपूर्ण इकाई में परिणत हो जाएगा।

किंतु पिताजी के पास जाने का कौन-सा उपाय है?

एकमात्र भोम्बल ही सहारा था। खिलाये-पिलाये, बिना टिकट के ले जा रहा था। लेकिन कहां का पानी कहां बहकर चला गया! क्या से क्या हो गया! अन्ततः बिना किसी तरह की आवाज किए जहाज रवाना हो गया। रेडियो से पिता का भाषण सुनने में मग्न रहने के कारण उसे ध्यान ही न रहा।

उसके बाद भवतोष बाबू आया।

ईश्वर के किस आदेश का वह पालन करे! किसे वह स्वीकारे! हे ईश्वर, रातुल को तुमने किस मुसीबत में डाल दिया! जब वह बंधु-बांधव रहित और निराश्रय था, तुम उससे कैसी परीक्षा लेने लगे? विदेश के इस अजनबी माहौल में, जब उसके हाथ में कानी कौड़ी तक नहीं है, जब उसे किसी आश्रय की आवश्यकता है और तुमने उसे आश्रय दिया भी लेकिन दिया सो किस घृणित मार्ग के विनिमय में? वह अपने आपको कैसे क्षमा करेगा! इसकी तुलना में अदन की सड़कों पर भीख मांगना कहीं अच्छा था। या अगर यही उसकी नियति थी तो फिर द्वीप के मध्य भाग में स्थित अस्पताल ही कहीं अच्छा था। सारा जीवन—जब तक वह जिन्दा रहेगा—हर कोई उसे रखेगा, भगायेगा नहीं। उनकी जानकारी यही रहेगी कि वह केस नम्बर ४६ है। वे प्रतिदान में किसी भी तरह के उपकार की अपेक्षा न करेंगे।

एकाएक रातुल को लगा कि बगल के कमरे में कोई कटारी से कुछ काट रहा है। फिर इतनी रात में कोई सेंध लगा रहा है? या कोई दूसरी ही विपत्ति आ रही है?

बीच-बीच में धम-धम और एक अजीब ही किस्म की आवाज हो रही है।

रातुल का शरीर सिहरने लगा है।

किसके मन में कौन-सी बात है, मालूम नहीं। भवतोष बाबू के मन में कौन-सा मतलब सक्रिय है, कहना मुश्किल है।

यह भी हो सकता है कि रातुल की यहां हत्या करके प्रचार कर दे कि हरिदास ने आत्महत्या कर ली। उसके बाद जाली चिट्ठी प्रकाशित करना नामुमकिन नहीं है। उस जाली चिट्ठी में हरिदास की ओर से लिखा रहेगा कि वह अपनी तमाम जायदाद अपने मित्र भवतोष······

सब कुछ होना संभव है।

काम निकालने के लिए बदमाशों के द्वारा सब कुछ कराया जा सकता है।

मन में होता है कि वह भाग जाए। इस आधी रात में चुपचाप दरवाज़ा खोलकर वह बाहर निकल जाएगा। उसके बाद दोनों पैर जिस ओर खींचकर ले जाएंगे, उसी ओर चल देगा—इस बंदरगाह की पहुंच के परे, जहां भवतोष बाबू का हाथ पहुंच नहीं पायेगा। पांवों से, पैदल-रास्ते से होता हुआ, वह कलकत्ते की ओर चल देगा। चाहे जितनी ही दूर तक वह जा सके। जहां रास्ता रोककर समुद्र खड़ा मिलेगा, वह दूसरे रास्ते का सहारा लेगा। और अगर किसी माध्यम से उसे एक बार हवाई जहाज़ की मदद मिल जाए तो फिर वह निश्चिन्त हो जायेगा। चाहे जैसे भी हो, उसे सात समुद्र और तेरहों नदियों को पार करना है।

एकाएक बाहरी दरवाज़े पर दस्तक पड़ती है।

"हरिदास···अजी ओ हरिदास······"

बात की बात में रातुल बिस्तर से कूदकर दरवाज़े के पास जाता है। दरवाज़े के सिटकनी खोले या नहीं, उसकी समझ में नहीं आता।

"हरिदास···ओ हरिदास, दरवाज़ा खोलो भाई······" दुबारा पुकार आती है।

दरवाज़ा खोलते ही धीमी रोशनी में रातुल की नज़र भवतोष बाबू को देखती है, उसके एक हाथ में टार्च है और दूसरे में छुरा।

टॉर्च की रोशनी में छुरे की जीभ लपलपाने लगती है।

गहरे अंधेरे में भवतोष बाबू का चेहरा रातुल को बड़ा ही बीभत्स प्रतीत होता है। लगता है, इस आदमी के द्वारा सब कुछ हो सकता है। यहीं, इस आधी रात में उसकी हत्या करके उसे मिट्टी में गाड़ दे तो भी वह कुछ कह नहीं सकता।

भय नहीं बल्कि निराशा से रातुल एक बार चिल्लाने की कोशिश करता है। इससे भी बड़ी मुसीबत में वह पड़ चुका है। वे सब अनुभूतियां और भी अधिक भयंकर हैं। मृत्यु के मुंह के सामने खड़ होकर उसने युद्ध किया है। जहां आदमी के प्राणों के लिए छीना-झपटी चलती रहती है। जहां जिन्दगी सस्ती है। इस तरह की अनुभूतियों के बीच से वह गुजर चुका है।

लेकिन यह उस किस्म का नहीं है। अब बाबूजी से उसकी मुलाकात नहीं हो पायेगी। बाबूजी की जिन्दगी के आखिरी दौर में वह उन्हें शांति नहीं दे पायेगा। किसी दिन बाबूजी के पास से भागकर उनके मन में जो यातना पहुंचाई थी, अब वह उसकी क्षतिपूर्ति नहीं कर पायेगा। निराशा के कारण रातुल के गले की आवाज अटक जाती है।

लेकिन इसी बीच भवतोष बाबू आगे बढ़कर रातुल का गला दबोचने लगता है।

ठीक-ठीक दबोचा नहीं है बल्कि दबोचने के लिए हाथ बढ़ाता है।

रातुल तत्काल जरा पीछे की ओर हटता है और भवतोष बाबू का हाथ पकड़ लेता है। फिर एक पल बीतते-न बीतते बायें हाथ से पांव खींच लेता है और भवतोष बाबू पीठ के बल धड़ाम से गिर पड़ता है।

रातुल एक क्षण के अन्तराल में भवतोष बाबू की छाती पर चढ़ बैठता है। लंबा-तगड़ा शरीर है। भैंस के दूध-घी से पला शरीर रातुल के हाथों के दबाव से बेकाबू होकर असहाय के जैसा थर-थर कांपने लगता है।

एक बार उठने की कोशिश करते ही रातुल कुहनी से उसके पेट को दबा देता है और साथ ही साथ भवतोष बाबू की भयंकर चीख गूंजने लगती है…

उस चीख से रातुल की नींद टूट गई।

उस अंधेरे कमरे में बिस्तर पर पड़े-पड़े रातुल ने आंख खोलकर देखा कि कौन कहां है। वह तो उसी बिस्तर पर लेटा हुआ है। रातुल उठा और रोशनी जलाई। बगल में पड़ी सुराही से एक गिलास पानी ढालकर पिया।

फिर क्या वह अब तक सोया-सोया सपना देख रहा था!

आश्चर्य!

सचमुच आश्चर्य की ही बात है। उसने ऐसा सपना क्यों देख

नहीं। हो सकता है, वह तमाम रात हरिदास के बारे में ही सोचता हुआ नींद में खो गया हो और नींद में चिन्ता के नागपाश ने उसे जकड़ लिया हो। लेकिन भवतोष बाबू उसकी हत्या करने की कोशिश क्यों करेगा? अगर वह स्वीकार न करे? अगर वह भवतोष बाबू का प्रस्ताव स्वीकार न करे तो उसका कौन क्या बिगाड़ सकता है? लेकिन ऐसी स्थिति में स्वीकारने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है।

कमरे की दीवार पर एक फोटो टंगी थी। शायद हरिदास की फोटो है। करीब-करीब रातुल के जैसा ही चेहरा। देह में एक सफेद कुरता है, पांवों में काबुली चप्पल। बाल भी उसी के जैसे कटे हुए हैं।

आज से उसे कोई रातुल के रूप में नहीं जानेगा।

यह सोचते ही रातुल को तकलीफ का अहसास हुआ। सच है, नाम से क्या आता-जाता है। लेकिन आज से उसे क्या अपने अतीत जीवन को एकबारगी पोंछ डालना होगा? उसके लिए पिता नामक व्यक्ति नहीं रहेगा? अपने ही घर के अन्दर घुसने का उसे अधिकार तक न रहेगा? जिन्दगी में उसे कितने ही किस्म के अहसासों के बीच से गुजरना पड़ा है, और कितने ही अभी बाकी हैं। किसी दिन उसे हर कोई रातुल कहकर जानता था। वह नाम बदलकर हो गया केस नम्बर ४९। और अब हरिदास हो जायेगा। किसी एक हरिदास में स्वयं को खोकर उसे एकाकार हो जाना है। यह हमेशा-हमेशा के लिए छद्मवेश धारण करने जैसा है। थियेटर में एक रात के लिए आलमगीर का पार्ट करना कितना सुखद है! लेकिन जिन्दगी भर आलमगीर की पोशाक पहने घर-बाहर चक्कर लगाना नियति की कितनी बड़ी विडंबना है! नाम से लेकर उसके हाथ की लिखावट तक बदल जायेगी। हरिदास का परिचय ही उसका परिचय होगा। हरिदास की शिक्षा ही उसकी शिक्षा होगी, हरिदास के सगे-सम्बन्धी उसके सगे-सम्बन्धी होंगे, हरिदास के मित्र ही उसके मित्र होंगे और हरिदास के शत्रु ही उसके शत्रु होंगे!

कमरे के अन्दर एक सूटकेस पड़ा था। रातुल ने ज्योंही ढक्कन हटाया, खुल गया। अन्दर कपड़े-लत्ते थे और उनके नीचे ढेर-सी चिट्ठियां। एक चिट्ठी को खोलकर रातुल पढ़ने लगा।

हाथ की लिखावट टेढ़ी-मेढ़ी थी:

"पल्टू दा, कई महीनों से तुम्हारा समाचार न मिला। तुमने इसकी भी सुध न ली कि हम जिन्दा हैं या मर गए। पता नहीं, किसने तुम्हारा दिल पत्थर का बनाया था। अबकी 'कच्चा-मीठा' पेड़ में बहुत आम लगे हैं। पक-पककर पेड़ के तले गिरते रहते हैं···दोपहर में अकेली जाने के बाद जब उन आमों को देखती हूं तो मेरे कलेजे में बड़ी चोट पहुंचती है···मां कहती है कि मैं बड़ी ही कमजोर हो गई हूं···तुम्हारे रोपे अमरूद के पेड़ में अबकी फल लग रहे हैं। तुमने कहा था न, कि जब अमरूद फले तो पहला फल बूढ़ा शिव पर चढ़ाना। मैं पहला फल छिपकर देवता के चरणों पर चढ़ा आई हूं···खाकर देखा, बड़ा ही मीठा अमरूद था···जानते हो, उस दिन आंधी से दरवाजे के सहजन का पेड़ चरमरा कर टूट गया···"

एक दूसरी चिट्ठी—

"···पल्टू दा, अपनी किसी भी चिट्ठी का जवाब न पाया। पता नहीं, तुम्हारे हाथ में चिट्ठियां पहुंचती हैं या नहीं। या कि पोस्टमास्टर खुद फाड़कर पढ़ लेता है और पढ़कर हंसा करता है! हो सकता है कि मुझे पगली समझकर··· अब मुझे चिट्ठी लिखना अच्छा नहीं लगता। एक ही तरफ से कितनी लिखी जाएं···लेकिन मां किसी भी हालत में मानने को तैयार नहीं होती है। वह अंधी है, इसलिए हो सकता है कि मेरी चिन्ता उसके हृदय को मथती रहती है···कहा करती है : जवाब मिले या नहीं, तुम चिट्ठी लिखती रहो···मगर पल्टू दा, चाहे कोई दूसरा तुम्हें पहचाने या न पहचाने, मैं तुम्हें अवश्य पहचानती हूं···फुटबॉल के खेल में पैर तुड़ाकर जिस दिन तुम घर लौटे, तकिये पर माथा रखकर पड़े रहे···(तुम्हारी जगह कोई दूसरा व्यक्ति रहता तो रो-रोकर घर भर को परेशान कर डालता) मैं रात भर तुम्हारा पैर सेंकती रही। मुझे मालूम है कि तुम उस दिन दर्द के किस दौरे से गुजर रहे थे···कभी-कभी मैं सोचती, तुम्हारे बाप-मां-बहन कोई नहीं हैं और न भी हैं तो हर्ज ही क्या···मेरे तो मां-बाप हैं। तुम्हें बांधकर रखूंगी ···ले···किन···अच्छा पल्टू दा, तुमने तो कहा था कि ठीक से पुकारने पर देवता के कानों में बात पहुंचती है···वह कौन-सा देवता है पल्टू दा? वह कौन-सा देवता···तब हां, हम लोगों का बूढ़ा शिव बिलकुल बहरा है। है न ?"···

इसी किस्म की लगभग तीन सौ चिट्ठियां थीं। चिट्ठी के नीचे लिखा शैल। यह शैल कौन है? लगता है, हरिदास का पुकारू नाम पल्टू है। न पर दिन, महीने पर महीने इसी तरह की बेशुमार चिट्ठियां लिखती ई है। रातुल ने तारीख को ध्यान से देखा। सबसे पुरानी चिट्ठी तीन साल पहले की लिखी है। कल वक्त निकालकर वह तमाम चिट्ठियां पढ़ डालेगा।

रातुल ने पेटी से कुरता और धोती निकाली। कुरता बदन पर डाला। माप बिलकुल ठीक है। कोई खोट नहीं है। यदि लाचार होकर उसे हरिदास ही बनना होगा, तो उसे हरिदास के रूप में ही सज्जित होना है। अन्ततः कुछ दिनों के लिए हरिदास के रूप में ही सजना है। फिर हाथ में जब पैसे आ जायेंगे, वह घर लौट जायेगा। या तो जहाज़ का टिकट कटायेगा या फिर हवाई जहाज़ का।

रात संभवतः ढलने-ढलने पर है। रातुल ने खिड़की से बाहर आकाश की ओर ताका। अजनबी देश की सुबह। लगता है, हर देश में सुबह एक जैसी ही होती है। नीला अंधेरा और धीमी रोशनी।

हरिदास की पोशाक पहनकर रातुल सोचने लगा। सिर्फ शंभूनाथ लेन की बातें, और कुछ भी नहीं। उस घर की बातें, गोविन्द की बातें औ बाबूजी की बातें अभी उसके लिए जैसे अनधिकार चर्चा के विषय हैं।

खुली खिड़की से समुद्र की लवणाक्त तेज़ वायु आकर उसके चेहरे टकरा रही थी। किसी तरफ कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था, ले रातुल को लगा कि उसने जैसे कुछ देखा। सवेरे-सवेरे हरिदास और छोटी लड़की आम चुनने निकले हैं। उस लड़की का नाम है शैल। के आंचर में आमों के गुच्छे हैं। हरिदास आम चुन-चुन कर शैल के में रखता जा रहा है। 'कच्चा-मीठा' आम के पेड़ के तले आते हैं पुकारती है, "पल्टू दा···"

"क्या है शैल?" पल्टू पूछता है।

"बड़ा ही डर लग रहा है, पल्टू दा। यहां इस बांझ पेड़ के हिल-डुल रहा था।"

"डरने की क्या बात है? चली आओ।"

और पल्टू दोनों हाथों से शैल को छाती से लगा लेता है, जैसे उसकी छोटी बहन हो। "डरने की कोई बात नहीं है," वह कहता है, "छाती पर हाथ रखो, छाती पर हाथ रखकर राम-राम-राम कहो। बीस बार राम का नाम जपो···भय भाग जायेगा।"

उस सुबह आम के पेड़ के तले खड़ी होकर शैल ने पल्टू की बात मानकर बीस बार राम नाम का जप किया था, उसका हिसाब शैल की चिट्ठी मे लिखा है। आज कहां किस गांव के कोने में, किस अविख्यात अंचल में शैल रहती है और कहां उसका पल्टू दा—हिमालय की किस दुर्गम गुफा में किस परमाश्चर्य की खोज में—रह रहा है, इसका किसे पता है!

दरवाजे को ठेलकर पीछे से भवतोष बाबू आया। तमाम बदन में मिट्टी लगी थी, पहनावे में एक लंगोटी। लगता है, अब तक कुश्ती कर रहा था। कितना मजबूत बदन है! इस भवतोष बाबू को सपने में रातुल ने कैसे पछाड़ दिया था!

"कुश्ती करके आ रहा हूं," उसने कहा, "अब दुकान जाना है। तुम्हारे लिए चाय और दूध भेज रहा हूं।"

एक क्षण बाद, जाने के पहले पीछे की ओर मुड़कर भवतोष बाबू बोला, "मेरी बातों पर सोचा? मंजूर है न?"

रातुल भवतोष के चेहरे पर आंखें टिकाए रहा। उसके बाद कहा, "मुझे मंजूर है।"

६

कहने के लिए अपनी स्वीकृति उसने अवश्य ही दे दी लेकिन कहना जितना सरल है करना भी क्या उतना ही सरल है! यह भी तो एक किस्म की धोखेबाजी है। पिता से अपने छुटपन से ही वह जो उपदेश सुनता आया है उनमें से मुख्य उपदेश है: 'सदा सत्य आचरण रखो।'

उसके पिता ने जीवन में कभी असत्य का सहारा नहीं लिया है। कॉलेज में बाबूजी दो दवात रखते थे। एक दवात और कलम कॉलेज की ओर से

ए पैसे की होती थीं और दूसरी अपने पैसे से खरीदी हुई। कॉलेज के
के लिए वह कॉलेज की कलम-दवात उपयोग में लाते थे और व्यक्तिगत
वगैरह अपनी दवात की स्याही से लिखते थे।

आरंभ में रातुल को यह अजीब ही तरह का लगता था। एक दिन वह
बैठा।

बाबूजी ने कहा, "मन-प्राणों से सत्य का पालन करना होगा। सत्यं
शिवम् सुंदरम्—यानी जो सत्य है, वही शिव है, वही सुंदर है। सुन्दरम् का
इसके अतिरिक्त कोई दूसरा अर्थ हो ही नहीं सकता।"

रातुल ने पूछा, "फिर कौन सत्य है और कौन असत्य—यह किस तरह
समझूं बाबूजी ?"

"उसकी एक तरह से परीक्षा की जा सकती है, और वह है—जो काम
पराये के सामने करने में लज्जा महसूस हो, वह अन्याय है···सत्य कार्य से कभी
लज्जा का अनुभव नहीं होता है।"

उसी पिता का पुत्र होने के बावजूद रातुल आज घोर असत्य का सहारा
लेगा ? रुपये-पैसे के लालच में ? हो सकता है कि उसे रुपये-पैसे का लालच
न हो, लेकिन इसके अतिरिक्त उसके लिए विकल्प ही क्या है ? इतनी बड़ी
दुनिया के एक कोने में प्रतिदान के बिना उसे कौन सहारा देगा? अपने आपको
छिपाने के अलावा कौन-सा चारा है ? जहां कहीं वह सहारे की तलाश में
जायेगा लोग उससे सही परिचय के बारे में पूछताछ करेंगे। महज एक ट्यूशन
की तलाश में निकलने पर भी लोग नाम-धाम की पूछताछ करते हैं। खै
ये बातें रहें। जब कि वह जबान दे चुका है तो उसे निभाना ही है।

अच्छा ही हुआ। किसी दिन रातुल लड़ाई के मैदान में मारा गया
और आज अदन के इस बन्दरगाह में केस नम्बर ४६ की मृत्यु हो
इसके बाद वह जब तक जीवन जियेगा, लोग उसे हरिदास के नाम
जानेंगे। यह उसका असत्य आचरण नहीं, बल्कि जन्मान्तर है। अदन
शैल में आकर जैसे उसका जन्मान्तर हुआ है।

दुकान जाने से पहले भवतोष बाबू ने उससे मुलाकात की।
बोला, "तुम्हारे खाने का यहीं इन्तज़ाम कर दिया है। तुम
आराम करना भाई। मैं दोपहर में जब खाना खाने आऊंगा तब

होगी । घूमते-घामते अगर दुकान तक आ सको तो फिर चाप-कटलेट खिलाऊं।"

"चलिए, मैं भी थोड़ी खुली हवा से हो आऊं···"

कहां, किस ओर वह घूमने-फिरने जाए ? रातुल ने चारों तरफ निगाह दौड़ाई ! रातुल कल रात जहाज़ से उतरा है । यहां का वह कुछ भी नहीं देख सका है ।

भवतोष बाबू ने कहा, "कहा घूमने-फिरने जाओगे, भाई ! यह देश मरु-भूमि है, कहीं एक भी हरी घास नहीं दिखेगी। ऐसा अगर न होता तो यहां पानी तक क्यों खरीदकर पीना पड़ता ?"

थोड़ी दूर जाने के बाद भवतोष बाबू ने फिर कहा, "शुरू-शुरू में हम दोनों मित्र जब यहां जहाज से उतरकर आए, तमाम जिस्म में फोड़े उभर आए गरमी के मारे रात में नींद नहीं आती थी। दिन के वक्त घर से बाहर निकल नहीं पाता था। प्यास से छाती फटने लगती थी। एक गिलास पानी पीने को नहीं मिलता था। सोचा, इस मुल्क को छोड़कर भाग जाऊं··· अंत में···"

उंगली से दूर की ओर इशारा करते हुए भवतोष बाबू ने कहा, "वह जो 'जेबेल-शान' का पहाड़ देख रहे हो, उसीकी तलहटी के अरबों के एक गांव में हम गए। मगर वह पहाड़ क्या पहाड़ है ! एक घास तक जहां जिन्दा नहीं रहती वहां क्या आदमी जिन्दा रह सकता है ? फिर भी हरिदास ने कहा : यहीं रहूंगा। जब बंगाल छोड़कर चला आया हूं तो बंगाली कह-कर अपना परिचय नहीं देंगे । अपनी जन्मभूमि, अपने देश ने जब हमें आश्रय न दिया तब सभी देश हमारे लिए अपने देश हैं। यहां जब इतने-इतने आदमी रह रहे हैं, फिर हम क्यों नहीं रह पायेंगे ? हम भी तो आदमी ही हैं !"

दोनों जने पैदल ही जा रहे थे। ऊंटों का काफिला सड़क पर चला जा रहा था। अजीब ही जानवर है ! कितना विशाल शरीर है ! लेकिन इसके अलावा किस पर निर्भर किया जा सकता है ? नीले समुद्र के जहाज की तरह धूसरित भूमि का यह धूसरित युद्धपोत है। पीठ के बल काले-काले सोमाली सोये हुए थे।

भवतोष बावू ठिठककर बोला, "अब मैं चलूं भाई! मुझे बायीं तरफ जाना है। तुम घूम-घाम कर मेरी दुकान में अवश्य चले आना।"

रातुल एकाएक ठिठककर बोला "आप दोनों अपना देश छोड़कर इस देश में क्यों आए, मैं यही सोच रहा हूं···"

भवतोष बावू के चेहरे पर एकाएक उदासी मंडराने लगी। सुबह के अदन के गर्द-गुबार से भरे पहाड़ी रास्ते पर भवतोष बावू एक निमिष को आंखें बंद किए खड़ा रहा। उसके बाद आंखें खोलकर धीमे स्वर में बोला, "अन्ततः तुमने देश की बातें याद करा ही दीं, भाई! यह काम तुमने अच्छा नहीं किया···"

सामने 'स्टीमर पाइंट' की तरफ मा-अला रोड है। भवतोष बावू उसी तरफ जाने लगा। सपनों का नशा जैसे उसकी आंख में तैरने लगा। बोला, "बाबूजी का देहान्त हो गया। कुछ दिनों के बाद जब भात खाने बैठा तो सब्जी नदारद थी। एक दिन देर से घर लौटने पर सुना कि भात खत्म हो गया है···तब मालूम नहीं था कि परिवार का मैं कोई नहीं हूं।"

भवतोष बावू जैसे अपने आप से ही बातचीत करने लगा, "अचानक एक दिन देखा—तीन रसोईघर बनाए गए हैं···मेरा परिवार होता तो चार रसोईघर बनाए जाते···देखा, घर में तीन दीवारें खड़ी हो गई हैं···हम लोग चार भाई थे, मैं ही सबसे छोटा···बड़े तीन भाइयों की शादी पहले ही हो चुकी थी···और हरिदास? दुनिया में उसके अपने कहकर जो लोग थे, वे कब के विदा हो चुके थे···जिन लोगों के घर में उसका लालन-पालन हुआ, कहा जा सकता है कि वे उसके कोई लगते नहीं थे। एक शैल ही थी, जिसके लिए उसका मन बीच-बीच में उदास हो जाता था···खैर, जब एक दिन मैंने कहा : चलो, भाग चलें, हरिदास! तो वह तत्काल राजी हो गया। उसमें शुरू से ही भाग जाने की प्रवृत्ति थी···"

कहानी कहते-कहते भवतोष बावू एकाएक मुड़कर खड़ा हो गया।

बोला, "खैर, इन बातों को छोड़ो···याद न करना ही बेहतर है, भाई!" रातुल ने देखा, भवतोष की आंखों में पानी भर आया है।

उसके बाद वह निःशब्द अपनी दुकान की ओर चल दिया।

जाने के पहले कह गया, "गरीब होने की यातना रग-रग में समाई हुई

है, भाई साहब ! यही वजह है कि तुम्हें हरिदास बनने को कहता हूं, वरना और किस···"

रातुल पैदल चलता हुआ अकेला ही 'स्टीमर पाइन्ट' की तरफ चला आया।

भीतरी बन्दरगाह से एक अरबी बजरा आहिस्ता-आहिस्ता समुद्र की ओर चला जा रहा था। उधर पानी के निकट एक सोमाली मौलवी नमाज पढ़ रहा था! स्याह समुद्र का पानी सूर्य की रोशनी पड़ने से हल्की चमक लिए हुआ था। धुंधलके में डूबे समुद्र में कहीं दूर शायद एक उड़नेवाली मछली पानी से दस-बारह हाथ ऊपर उछलकर फिर से पानी के अन्दर चली गई··· उसके पीछे एक और···उसके पीछे थोड़ी दूर पर एक तीसरी···उनके पीछे एक चौथी···जेटी से सटकर एक नाव जा रही थी। पता नहीं वह किस द्वीप की ओर जा रही है। मल्लाहों का दल क्रमबद्ध डांड़ खेते हुए चिल्ला रहा था, ···याहूदी अल्लाह ! सुबह की हलकी हवा समुद्र के वक्ष में ज्वार जगा रही थी। शायद एक जहाज तब दूर दक्षिण की ओर जा रहा था, जो सुबह के अंधेरे में एक काले धब्बे की तरह खो गया।

रातुल ने चौड़ी सड़क की ओर मुड़कर देखा। इस बीच सड़क पर लोगों का आना-जाना शुरू हो गया है। धूप में तपिश आने के पहले ही उन लोगों ने काम शुरू कर दिया है। ऊंट की नकेल थामे अरबी लोग अपने-अपने काम पर निकल चुके हैं। उनके ढीले कार्बों में चांदी की मूठ के कई चाकू लटके हुए हैं। उनके पीछे एक व्यक्ति चल रहा है। देखने से लगता है कि वह उन लोगों की अपेक्षा बहुत बड़ा आदमी है। वह लम्बा रेशमी जब्बा पहने है। देह पर जरीदार सुनहला वेस्टकोट है। सड़क से सटी हुई बस्ती है। लगता है, मछुआरों की बस्ती है।

एकाएक···एकाएक रातुल के आश्चर्य की कोई सीमा न रही।

विपरीत दिशा से कोई आ रहा था। चेहरा-मोहरा पहचाना-पहचाना जैसा लगता था। रातुल बहुत देर तक तीक्ष्ण दृष्टि से उस ओर ताकता रहा। उसके बाद वह मूर्ति ज्यों ही सामने आई, वह चिल्ला उठा, "भोम्बल ! भोम्बल तुम !"

भोम्बलदास आगे बढ़कर सामने आया ! सवेरे-सवेरे वह मूंगफली खा

रहा है। जेब से दो मूंगफलियां बाहर निकालकर उसकी ओर बढ़ा दीं ओर बोला, "वाह, तुम तो अजीब आदमी हो ! लो खाओ···"

रातुल ने भोम्बल के कंधे को दबाते हुए कहा, "भोम्बल, तुम गए नहीं ?"

कल तमाम रात जैसे भूकंप का दौर चलता रहा था और आज जैसे वह थम चुका है। असीम सागर में भटकता हुआ जहाज़ जैसे तीर से लग गया है। अब रातुल निश्चिन्त है, निर्भय···

"तुम गए नहीं, भोम्बल ?"

"तुम तो अजीब आदमी हो ! मैं तुम्हारे लिए मांस-भात लेकर बैठा रहा। भूख तुम्हें लगी नहीं ? सोचा, बंगालियों में कोई सामर्थ्य तो होती नहीं, सिर्फ गुस्सा करना जानते हैं। आठ बजा, फिर नौ, फिर दस। शुरू में जेटी की सीढ़ी हटा ली गई, जहाज़ की रेलिंग पकड़कर मैं बहुत देर तक सोचता रहा : क्या हुआ ? उसके साथ कौन-सी घटना घटी ? तलाश में निकलूं, इसका भी उपाय न था। गेट बंद हो चुका था···रात तुम्हारे कारण नींद नहीं आई। अनजान अजनबी जगह है, किसी से तुम्हारी जान-पहचान नहीं, कहां सोओगे, क्या खाओगे—यह सब सोचते-सोचते···तुम रात भर कहां रहे जी ? क्या खाया-पिया···? तुम नौ बजे तक क्यों नहीं लौटे ? अहा-हा, तुम्हारा चेहरा बिलकुल उतर गया है ! खिलायेगा ही कौन ? दुनिया में भोम्बल दर्जनों की संख्या में जो नहीं हैं। और उधर तुम्हारी जेब में कानी कौड़ी तक न थी।"

रातुल बोला, "रेडियो सुनते-सुनते रात का दस बज गया। याद ही न रहा···सोचा, जहाज़ रवाना हो चुका है। खैर। मगर तुम क्यों नहीं गए भोम्बल ?"

"अरे, हमारा जहाज़ यहां बिगड़ गया। रात नौ बजे खुलने की बात थी। अचानक बॉयलर या किसी दूसरे पार्ट में क्या हुआ, पता नहीं। जहाज़ हिलने का नाम ही नहीं ले रहा था। सारी रात मरम्मत का काम चलता रहा··· अब सुनने में आया कि ठीक हो गया है। रात दस बजे खुलने की बात थी। रात भर तुम्हारे लिए चिन्ता करता रहा और जब भोर हुई तो तुम्हारी तलाश में निकला—यह सोचकर कि देखूं, जिन्दा है या मर गया···"

रातुल ने खड़े-खड़े सोचा। तो फिर अन्ततः वह कलकत्ता जा सकेगा। "ठहरो," उसने कहा, "मैं एक बार भवतोष बाबू से जाकर कह आऊं। मैं

अभी-अभी आया।"

भोम्बल ने पूछा, "भवतोष बाबू कौन ?"

आकर बताऊंगा।"

रातुल 'मा-अला' रोड पकड़कर चल दिया। तब सड़क पर लोगों के आने-जाने के क्रम में वृद्धि हो चुकी थी। ऊंटों के काफिले की भीड़ को पारकर रातुल दुकान के सामने पहुंचा। भवतोष बाबू तब पंखा झलकर चूल्हा जला रहा था।

"आ गए ? अच्छा हुआ बैठो भाई, चाय पियो।"

"नहीं; मैं बैठने नहीं आया हूं भवतोष बाबू ! मैं चला।" रातुल ने हांफते-हांफते कहा।

भवतोष बाबू हाथ में पंखा लिए ही उठकर चला आया। "यह क्या ?" उसने कहा, "कहां जा रहे हो ?"

"कल रात हम लोगों का जहाज खराब हो गया था। अभी तक जेटी से लगा हुआ है। दस बजे खुलेगा। अच्छा, मैं चलूं भवतोष बाबू।"

"सचमुच जा रहे हो ?···फिर ?" भवतोष बाबू के स्वर में दयनीयता उमड़ आई।

उसके बाद वह फिर बोला, "मैं तुम्हें आज कैसे रोक रखूं भाई ? खैर, हममें जो बातचीत हुई है, उसे किसी से मत कहना। और एक बात···"

एकांत में ले जाकर भवतोष बाबू फुसफुसा कर बोला, "तुम्हें जबान दे चुका हूं, भाई ! जहाज की नौकरी में तुम्हें मिलता ही कितना होगा ? तुम जब कभी आओगे, तुम्हें बर्मा ले चलूंगा। एक बार रुपया मिल जाए तो फिर आराम से जीवन जियेंगे। गरीब होने की यातना रग-रग में समाई हुई है। वरना किसकी खातिर और···"

रातुल खामोश रहा।

"फिर वही बात पक्की भाई।" भवतोष बाबू बोला, "जब भी तुम आओगे वैसे ही··· मुझे एकमात्र तुम्हीं पर भरोसा है, भाई···मुझे निराश मत करना, भाई···इतन-इतना पैसा···मैं तुम्हारे इन्तजार में बैठा रहूंगा···ज्यादा देर मत करना।" भवतोष बाबू की आंखें रुलाई के कारण छलछला आई।

१०

नित्यानंद सेन बैठे-बैठे लिख रहे थे । नयी पुस्तक के लिए सारी सामग्री प्रस्तुत थी । अब वह पूरी पुस्तक का शुरू से अन्त तक संशोधन-परिमार्जन करेंगे ।

शंभुनाथ पंडित लेन की खिड़की से नित्यानन्द सेन ने एक बार आकाश की ओर आंखें फैलाईं । पश्चिम दिशा का आकाश लाल होता जा रहा था । रक्त की तरह लाल । सात वर्ष पहले आकाश का और भी हिस्सा दिख पड़ता था । अब गली की उस ओर कई बड़े-बड़े मकान बन चुके हैं । तब वहां मैदान था । उसी मैदान में रातुल तीसरे पहर मुहल्ले के लड़कों के साथ खेला करता था और वह खिड़की से ताका करते थे । अकेला मुन्ना एक सौ में एक था । तमाम खिलाड़ियों को हराने के बाद जयमाला उसे ही प्राप्त होती थी । वह जहां कहीं भी जाते उनका मन मुन्ना के इर्द-गिर्द चक्कर काटता रहता । पता नहीं, कहां कौन-सा कांड कर बैठे ! किसका सिर फोड़ देगा । किसकी क्या हानि कर बैठेगा । गुनाहगार आखिर उन्हें ही तो होना होगा । इसके अलावा मुन्ना की ही गलती क्यों कही जाए ? अक्सर वह दिनभर कॉलेज में रहा करते थे । मुन्ना की देखभाल का भार गोविन्द पर रहता था । लेकिन मुन्ना गोविन्द की ही परवाह क्यों करने लगा ? कॉलेज से लौटने के बाद तमाम बातों की पूछताछ किया करते थे : क्या खाया, क्या नहीं खाया; क्या-क्या पढ़ा; सोया या नहीं, या तमाम दिन मुहल्ले के लड़कों के साथ ही खेलता रहा । "गोविन्द, ए गोविन्द !"

मकान के आखिरी छोर पर तब गोविन्द चूल्हा जलाने में व्यस्त था । पूरा मकान धुएं से भर गया था । बाबू की आवाज़ सुनते ही वह दौड़ा-दौड़ा आया ।

उनके हाथों में ढेर सारी मोटी-मोटी पुस्तकें थीं । कंधे पर रेशमी चादर । गोविन्द ने उनके हाथों से किताबें ले लीं । प्रोफेसर साहब ने गले की चादर भी गोविन्द को थमा दी ।

"मुन्ना दिख नहीं रहा है ? खेलने गया है क्या ?"

"नहीं, खेलकर बहुत पहले ही लौट चुका है। ऊपर पढ़ने के कमरे में देखा था।"

प्रोफेसर साहब आगे-आगे चले, पीछे-पीछे गोविन्द। सीढ़ी के ऊपर दाहिनी तरफ घूमने से एक हॉलनुमा कमरा है। करीब-करीब दो कमरों के बराबर। जब राहुल की मां जीवित थीं, वह उसी कमरे में मुन्ना के साथ रहती थीं। बाबूजी बगल के छोटे कमरे में अपनी पढ़ाई-लिखाई और किताब-कापी में व्यस्त रहते थे। तब वह यदा-कदा कमरे से बाहर निकलते थे। मां की स्मृति अब व्यतीत हो चुकी है, क्योंकि बहुत ही कम उम्र में उनकी मृत्यु हो गई थी। प्रोफेसर वह दिन अब भी भूले नहीं। हल्की-हल्की सरदी की रात थी। रात तीन बजे डॉक्टर निराश होकर बैठ गया। दार्शनिक प्रोफेसर बाहर की खिड़की से देख रहे थे: रात के अंतिम पहर के धुंधले आकाश में एक बड़ा तारा भभककर जल उठा और फिर नीचे गिर पड़ा। छत और पेड़-पौधों के झुरमुट में वह तारा एक ही निमिष में अदृश्य हो गया। फिर वह दिखाई नहीं पड़ा। तब मुन्ना उस बड़े कमरे के पश्चिमी भाग में एक खाट पर सोया सपने में हंस रहा था। उस विपत्ति की स्थिति में भी प्रोफेसर साहब एक बार राहुल को देखने गए। दो साल के शिशु के चेहरे पर कहीं कोई विकार न था। मुन्ना इत्मीनान से नींद की बांहों में ऊंघ रहा था और नींद में ही जैसे परित्यक्त स्वर्गलोक का सपना देखकर हंस रहा था। मुन्ना के जन्म के बाद से ही—उसके आरंभिक जीवन से ही—जिस दुर्भाग्य की सूचना मिली थी, उसकी परिणति इस तरह की करुण स्थिति में होगी, यह बात प्रोफेसर को सोचनी चाहिए थी। एक बार कहा था, "मुन्ना, तेरे कारण मुझे बड़ी तकलीफ होती है।"

अंधेरे कमरे की एक गोलमेज के सामने बैठ कर नित्यानंद सेन ने बहुत बार यह प्रश्न पूछा था, "मुन्ना, तुझे जब नहीं देखता हूं तो मुझे बड़ी तकलीफ होती है।"

"मुझे भी तकलीफ होती है, बाबूजी !" मुन्ना का उत्तर स्पष्ट होकर कागज पर लिख जाता था।

"फिर तू आने में इतनी देर क्यों करता है ? आजकल मैं जब इन्तजार

रते थक जाता हूं, तब तू आता है।···मेरे लिए क्या सचमुच तेर
ा है ?"

धेरी आधी रात में शंभुनाथ पंडित लेन के एक सिटकनी बंद कमरे में
र इसी तरह के प्रश्न और उत्तर का सिलसिला चलता रहता था।

"तुझे आने में तकलीफ महसूस होती है, मुन्ना ?"

"आज बड़ा ही अच्छा लग रहा है।"

"वहां जाने पर तेरा साक्षात्कार किन-किन व्यक्तियों से हुआ है ?"

"मां से भेंट हुई है।"

"लड़ाई के मैदान में जब तू घायल हो गया, तुझे बड़ा ही यातना-बोध हो
रहा था। है न यह बात ? उफ, तूने कितनी तकलीफें उठाई हैं!"

"यहां आने पर किसी तरह की तकलीफ नहीं महसूस कर रहा हूं।
बड़ी ही शांति है यहां!"

मुन्ना शांति में है, यह जानकर नित्यानंद सेन इत्मीनान की सांस लेते।
इसी तरह हर रोज पिता-पुत्र में संवाद चलता रहता। नयी पुस्तक में उन्होंने
इसी के परिप्रेक्ष्य में विस्तार के साथ लिखा है। इस तरह एक दिन सर
ओलिवर लॉज का पुत्र रेमवो दुनिया से विदा हो गया। सर ओलिवर ने उससे
संबद्ध एक पुस्तक लिखी है—'द सरवाइवल ऑफ मैन।' रातुल के बारे में
भी नित्यानंद सेन ने बहुत पुस्तकें लिखी हैं। पुत्र की मृत्यु के बाद उन्होंने
नौकरी छोड़ दी है। कहा जा सकता है कि वास्तव जगत् से एक तरह से
उन्होंने नाता ही तोड़ लिया है। फिर भी समाज और संसार को छोड़ नहीं सके
हैं। लोग भाषण सुनना चाहते हैं। हजारों आदमी के सामने उन्हें अपने नये तर
के मुद्दे पर बोलना पड़ता है। फिर रेडियो पर भी बोलना पड़ता है। अखबा
के कर्मचारी उनकी फोटो खींचकर ले जाते हैं। नौकरी छोड़ने के बाद उन्
सोचा था कि घर के एकांत कोने में बैठकर आत्मचिंतन में समय व्य
करेंगे, पर परिणाम इसके विपरीत हुआ है। बहुत दूर-दूर से उनके
आमंत्रण आते रहते हैं, चिट्ठियां आती रहती हैं। जिनमें अनजाने-अनप
लोगों की अनुनय-विनय रहती है। दुनिया के बहुत-से लोग उन्
आत्मीयों से बिछुड़कर विधुर जीवन जी रहे हैं। वे लोग उनसे अपने
के आत्मीयों की बातें सुनना चाहते हैं : कि मृत्यु के बाद वे किस तरह

हैं; कि दुनिया को याद उन्हें आती है या नहीं ? वे लोग उनसे सांत्वना चाहते हैं। उनकी पुस्तकें खरीदते हैं और पढते हैं। पत्रों के माध्यम से अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। हम लोग कितना जानते हैं, कितना समझते हैं, कितना देख पाते हैं ? हम लोगों के ज्ञान, समझ और दृष्टि के परे जो अपार रहस्य से पूर्ण जगत् अंधेरे में ढंका हुआ है, उसे देखना, जानना और समझना होगा। प्राचीन ऋषि कठोपनिषद् में लिख गए हैं :

"यस्यामतं तस्य मतं मतं यस्य न वेद सः।
अविज्ञातं विज्ञानतां विज्ञातम् विजानताम्।"

कितने ही दिन, अनेक बहानों के माध्यम से नित्यानंद सेन ने रातुल को यही उपदेश दिया था। सत्य से साक्षात्कार करना होगा। सत्य आचरण जीना होगा। दुनिया की बाकी चीजें छलना हैं। श्रेय है तो केवल सत्य। सत्-चित्-आनन्द। उसी सच्चिदानंद को प्राप्त करना होगा। संकल्प, साधना और योग से। रातुल की मृत्यु के बाद नित्यानंद सेन को बहुत बड़ा लाभ हुआ। उन्हें उस परम सत्ता की जानकारी हासिल हुई। रातुल की मृत्यु के माध्यम से सच्चिदानंद जैसे उनके अन्तर्मन में उद्भासित हो रहा है।

कभी-कभी सभा-समिति में भाषण देते-देते उन्हें लगता है, तमाम शोर-गुल पारकर—शहर, भीड़ और पार्थिव घेरे को त्यागकर—वह बहुत ऊपर एक अलग ही दुनिया में पहुंच गए हैं। कब वे लोग तालियां पीटते हैं, फूलों के गजरे गले में डालते हैं, पांवों की धूल लेते हैं, ऑटोग्राफ लेते हैं और गाड़ी से घर पहुंचा आते हैं, उन्हें पता नहीं चलता। रातुल उन्हें अपने दर्शन-जगत् के एक अलग ही स्तर पर ले गया है। उन लोगों ने अनेक उपाधियां दी हैं। दुनिया की हर दिशा से सम्मान और यश मिल रहे हैं। बिन मांगे। कितने ही दूर-दूर के देशों से आने का निमंत्रण मिलता है। इन कई सालों के दरमियान कई देशों में जाकर कितने ही लोगों से मिल आए हैं। छपकर निकलते ही उनकी पुस्तकें रातों-रात बाजार से गायब हो जाती हैं। जापान, सिंगापुर, चीन, कोरिया, मेक्सिको और पेरू पहुंच जाती हैं। कितनी ही भाषाओं में उनका अनुवाद हो चुका है। अर्थ और यश की प्रचुरता से उनका जीवन भरा-पूरा है।

प्रोफेसर साहब अंधेरी रात में प्रश्न पूछते :

अब नित्यानन्द सेन ने आंख उठाकर देखा।

"तुमने किसे देखा है—रातुल को? कहां?"

"हुजूर, कालीघाट में!"

"एकाएक तुम कालीघाट क्यों गए? कालीघाट जाने की क्या ज़रूरत थी? तमाम बदमाश और धोखेबाज़ों का वहां अड्डा रहता है। तुम्हें बेवकूफ समझकर किसी दिन ठग लेंगे।"

"मगर मुन्ना को गोद में खेला-खेलाकर मैंने उसका लालन-पालन किया था। ऐसी हालत में मुझसे पहचानने में कोई गलती हो सकती है भला?"

नित्यानन्द सेन दुबारा काम में मशगूल हो गए।

"जाओ; बुढ़ापे में तुम्हारा दिमाग गड़बड़ा गया है। तुमसे फालतू बातें करने का मेरे पास वक्त नहीं है। तुमने क्या से क्या देखा है, सुनना चाहिए कुछ और, सुना है कुछ और ही। तुम्हारी आंखें खराब हो गई हैं, गोविन्द! तुम्हें चश्मा खरीद देना पड़ेगा।"

गोविन्द अचानक फर्श पर बैठ गया। नित्यानन्द सेन के पांवों के पास। उसकी आंखों में आंसू की बूंदें थीं। बोला, "बाबू, आप एक बार चलिए। वह हमारे मुन्ना के अलावा कोई नहीं हो सकता।"

"जिसको-तिसको मुन्ना कहने की गलती मत करो गोविन्द! यह बात तुम बहुत बार कह चुके हो।"

"अबकी गलती नहीं है, बाबू! गेरुआ वस्त्र धारण करने से क्या होगा मैंने ठीक-ठीक पहचान लिया। एक बार आप चलें बाबू, आपके जाने से मुन्ना नाहीं न कह पायेगा। मुझसे उसने भली भांति बातचीत तक न क... बाबू..."

"तुम जैसे पागलों से कौन बातचीत करे!"

"नहीं बाबू; गेरुआ वस्त्र पहने बिलकुल साधु बन गया है। काली... के मन्दिर के सामने के चबूतरे पर आंख मूंदे चुपचाप बैठा था। साम... जाते हुए ज्योंही मेरी दृष्टि पड़ी मैं ठिठककर खड़ा हो गया। मैंने ... कौन—मुन्ना? मेरे कहते ही उसने आंखों खोलीं, उसके बाद एक पल ... मेरी ओर ताककर फिर से आंखें मूंद लीं। लेकिन मैं छोड़ने ही क्यों... उसके पैरों के पास बैठ गया। फिर से पुकारा: मुन्ना! तब उसने

आखें खोली। अब मुझे किसी तरह का संदेह न रहा बाबू ! मैंने उसके दोनों हाथों को कसकर पकड़ लिया। फिर मैं उसका हाथ क्यों छोड़ने जाऊं ! मेरा कारनामा देखकर चारों तरफ लोगों की भीड़ लग गई। मैंने कहा : यह हमारा मुन्ना बाबू है। अचानक मुन्ना ने एक झटके में अपना हाथ छुड़ा लिया और इसी तरह मेरी ओर घूरा कि क्या कहूं बाबू। तब मैंने कहा : मुन्ना, तुम मुझे क्यों रुला रहे हो ?···सुनकर मुन्ना ने अपना मुंह घुमा लिया। फिर मेरी ओर एक बार भी न ताका। मेरी आखों से टपटप आंसू गिरने लगे··· मैं कलप-कलपकर वहीं रो पड़ा।"

"फिर ?"

"फिर वहां से दौड़ा-दौड़ा यहां आया। आप एक बार चलिए बाबू !"

नित्यानंद सेन बोले, "तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है गोविन्द ! मुझ से जो कुछ कहा, किसी से मत कहना वरना लोग तुम्हें पागल समझेंगे।"

नित्यानन्द सेन मन ही मन हंस पड़े। अगर यह संभव हो तो फिर उनकी मृत आत्मा से बातचीत, उनका भाषण, उनका यह पुस्तक लिखना, ये तमाम उपाधियां, उनकी विद्या-बुद्धि और उससे भी बढ़कर सर ओलिवर लॉज, कानन डायल—सबके सब मिथ्यावादी हैं। उनकी संपत्ति, उनकी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जायेगी। पागल फिर कहते ही किसे हैं ! गोविन्द अनपढ़ पागल है !

नित्यानन्द सेन फिर से अपने काम में व्यस्त हो गए।

बाहर के दरवाजे की कुंडी खड़खड़ा उठी। क्षितीन बाबू आए हैं।

"ऊपर ही ले आओ।" नित्यानन्द सेन ने कहा।

क्षितीन बाबू तर्कशास्त्र के प्रोफेसर हैं। वह अकस्मात् इस वक्त क्यों आए ?

"क्या बात है, भाई जी ?"

"तुम्हारे रातुल पर नजर··"

क्षितीन बाबू भी जैसे आश्चर्यचकित हैं। क्षितीन बाबू के तमाम चेहरे पर अस्वाभाविक उद्वेग है। आतंक। उन्होंने जैसे इतने बड़े रास्ते को दौड़ते हुए तय किया हो। उनका पूरा शरीर रोमांचित होकर थरथरा रहा है।

नित्यानन्द सेन ने पूछा, "किस को देखा—रातुल को ?"

"हां; कालीघाट के मन्दिर में, गेरुआ वस्त्र पहने। देखते ही पहचान लिया। मैं हर रोज़ मन्दिर की ओर जाता हूं, यह तुम्हें मालूम ही है। एकाएक रातुल पर नज़र पड़ते ही अपनी आंखों पर जैसे विश्वास ही नहीं हुआ। यह कैसे हुआ ? मैंने अपने आप से सवाल किया।"

"क्या कह रहे हो तुम ? सच्ची बात है ?"

नित्यानन्द सेन का चेहरा एकाएक बुझ गया।

११

जहाज़ बारह बजे दिन में खिदिरपुर डॉक से आकर लगा। महासागर पारकर बन्दरगाह में पहुंचा। यहां कुछ दिनों के लिए रुका रहेगा। महराज ने आज जल्दी-जल्दी रसोई तैयार कर ली है। इतने-इतने आदमियों के लिए उसे रसोई बनानी पड़ती है। किसी को रोटी चाहिए तो किसी को भात, किसी को दाल, किसी को शोरबा, किसी को रोस्ट।

"आज मांस में भरपूर लाल मिर्च डाली है, देखना है कि तुम्हारा गोदाम बाबू कितनी फाइन करता है।" महराज ने कहा।

मांस चखता हुआ भोम्बल बोला, "मगर बड़ा ही उम्दा पका है महाराज ! बहुत दिन से ऐसा मांस खाने को न मिला।"

"थोड़ा और दूं भोम्बल ?" होठों से बीड़ी दबाये, महराज ने कलछी से थोड़ा-सा और डाल दिया।

"अहा, खाने में सचमुच बहुत ज़ायकेदार लग रहा है !"

महाराज ने कहा, "पिछले महीने गोदाम बाबू की रपट के कारण मुझे आठ आना जुर्माना भरना पड़ा था। अबकी देखना है कि कितना ज़ुर्माना करता है।" इतना कहकर वह लंबी छोलनी से मांस की देगची में खट-खट खटाक्, खट-खट खटाक् आवाज़ करने लगा।

"उस दिन देखा…"

महाराज बोला, "उस दिन देखा कि तुम मशीनघर के सामने गोदाम बाबू से हंस-हंसकर बातचीत कर रहे हो…लगता है, तुम्हारा दो रुपया माहवार

बढ़ा दिया है इसलिए तुम दुनिया भर की खुशामद करते हो। तुम उसे पहचान नहीं पाए, भोम्बल···मैं उसकी नौकरी लेकर ही रहूंगा। मैं जनेऊ छूकर तुमसे कह रहा हूं। देख लेना···" मांस की देगची नीचे उतारकर महराज ने दाल का बर्तन चूल्हे पर चढा दिया। उसके बाद एक बीड़ी सुलगा कर कहने लगा, "मैं कोई नया रसोइया नहीं हूं। डंकन साहब जब कप्तान थे, मेरे मन में *क्या खयाल आया, जानते हो भाई ? फॉवल करी दिलचस्पी* से बनाई। सरदियों का मौसम था, बड़े दिनों का बाजार। झमाझम बारिश हो रही थी। शाम सात बजे रसोई पकाना खत्म किया, आठ बजे साहब खाना खाने बैठे। खाकर इतनी तारीफ की, इतनी···फलाहारी से पूछना। बैजू को भी मालूम है। डंकन साहब ने भाई इतनी तारीफ की, इतनी कि उसी वक्त मेरा माहवार पचीस रुपया बढा दिया। वे लोग आदमी थे। न अब वह वक्त रहा और न वैसे आदमी।"

उबलती दाल के बर्तन में घट से पचीसेक लालमिर्च डाल कर महराज बोला, "गोदाम बाबू कहा करता है कि वे लोग खाटुली के जमींदारों के वंशज हैं। हुं, होते तो इतनी कम मिर्च खाकर तुम्हारा पेट ही क्यों बिगड़ता ? फिर तुम जमींदार की औलाद कैसे हुए ? ठीक कह रहा हूं न, भोम्बल ?"

उसके बाद एक पल चुप रहने के बाद महराज फिर से कहने लगा, "कभी-कभी सोचता हूं कि कुछ भी न कहूं। वह जो कहता है, कहा करे। पागल क्या नहीं बकता है···मगर वह कहता फिरता है कि मैं बर्मा की सड़कों पर भीख मांगता चलता था और साहब से कहकर उसने ही मुझे नौकरी दिला दी है। अरे, हम तीन-तीन पुश्तों से रसोइये का काम करते आ रहे हैं। मेरे दादा लाट साहब के हेड बावर्ची थे। तीस सालों तक नौकरी करने के बाद पेंशन मिली···"



अकस्मात् जैसे बिजली गिर पड़ी।

ठीक-ठीक बिजली नहीं गिरी बल्कि गोदाम बाबू ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। और एक क्षण बीतते-न बीतते महराज के चेहरे पर भय और भक्ति की छाया हिलने-डुलने लगी।

दोनों जूठे हाथों को जोड़कर प्रणाम करते हुए कहा, "आइए। मुझसे कुछ कहना चाहते हैं, सर !"

गोदाम बाबू ने गंभीर स्वर में कहा, "मुझे बारह बजे के पहले होख ना नलना चाहिए। देर नहीं होनी चाहिए। जहाज ज्यों ही खिदिरपुर पहुंचेगा मुझे दम लेने की फुर्सत नहीं मिलेगी।"

"आप जैसा कहें हुजूर।"

एक क्षण पहले का महराज अब वह जैसे नहीं था। गोदाम बाबू के कमरे में घुसते ही जैसे बाजीगरी का करिश्मा हो गया।

"फिर वह बात याद रखना।"

"जी हां हुजूर!"

"गोदाम का काम करना झंझटों का पहाड़ ढाना है।" कहते-कहते गोदाम बाबू जिस तरह कमरे में आए थे, उसी तरह लौट गए।

गोदाम बाबू के बाहर निकलते ही महराज ने बाहर की ओर झांककर एक बार अच्छी तरह देख लिया। उसके बाद दनादन कई लाल मिर्च दाल में डालते हुए कहा, "देखा न भोम्बल! तुमने देखा ही। कितनी अकड़ में रहता है, तुमने देख ही लिया। मैं उसकी अकड़ को मटियामेट कर डालूंगा। मैं जैसे गाय-बकरी होऊं। कभी-कभी इतना गुस्सा आता है, इतना कि अगर सतजुग होता तो जनेऊ छूकर ऐसा शाप देता कि जलकर राख हो जाता और मैं उस राख को चूल्हे में फेंक डालता···"

जहाज से उतरने के बाद भोम्बल ने चार पैसे की मूंगफली खरीदी। बोला, "लो खाओ।"

डॉक के बाहर आकर बोला, "ये कई दिन तुम्हारे बड़ी तकलीफ में गुजरे हैं। अन्यथा मत लेना। पता नहीं, गुस्से में क्या कह बैठा हूं। जानते हो कभी मां का प्यार नहीं मिला। लाटू गुण्डा के पास रहता तो अब त गुण्डागर्दी ही सीखता। खैर, उन बातों को छोड़ो। अगर किसी दिन मेरी या आए तो सोचना, वह घोर पागल था, उसके दिमाग का कोई ठीक नहीं अगर किसी दिन बड़ा आदमी बन सका तो शायद अखबारों में मेरा न देखोगे। हो सकता है कि मेरा मैजिक देखने के लिए हजारों की भीड़ उ आए। वह दिन अगर आ जाए तो मुझसे मिलना, उसके पहले नहीं।"

चलते-चलते दोनों ट्राम लाइन पर चले आए। बेशुमार बस, ट्राम, ि

और आदमी की भीड़ का आना-जाना जारी था। रातुल अच्छी तरह देखने लगा। कितने बरसों के बाद वह फिर से कलकत्ता आया है। पहले ट्राम, बस और सड़कों पर इतने आदमी नहीं हुआ करते थे। वह इसके पहले भी दो-चार बार खिदिरपुर आ चुका है। ये सब जानी-पहचानी जगहें हैं। उसे लगा कि यद्यपि वह इतने देश, इतने-इतने आदमियों को भ्रमण के क्रम में देख चुका है, लेकिन कहीं उसे इतना अच्छा मालूम नहीं हुआ था। सब कुछ—यह सड़क, ये मकान, गर्द-गुबार—जैसे उसके बहुत-बहुत प्रिय हैं। ये लोग उसके देश के आदमी हैं। निकट के आदमी। मन के आदमी। तीसरा पहर हो चुका है, दफ्तर बन्द हो जाने के कारण बस और ट्रामों मे खड़े होने तक की जगह नहीं है। डॉक के कुलियों को छुट्टी मिल चुकी है। कोयले की गर्द से भरे मैली पोशाक में मर्द और औरत कुलियों की जमात है जो दोनों किनारे के फुटपाथों से पंक्तिबद्ध होकर अपना झुग्गियों की ओर जा रहे हैं। रातुल की आंखों के दायरे में जो कुछ आ रहा है, उसे अच्छा लग रहा है। अच्छा लग रहा है पांवों के नीचे स्वदेश की मिट्टी का स्पर्श! अच्छी लग रही है गंगा से आती हुई हवा और आदमी की जमात।

भोम्बल ने पूछा, "तुम क्या सोच रहे हो?"

"कुछ भी नहीं।" रातुल ने कहा।

उसके बाद भोम्बल के स्वर में एकाएक मिठास तिर आई, "तुम्हें मुझे छोड़कर जाने में तकलीफ नहीं महसूस हो रही है?" इतना कहकर भोम्बल ने एक कहकहा लगाया।

रातुल ने पूछा, "तुम हंसे क्यों?"

"छोड़ो; तुम नहीं समझोगे। अब तुम घर जाओ। बस पकड़ो।"

विदा करने की मुद्रा में भोम्बल ने रातुल के पीठ पर अपना हाथ रखा।

"तुम भी मेरे साथ चलो।" रातुल ने कहा।

"मैं? मुझे अपने घर ले चलोगे?"

"बाबूजी तुम्हें देखकर बेहद खुश होंगे।"

"तुम्हारे घर पर और कौन-कौन हैं? तुम्हारी मां जीवित नहीं हैं?"

"नहीं; मां को मैंने देखा तक नहीं।"

"तुम्हारी भी मां जीवित नहीं है? तुम लोग बहुत धनी हो?"

"मालूम नहीं।"

"तुमको देखने से तो यही लगता है कि तुम लोग बहुत बड़े आदमी हो। तुम मेरा दुख समझ नहीं पाओगे। मैं तुम्हारे घर पर नहीं जाऊंगा। अगर मैं खुद किसी दिन बड़ा आदमी हो सका तो फिर तुमसे मिलूंगा।"

रातुल मुसकराता-हुआ बोला, "बड़े आदमी क्या बहुत बुरे होते हैं?"

"बड़े आदमी गरीबों को बड़ी हेय दृष्टि से देखते हैं। जब तुम बड़े होगे तो यह बात तुम्हारी समझ में आएगी। बड़े आदमी सोचते हैं कि जिनके पास पैसा नहीं, विद्या, बुद्धि, मन—कुछ भी उनके पास नहीं रहता है।"

"तुम्हें इतनी बातों की जानकारी कैसे हुई भोम्बल ?"

"कितने ही आदमियों के पास रहकर कितने ही तरह के काम कर चुका हूं—कितनों के घर में बर्तन मांजने का काम किया है, रसोई बनाई है, झाड़ू-बुहारू देने का काम किया है। तुम्हारे लिए सारी बातें सुनना जरूरी नहीं है। सुनने पर हो सकता है कि समझ ही नहीं पाओ। अपने दुख को सिर्फ हमीं लोग समझते हैं, और अगर ईश्वर है तो वह भी समझता है···"

"मैं वह सब नहीं समझना चाहता। चलो, मेरे घर चलो।"

दोनों ट्राम पर चढ़ गए।

कुछ देर के बाद भोम्बल बोला, "तुम पर नजर पड़ते ही घर के सभी लोग आश्चर्य में आ जायेंगे। है न यह बात ?"

"इसमें आश्चर्य की कौन बात है? बाबूजी अभी घर पर नहीं होंगे। होगा तो सिर्फ गोविन्द ही। वह हमारा बहुत पुराना नौकर है।"

बस के अन्दर खड़े-खड़े जा रहे हैं और छत की सलाख पकड़े हिल-डुल रहे हैं। कंडक्टर चारों तरफ के आदमियों से टिकट मांग रहा है। वह किस ओर से किस ओर जा रहा है, दिख नहीं पड़ता। जब रातुल घर पहुंचेगा, गोविन्द संभवतः उस वक्त चूल्हा जला चुका होगा। कुंडी खट-खटाते ही वह दरवाजा खोलने आएगा। सोचेगा, शायद बाबू आए हैं। लेकिन जब उसकी नजर मुन्ना पर पड़ेगी, वह हैरान हो जायेगा। हो सकता है, उसे विश्वास न हो पाए। जिसके बारे में पता है कि वह मर चुका है, उसके आवि-र्भाव से चौंकना स्वाभाविक है। फिर वह चाय बनाकर लाएगा। हो सकता है कि कुछ देर तक रोता रहे, लेकिन वह खुशी की रुलाई होगी। और

अगर गोविन्द घर में न हो या वह नौकरी छोड़कर बहुत दिन पहले चला गया हो तो फिर? लड़ाई के दौरान बहुत-कुछ बदलाव के दौर से गुजर चुका है। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। हो सकता है उसके घर में कोई दूसरा नौकर हो। अजनबी रहने के कारण वह रातुल को पहचान नहीं सकेगा। पूछेगा : आप कौन हैं? किससे मिलना चाहते हैं? हो सकता है शुरू में अन्दर ही न जाने दे। रातुल अपना नाम बताएगा, तो भी विश्वास नहीं करेगा। रातुल? बाबू का लड़का रातुल तो लड़ाई में बहुत दिन पहले मर चुका है। धोखाधड़ी करने की कोई और जगह न मिली? बाबू घर पर नहीं हैं। यह सब नहीं चलेगा। बाबू आ जाएं फिर जो करना होगा, करेंगे। किसी भी अजनबी को घर के अन्दर घुसने दूं, इसकी मुझे इजाजत नहीं मिली है। और अगर बैठना ही है तो बाहर के कमरे में बैठो। हां तब तक, जब तक वह आ न जाएं। वह जब तक नहीं आ जाते हैं तब तक घर के अन्दर कैसे आने दूं।

"सर्वनाश हो गया।" एकाएक भोम्बल चिहुंक उठा।

"क्या हुआ?" रातुल ने पूछा।

"मेरा मनीबैग?"

भोम्बल अपनी जेबें टटोलने लगा। कहीं नहीं है। कहां गया? वह अभी-अभी दो महीने की तनख्वाह लेकर रास्ते पर निकला था। लगभग डेढ़ सौ रुपये उसमें थे। जेब कट गई? सौभाग्य कहिए कि कुछ रेजगारी अलग ही रखी हुई थी।

कंडक्टर आया और टिकट की मांग की।

रातुल ने कहा, "मेरे पास कानी कौड़ी तक नहीं है।"

भोम्बल बोला, "तुम्हारे घर पर जाना नहीं हो पाएगा।"

"क्यों?"

"मनीबैग की तलाश में मछुआ बाजार जाना पड़ेगा।"

"मिल जाएगा?" रातुल ने निराश मुद्रा में कहा।

"जरूर। और कहां जायेगा? अड्डे पर पहुंचने से अवश्य ही मिल जाएगा।"

"किस अड्डे में?" रातुल ने पूछा।

"लाटू गुंडा के अड्डे में। मछुए बाज़ार में। चोरी की सारी चीज़ें पहले वहीं जमा की जाती हैं···चलो देखें, किस्मत में क्या है। ज़्यादा देर होने से हो सकता है कि माल का बंटवारा हो जाए।

रातुल ने कहा, "मैं भी चलूं ?"

"चलो, ज़्यादा देर नहीं होगी। गया और लौटा।"

"मगर इतने दिनों के बाद लाटू गुंडा अगर तुम्हें देख ले और पकड़कर रोक ले और फिर आने न दे तो ?"

भोम्बल ने सीना तानकर कहा, "देखा जाए। डेढ़ सौ रुपया गायब होने दें ? खून-पसीना एक कर कमाया है।"

१२

कलकत्ते की सड़क पर टैक्सी सरसराती हुई जा रही थी। आशुतोष मुखर्जी रोड पकड़कर बसों की भीड़ को पीछे छोड़ती हुई टैक्सी हाजरा रोड के मोड़ पर आई। उसके बाद दाहिनी तरफ सीधे हाजरा रोड को पकड़कर चली। टैक्सी भागी जा रही थी और उसके चारों पहिये थरथराते हुए चक्कर लगा रहे थे।

गोविन्द ड्राइवर के पास बैठा था।

पिछली सीट पर नित्यानन्द सेन और क्षितीन बाबू।

संध्या सात बजे एक हॉल की सभा में उन्हें सम्मिलित होना है। एक बार उन्होंने मुड़कर कलाई घड़ी देखी। अभी कई घंटे बाकी हैं। किसी की ज़बान से एक भी शब्द बाहर नहीं निकल रहा था। एक तरह का आतंक और आनंद से मिला-जुला कौतूहल टैक्सी के अन्दर के वातावरण में मंडरा रहा था।

कालीघाट रोड के मोड़ पर आकर टैक्सी बायीं ओर मुड़ी। अब सीधा रास्ता है। इसके बाद ही बायीं ओर काली का मंदिर। अब पांच मिनट के बाद ही मुन्ना बाबू पर नज़र पड़ेगी। जब उसने जन्म लिया था और छोटा था, एक तरह से गोविन्द ने ही उसका लालन-पालन किया था। घर की

मालकिन एक बार जो बिछावन पर गिरी फिर दुबारा उठ नहीं पाई। वह एक हाथ से रसोई पकाता था, बाजार करता था और दूसरे से मुन्ना का लालन-पालन करता था। हर तरह का काम गोविन्द ही करता था। बचपन में मुन्ना कितना शरारती था! दोपहर में गोविन्द सदर दरवाजे के पास लेटा था। गरमी की दोपहर थी। बाबू कॉलेज जा चुके थे। शंभुनाथ लेन की छोटी तंग गली में आइसक्रीम वाला आया करता था। मुन्ना आहिस्ता-आहिस्ता दबे पांवों रास्ते पर उतरा। अचानक गोविन्द की नींद टूट गई।

"कौन है? कौन?"

गोविन्द पर नजर पड़ते ही मुन्ना भागकर ऊपर चला गया। राम-राम कूड़ा-कर्कट है यह सब! खाने से पेट की बीमारी होती है। गोविन्द ने बाबू से कितनी ही बार कहा था कि मुन्ना बाबू को पैसा मत दिया करें।

"इतने छोटे बच्चे के हाथ में पैसा क्यों देते हैं बाबू। फेरीवाले ही सारे अनर्थों की जड़ हैं। मुहल्ले में इतने-इतने मकान हैं, मगर इसी मकान के सामने आकर पुकार लगाते हैं: मूंगफली। दालपूरी। घुघना। रामदाना। गोल-गप्पा! हुं; इन लोगों की मौत क्यों नहीं होती?"

छुटपन में मुन्ना पढ़ने से बड़ा जी चुराता था। बाबू का भय दिखाकर मुहल्ले से खोजकर लाना पड़ता था। उधर मास्टर साहब बैठे-बैठे इन्तजार किया करते थे। मालकिन मरने के समय कुछ बोलकर नहीं जा सकीं। अन्तिम समय में कुछ दिनों तक जबान ही बन्द हो गई थी। फिर भी स्वर्ग जाकर वह देख तो रही हैं। एक तरह से उसके ही हाथों में सौंप गई थी। लेकिन कब तक आंखों के सामने रखा जाए? लड़का जब बड़ा हो जाता है तो बाप की ही बात कहां सुनता है? बाबू को जानकारी नहीं दी गई थी। उसके बाद कई दिन बड़े कष्ट में व्यतीत हुए थे। बाबू के गले के नीचे भात उतरता ही नहीं था। भात के थाल के सामने बैठे-बैठे पता नहीं, आकाश-पाताल क्या-क्या सोचा करते थे। भात ज्यों का त्यों पड़ा रहता था। पड़ोसी के घर से बिल्ली आकर चट से मछली उठाकर ले जाती थी। उसके बाद से गोविन्द खाना परोसकर रसोई घर की सिटकनी बंदकर अपने सामने खिलाता था।

"वह तली मछली रही, वह शोरवेदार, वह बड़ी कटोरी में दाल है और वो रही परवल की भुजिया।

"यह थोड़ा-सा भात दही के साथ खा लें वावू। फेंकने से नहीं चलेगा।

"मालकिन जिस दिन से चल वसी हैं आपको अच्छा खाना नहीं मिल पाता है। उस दिन क्षितीन वावू की मां के पास जाकर चटपटी रसोई वनाना सीख आया हूं।

"कल कलाई की दाल खरीद लाया हूं। वरी वनाने को सोचा है। आप तली हुई वरी खाना पसन्द करते थे। अकेले दाल चुनना है, फिर पानी में डालना होगा, फिर पीसना। उसके वाद वरी वनानी हैं। यही नहीं, सव काम छोड़-छाड़कर धूप में सुखाना होगा।"

वावू कहते, "इतनी-इतनी रसोई किसके लिए वनाते हो गोविन्द? वेकार इतनी मेहनत करते हो। मुझे सिर्फ थोड़ा भात और आलू का भुरता दे दिया करना।"

सारे कपड़े-लत्ते फट गए थे। वावू नये कपड़े वनवा ही नहीं रहे थे। गोविन्द एक दिन दुकान से दर्जी को वुला लाया।

वावू के सामने खड़ा होकर वह वोला, "ठीक से माप लो भैया। सात दिनों के अन्दर देना है। सिलाई खराव हुई या कपड़ा पसन्द न आया तो मजूरी काट लूंगा। हां, कहे देता हूं।"

अन्ततः वावू ने कॉलिज जाना वन्द कर दिया। कहीं भी नहीं निकलते थे। रात-दिन दरवाजा वन्द करके कमरे में पड़ रहते थे। दरवाजे को ठेलकर खाना खिलाना पड़ता था। दोपहर और रात में खाना खिलाने के वक्त सिर्फ आधे-आधे घंटे के लिए मुलाकात होती थी। मेज पर वैठकर खाना खाते-खाते किताव पढ़ा करते थे। क्या खा रहे हैं, इस ओर उनका ध्यान ही नहीं रहता था। वैठे-वैठे ढेरों चिट्ठियां लिखते रहते थे। उन चिट्ठियों के ढेर को गोविन्द लेटर वॉक्स में डाल आता था। कॉलिज जाना वन्द हुआ, वंधु-वांधवों का आना-जाना वंद हुआ—वस कमरे में तमाम दिन वैठे-वैठे क्या करते थे, भगवान जाने। चेहरा दुवलाकर रस्सी की तरह हो गया। कई सालों तक यही सिलसिला चलता रहा। इतनी वड़ी लड़ाई समाप्त हुई, कलकत्ते में वमवारी हुई, अकाल पड़ा, कलक[illegible] वीरान हो गया, लोग-वाग

मुहल्ले से गायब हो गए, ब्लैकआउट हुआ—किसी तरफ कोई ध्यान नहीं। दोपहर और रात में बाबू को खाना खिलाकर गोविन्द लौट आता। उसके बाद करने के लिए उसके पास कोई काम न रहता था। दरवाज़े के पास लेटा-लेटा वह असंलग्न चिन्ताओं में डूब जाता था। समय काटे नहीं कटता। दो प्राणियों के परिवार में काम हो ही कितना सकता था!

इसी तरह बहुत साल बिताने के बाद एक दिन वह घर से बाहर निकले। लेकिन फिर कॉलेज गए ही नहीं। बोले : "अब नौकरी नहीं करूंगा, गोविन्द। किसके लिए करूं? एक आदमी की रोज़ी-रोटी किसी तरह निभ ही जाएगी।"

घर से निकलना फिर से चालू हो गया। बंधु-बांधव फिर से घर पर आने लगे। यहां-वहां मीटिंग होने लगी। दो-चार दिनों के लिए सभा-समिति में सम्मिलित होने के लिए दूर-दूर जाने लगे। कभी पश्चिम की ओर, कभी प्रयाग। साथ में गोविन्द रहता। बड़-बड़े आदमी मोटर से मिलने के लिए आने लगे। वे फूलों का हार पहना जाते। मुन्ना की आदमकद फोटो बनवा कर टंगवा दी। उसके बाद हर रोज शाम के वक्त कमरे को अंधेरा करके और दरवाज़े को बन्दकर कई घंटे तक क्या-क्या करते हैं, गोविन्द कुछ समझ नहीं पाता है। समझने की कोशिश भी नहीं करता है।

"उतरो गोविन्द, उतरो, आ गए…"

क्षितीन बाबू की पुकार से गोविन्द की चेतना लौट आई। टैक्सी काली मंदिर के सामने आकर खड़ी हो चुकी थी। बाबू ने उतरकर चलना शुरू कर दिया था, क्षितीन बाबू उनके पीछे-पीछे चल रहे थे। टैक्सी रुकी रहेगी। वे लोग उसी टैक्सी से वापस जायेंगे।

पत्थर की टाइल की सड़क को पार करने के बाद ही मंदिर का प्रांगण है। भिखमंगों की जमात पीछे लग गई।

"एक पैसा बाबू…एक पैसा…"

तीस-चालीस बच्चे-बूढ़े, औरतें करुण स्वर में भीख मांग रहे थे।

गोविन्द बोला, "जाओ तंग मत करो भैया। हम लोग तीर्थ करने नहीं आए हैं। फिर भी तुम लोग पीछे लग गए हो। लगता है, तुम्हारे कानों में बात नहीं पहुंच रही है।"

क्षितीन बाबू रास्ता दिखाते हुए जा रहे थे। आज मंदिर में कुछ ज्यादा भीड़ थी। तीर्थयात्रियों का जमघट था। मां के मंदिर में लोगों का जमाव था। डाली की दुकानों से होकर जाने का उपाय नहीं है। वे लोग खींच-तान शुरू कर देते हैं। हम तीर्थयात्री नहीं हैं, यह पहचान नहीं पाते। ये कैसे पंडे हैं! हम काम से आए हैं। रास्ता छोड़ो, छोड़ो रास्ता। हम लोग अपनी ही परेशानियों से बेहाल हैं। मुन्ना बाबू मिल जाए, मनाकर हम उसे घर ले जाएं, वह दुनियादारी करने लगे, उसमें सुविवेक जग जाए तो फिर हम मनौती तो मनाये हुए हैं ही, षोडशोपचार से पूजा-पाठ करेंगे। सिर्फ डाली ही नहीं चढ़ायेंगे बल्कि मां का दरवाजा खोलने के वक्त सुबह जो प्रसाद दिया जाता है, वही भोग चढ़ायेंगे, उसके बाद अन्नभोग। हम लोगों के बाबू जैसा बाबू तुम लोगों को नहीं मिलेगा।

मां के मंदिर के दक्षिण के बड़े हॉल में संगमरमर पत्थर पर···

क्षितीन बाबू ने दिखाया, "वह रहा।"

नित्यानंद सेन ने देखा।

गोविन्द इसके पहले भी देख चुका था। अबकी और ध्यान लगाकर देखने लगा।

सुदूर नक्षत्रलोक का कोई, वाणी, मन और दृष्टि से परे का, रहस्य अनन्त काल से मनुष्य के कौतूहल को उत्तेजित करता आ रहा है। कितने ही महापुरुष उस रहस्य की यवनिका को अनावृत करने की व्यर्थ प्रचेष्टा में मृत्यु को वरण कर चुके हैं—मनुष्य का इतिहास इसका साक्षी है। फिर भी वर्तमान से आरम्भ कर दूर, बहुत दूर अनागत के मनुष्य हर युग में उसी रहस्य के उद्घाटित करने के लिए प्राणपण से परिश्रम करेंगे। यही आदमी की करुण नियति है। विश्वनियंता की इस सृष्टि के रहस्य के तिल-भर सत्य का भी आविष्कार करने में कोई समर्थ नहीं होगा, यह जानते हुए भी साधना की गति में ठहराव नहीं आएगा। प्राणोत्सर्ग की गति थमेगी नहीं। यह क्या उनके जीवन का फलाफल है! रातुल की मृत्यु के कारण जिस सत्य की खोज करने के बाद उन्हें गर्व का अनुभव हुआ था, रातुल पुनर्जन्म लेकर उनका परिहास करने आया है। उनके समस्त गौरव को धूलि में मिलाने आया है।

छि: छि:…

अन्दर ही अन्दर गोविन्द की सांसें जैसे अटक रही थी। अब वह स्वयं को संयत रख नहीं पाया। धड़ाम से वह मुन्ना बाबू के पैरों पर गिर पड़ा।

बोला, "मुन्ना बाबू…मुझे तुमने पहचाना नहीं ? मैं तुम्हारा गोविन्द हूं…"

रुलाई, आनन्द और उत्तेजना के कारण गोविन्द के मुंह से आधी बात बाहर ही नहीं निकली।

क्षितीन बाबू बोले, "देखो नित्यानन्द, केवल माथे का बाल मुंड़ा हुआ है, वरना हूबहू वैसा ही है। मुझे तो वैसा ही लगता है…"

यात्रियों के कई और दल वहां इकट्ठे हो गए। पूछा, "क्या बात है भाई?"

उनमें से एक व्यक्ति अधिक आग्रहशील था। वह आगे बढ़ा और बिलकुल गोविन्द के पास चला गया, "क्या हुआ भाई जी, क्या हुआ है ?"

गोविन्द दहाड़ मारकर रोने लगा, "भैया, वह हमारे मुन्ना बाबू हैं। घर से भाग आए हैं। साधु बनकर जा रहे हैं। आप लोग दस आदमी मिलकर इन्हें समझाएं। ए मुन्ना बाबू, एक बार बाबू की ओर तो देखो। तुम्हारे बारे में सोचते-सोचते उनका शरीर सूखकर आधा हो गया है। सुन रहे हो मुन्ना बाबू ! सुन रहे हो…"

आहिस्ता-आहिस्ता और ज्यादा लोग जमा हो गए।

"क्या हुआ है जनाब ?"

"किसका लड़का है ?"

"पुलिस को सूचना दी गई है ?"

कौन किसकी बात का उत्तर दे ! क्षितीन बाबू ने एक बार और नित्यानंद की ओर गौर से देखा। नित्यानंद सेन शांत-गम्भीर दृष्टि से सब कुछ देख रहे थे। फिर भी वह जैसे कुछ भी देख नहीं पा रहे थे। उनकी सारी साधना, सुख्याति, विद्या-बुद्धि आज एक ओर थी और दूसरी ओर पुनर्जन्म प्राप्त रातुल। अचानक उन्हें अपना ही शरीर अपने आपको बड़ा भारी लगने लगा।

तब चारों तरफ कौतूहल में डूबी जनता की भीड़ के प्रश्नों का वाण असह्य जैसा लग रहा था।

क्षितीन बाबू बोले, "गोविन्द एक ओर तू पकड़ और एक ओर मैं पकड़ता हूं। वह जबकि बातचीत नहीं कर रहा है, उसे गाड़ी से घर ले चलना चाहिए।

"अब लतीफ ही कलकत्ते के दफ्तर का मालिक है। मगर जब मैं दल में था, मेरे सामने ही लतीफ की तालीम की शुरुआत हुई। तब वह मेरा शागिर्द था। अब लाटू गुंडा का कृपापात्र होने की वजह से उसकी तकदीर चमक उठी है। मांग काढ़ता है, हाथ में कलाई घड़ी रहती है, उंगलियों में सोने की चार-चार अंगूठियां हैं। मुझसे बार-बार कहा : दल में लौटकर चले आओ। पाकिस्तान हिन्दुस्तान के बीच तस्करी का कारोबार करोगे तो महीने में हाथ-खर्च के लिए चार सौ रुपये मिलेंगे, उसके अलावा खाने का खर्च। मैंने कहा : जरूरत नहीं है, भाई। अगर मैजिक और थोड़ा सीख लिया—ज्यादा नहीं; कटे सिर को जोड़ने का खेल मालूम हो जाए—तो चार सौ रुपयों को पांव की ठोकर लगाऊंगा।"

एक पल मौन रहने के बाद बोला, "एक व्यक्ति है—सैगोन का एक बूढ़ा चीनी। पट्ठा नंबरी अफीमखोर है। चार रत्ती अफीम का इन्तजाम कर उससे मिलने के लिए सैगोन उसके घर पर गया था। अफीम को डिबिया में रख लिया और उसके बाद ढेर सारे रुपयों की मांग की। मगर है हुनरमन्द आदमी। यही वजह है कि गोदाम बाबू और महराज के लात-जूते खाकर भी वहां पड़ा हुआ हूं। सोचता हूं, साठ-सत्तर रुपये तो मिल रहा है। जमा करते-करते जब लगभग हजार रुपये हो जायेंगे तो उसी दिन···"

उसके बाद कुछ क्षणों तक वह खामोशी में डूबा रहा और मन ही मन कुछ सोचता रहा। बोला, "इसके अलावा पाकिस्तान-हिन्दुस्तान कहां तक करता फिरूं? पकड़ा जाऊंगा तो फिर फांसी के फन्दे पर लटका देगा। उससे तो बेहतर है कि इस उम्मीद में जी रहा हूं···हो सकता है एक दिन मां मिल जाए। आवारे की तरह यह चक्कर काटना अब अच्छा नहीं लगता। मन में होता है, अपनी कोई अगर मां होती और अगर वह मारती-पीटती, डांट-डपट सुनाती तो वही अच्छा होता। बहुत दिनों से मन में होता है कि मां की डांट-डपट सुनूं···"

चलते-चलते वे फिर ट्राम लाइन के किनारे आ गए। एकाएक उसकी निगाह घड़ी की एक दुकान की तरफ गई और वह चिहुंक उठा।

"अरे! आज मेरी सात बजे से ड्यूटी है। आज मैं तुम्हारे घर पर नहीं जा पाऊंगा, भाई। मैं उस बस से चलता हूं। तुम जाओ।"

इतना कहकर जाते-जाते वह अचानक ठिठक गया। बोला, "अरे ठहरो।"

निकट आकर बोला, "तुम्हारी जेब तो ठनठन गोपाल है। तुम तो नम्बरी बेवकूफ हो जी! घर कैसे जाओगे? इस नोट को अपने पास रख लो।"

मोम्बल ने दस रुपये का एक नोट रातुल की ओर बढ़ा दिया। उसके बाद बोला, "शायद यहां और तीन-चार दिनों तक रहूंगा। अगर वक्त निकालकर एकाध बार आ सको तो मुलाकात हो जाएगी, वरना नहीं। कल सुबह-शाम जब मर्जी हो, एक बार आना···अब और कुछ नहीं कहना है··· बेकार मोह-ममता बढ़ाने से कोई फायदा नहीं है···"

और मोम्बल एक चलती बस पर उछलकर चढ़ गया। एक क्षण तक वहां खड़ा-खड़ा रातुल सोचता रहा। जीवन के बीच का हिस्सा अगर दुःस्वप्न में ही बीता है तो बीते। उसके बारे में ज्यादा दुखित होने की जरूरत नहीं है। मोम्बल वैसा ही व्यक्ति है। उसके साथ जितने दिन गुजरे—उसकी स्मृति जीवन में अमर बनकर रहे। किसी भी दिन उसने रातुल के नाम तक को जानने की उत्सुकता व्यक्त नहीं की। इस तरह अजनबी व्यक्ति को प्यार करना उसे किसने सिखाया? किस स्कूल में उसे शिक्षा मिली, कौन उसका शिक्षक रहा? आदमी की दुनिया से रातुल का कहां तक साक्षात्कार हो ही पाया है! अधिक जानने और देखने का गर्व उसे नहीं है, लेकिन उसे लगा कि तमाम दुनिया में ऐसे व्यक्ति बहुत ही कम हैं।

रातुल ट्राम के अन्दर पहुंचा। अभी साढ़े सात बजे बाबूजी से यूनिवर्सिटी इंस्टिट्यूट में भेंट होगी। सभा में जब वह भाषण दे चुके होंगे, वह उनसे मिलेगा। उसके पहले नहीं। चाहे जो हो, बाबूजी बहुत ही चौंकेंगे। हां, जरूर ही चौंक उठेंगे। शुरू में वह कहेंगे : 'तुम कौन हो?'

रातुल कहेगा, 'मैं रातुल हूं, बाबूजी! मैं रातुल हूं। मेरी मृत्यु नहीं हुई है। आप लोग मेरे बारे में बहुत ही गलतफहमी में रहे। कितनी दिलचस्प बातें हैं···'

'क्या कह रहे हो तुम! रातुल!! रातुल!!!'

उस चलती ट्राम के सेकिंड क्लास के एक कोने में बैठे रातुल की आंखों के सामने जैसे नित्यानन्द सेन सशरीर उपस्थित हो गए। बहुत साल पहले का देखा हुआ चेहरा हूबहू वैसा ही था। वैसे ही स्नेह के प्रगाढ़ आलिंगन को

परितृप्ति से प्रोफेसर की आंखें मुंद गईं। विरह-व्याकुल बाप के सीने में रातुल ने अपना मुंह छिपा लिया। और उसके बाद दोनों की मानस दृष्टि से एक ही क्षण में भूत-भविष्य-वर्तमान, त्रिभुवन, सृष्टि के समग्र चराचर ओझल हो गए। रातुल को लगा, इस दुनिया में कोई नहीं है। दुःख, शोक और दुःस्वप्नों से पूर्ण यह धरती अकस्मात् जैसे बहुत ही प्रिय आवास बन गई है। वह फिर से उस विशाल वक्ष के निरापद आश्रय में—स्नेह के डैनों पर—निश्चिन्तता के साथ चिन्तारहित होकर जीवन जी लेगा।

कोल्हूटोला, कोल्हूटोला···

ढन-ढन, ढन-ढन···

१४

रातुल चलती हुई ट्राम से उतर चुका था। यहां से कॉलेज स्क्वायर होकर एक पगडंडी जाती है। इंस्टिच्यूट के पास पहुंचने के बाद रातुल को थोड़ी हैरत महसूस हुई। बाहर बहुत आदमी इकट्ठे होकर गपशप कर रहे थे। अन्दर से बहुत आदमी बाहर निकल रहे थे। कहीं कोई तारतम्य नहीं था। क्या बात है! मीटिंग खत्म हो चुकी? रातुल ने एक आदमी से पूछा, "क्या बात है भाई साहब?"

"मालूम नहीं भैया! अफवाह तो बहुत तरह की सुनने में आ रही है।" वह भला आदमी एक ओर सरक गया।

बाहर दीवारों पर तब भी सभा के कई विज्ञापन चिपके पड़े थे। चिल्लाहट, शोरगुल और हो-हल्ला ने परिवेश को दबोच लिया था।

रातुल ने एक दूसरे व्यक्ति से पूछा, "भाई साहब, मीटिंग का क्या हुआ? आज नहीं होगी?"

"नहीं भाई, आज नहीं होगी। न केवल आज बल्कि कभी नहीं होगी।" और वह व्यक्ति अपने गंतव्य की ओर चला गया। भीड़ आहिस्ता-आहिस्ता कम होती जा रही थी।

रातुल ने एक तीसरे व्यक्ति के सामने वही प्रश्न उछाला, "मीटिंग नहीं

होने जा रही है, भाई साहब ?"

उस व्यक्ति ने एक बार रातुल के चेहरे पर अपनी निगाह दौड़ाई। इस उम्र में परलोक के सम्बन्ध में कौतूहल होना सचमुच व्यतिक्रम ही है। उस व्यक्ति ने कहा, "कहां से आ रहे हो, भाई ?"

"क्यों ?" रातुल ने पूछा।

"नहीं; यों ही पूछ रहा हूं। अगर तुम्हारा मकान दूर है तो अभी तुरन्त घर लौट जाओ। मीटिंग-वीटिंग की उम्मीद छोड़ो। जितनी तरह का बोगस कारोबार है, सब बंगाल में ही चलता है। इस तरह का मिलावटवाला देश तीनों लोक में कहीं नही मिलेगा।"

उस ओर बातचीत करते हुए कई आदमी चले जा रहे थे।

"अरे, अब तक सिर्फ दूध और घी में ही मिलावट चल रही थी। अब देख रहा हूं कि विद्या-बुद्धि, लिखना-पढ़ना, डिग्री-डिप्लोमा वगैरह में भी मिलावट का दौर चल रहा है। न, दुनिया मे किसी पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता है। जो कुछ हो, किताबों को बेच-बेचकर भले आदमी ने खूब पैसा कमा लिया है। एक-एक किताब के पांच-पांच संस्करण हो चुके हैं। सब धोखा-धड़ी है…"

तमाम बातों और चर्चाओं को सुनकर रातुल जैसे हतप्रभ हो गया। फिर बाबूजी मीटिंग मे नही आए ? हर कोई बाबूजी के बारे मे ही चर्चा कर रहे हैं ! क्या बोगस है ? किसने धोखेबाजी की ? उसके पिता ने ? प्रोफेसर नित्यानन्द सेन ने ? जो जीवन मे कभी झूठ नही बोले—उन नित्यानन्द सेन ने ? जिसने कभी दफ्तर की दवात-कलम से एक चिट्ठी तक न लिखी ! उस सत्यवादी, दार्शनिक, लोभहीन, अनासक्त व्यक्ति के बारे में ही ये लोग बतिया रहे हैं !

रातुल अब अपनी उत्सुकता को दबाकर रख नहीं सका।

उसने पूछा, "प्रोफेसर नित्यानन्द क्या आज मीटिंग मे नही आए, साहब ?"

लोगों की जमात मे से एक व्यक्ति ने कहा, "नही भैया, नहीं आए। अब आकर कौन-सा मुह दिखायेंगे ?"

"क्यों ?" रातुल की उत्सुकता मे तीव्रता थी। उसकी सांसें जैसे अटक रही थीं।

"अरे, भाई मेरे, जिस पुत्र को केन्द्र बनाकर परलोक की इतनी चर्चा कर रहे थे, डिग्रियां बटोरी हैं, मोटी-मोटी पुस्तकें लिखी हैं—असल में उस लड़के की मौत हुई ही नहीं है। इतने दिनों के बाद वही लड़का घर लौट आया है। अब शर्म के मारे मुंह कैसे दिखाएं! खुद भी बेवकूफ बने और तमाम युनिवर्सिटियों को बेवकूफ बनाया। छिः छिः! यकीन न हो तो उनके शंभुनाथ पंडित लेन के मकान में जाकर देख आओ।"

अब रातुल ने एक क्षण भी देर न की, वह बस में जाकर बैठ गया।

आधा घंटे के बाद रातुल बस से उतरकर शंभुनाथ लेन के मकान के सामने पहुंचा। जाकर उसने देखा कि वहां लोगों की बहुत बड़ी भीड़ लगी है। रात के अंधेरे में बहुत आदमी घर के दरवाज़े के सामने खड़े होकर बातचीत कर रहे हैं।

शंभुनाथ लेन अब पहले जैसा न रहा। पहले गैस की बत्तियां जला करती थीं। अब जहां-तहां दो-चार दुकानें खुल गई हैं। उन दुकानों से रोशनी आकर रास्ते पर फैली थी।

रातुल घर के सामने पहुंचकर खड़ा हो गया।

सामने काफी लोगों का जमघट था। उस जमघट ने छोटी-मोटी भीड़ का रूप ले लिया था। सभी लोगों के सामने गोविन्द खड़ा था। गोविन्द हाथ-मुंह नचा-नचाकर कुछ कह रहा था।

गोविन्द का चेहरा कैसा हो गया है! जैसे वह पहचान ही में नहीं आ रहा है। पहले देखने में कैसा मोटा-तगड़ा था! उसकी तोंद बहुत बड़ी थी। तोंद को ऊपर की ओर किए वह लेटा करता था। जब गोविन्द की तबियत खुश रहती, दोपहर के वक्त बरामदे पर लेटा-लेटा वह बायें हाथ को सीने पर और दाहिने हाथ को तोंद पर रखकर उंगलियों से एकाग्र होकर तबला बजाता था। मुंह से तबले का बोल निकलता था: तागे नाधिन नागेधिन, त्रे केटे ताक, त्रे केटे ताक ताक ताक, तागे नाधिन नागेधिन…

दोमंजिले के उपरले कमरे से, कबूतर की गूटरगूं-गूटरगूं जैसे, गोविन्द की तोंद के तबले के बोल सुनाई पड़ते थे।

वह तोंद अब बिलकुल चिपक गई है। देह का कसाव ढीला पड़ने लगा है। रंग और भी काला हो गया है।

गोविन्द चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा था :

"हुजूर, आप लोग मुझ पर नाहक ही दोष मढ़ रहे हैं। मैं कौन होता हूं ? मैं इस घर का नौकर हूं। हुक्म का बन्दा। मालिक का अन्न खाता हूं, मालिक का हुक्म मानना पड़ेगा। जब आप लोगों का अन्न खाऊंगा तो आप लोगों का भी···"

पता नहीं भीड़ में से कौन बोल उठा, "तुम एक बार जाकर देखो न ! कहो कि राखाल बाबू आए हैं। क्या कहते हैं, लौटकर मुझे बताओ।"

गोविन्द भी हार माननेवाला जीव न था। बोला, "हुजूर मैं गया था। मेरी बात किसी ने सुनी नहीं। अन्दर से सिटकनी बंदकर क्षितीन बाबू और मेरे मालिक मुन्ना से बातचीत कर रहे हैं। अभी मेरी बात पर कौन ध्यान देगा, सरकार ! मैं ठहरा मामूली नौकर !"

फिर भी उस भलेमानस ने विरोध किया, "तुम लोगों का मुन्ना लौट आया है ? उसकी मृत्यु नहीं हुई थी ?"

गोविन्द ने अपनी जीभ दांत से काट ली, "शिव-शिव ! मरेगा क्यों हुजूर ! कामाक्षा जाने से जिस तरह टोना-टोटका किया जाता है, ठीक उसी तरह के टोने-टोटके से अब तक रोक रखा था।"

किसी एक व्यक्ति ने कहा, "फिर इसके बारे में इतनी किताबें लिखना, उतना भाषण देना···"

एक दूसरे व्यक्ति ने कहा, "अहा-हा, उसे यह सब कहने से फायदा ही क्या है ?"

"आप ही बताएं !"

गोविन्द को जैसे अब कोई सहारा मिल गया था।

"आप ही बताएं ! मैं मामूली एक नौकर हूं या नहीं ? मालिक ने कड़ी हिदायत दी है कि किसी को अन्दर मत आने दो। अभी मैं आप लोगों को अन्दर जाने दूं तो मेरी नौकरी ही चली जाएगी। फिर मुझे कौन-सा सहारा मिलेगा ? इस बुढ़ापे में मुझे कौन नौकरी देगा ? या कि मेरे पास जमींदारी है जो उसको ही भंजा-भंजा कर खाऊं !"

रातुल तब खड़ा-खड़ा गोविन्द की बातें सुन रहा था और उसकी भंगिमाओं को निहार रहा था। गोविन्द के पहले के चेहरे में बदलाव आ[illegible] है,

वातूनी वह पहले जैसा था आज भी वैसा ही है।

चाहे जो हो, बड़ा ही मज़ा आ रहा है।

रातुल सजकर कौन आया है ? जाली प्रतापचांद है क्या ? भवाल संन्यासी की तरह मंझले राजकुमार का अविर्भाव हुआ है ? सचमुच बड़ा ही मज़ा आ रहा है । यह तो जैसे रातुल के जीवन के संदर्भ में जासूसी उपन्यास की शुरुआत हुई है। रातुल को बड़ी हंसी आई।

किसने सोचा होगा कि घटनाचक्र में इस तरह का बदलाव आएगा ?

रातुल ने भीड़ को ठेलकर आगे बढ़ने की कोशिश की।

"गोविन्द···ऐ गोविन्द···" उसने पुकारा।

पुकार संभवतः गोविन्द के कानों में पहुंची।

वह बोला, "अभी गोविन्द किसी की भी बात नहीं सुनेगा, भाई। मैं किसी से भी बातचीत नहीं कर सकता हूं। मैं ठहरा हुक्म का बन्दा। जैसा हुक्म मिलेगा वैसा ही करूंगा। मैं किसी की बात सुनूं ही क्यों ?"

रातुल ने एक बार कहना चाहा : 'गोविन्द, इधर सुनो। मैं रातुल हूं—मैं ही असली रातुल हूं।' मगर वह बोल नहीं सका। पता नहीं, उसने अपने मन में क्या सोचा। इसका अंतिम परिणाम देखना चाहिए। आखिर बातों का सिलसिला कहां तक पहुंचता है ! जिसकी तमाम ज़िन्दगी अभी बाकी पड़ी है उसे इतनी जल्दबाज़ी करने की ज़रूरत ही क्या है ? किसी झूठ को हमेशा के लिए सत्य कहकर नहीं चलाया जा सकता है—यह बात उसने अपने पिता से ही सीखी है। जो धोखा है वह कभी न कभी पकड़ में आ ही जाएगा। किसी दिन सारी बातें मालूम हो जाएंगी। तब मज़ा आएगा।

रातुल उस अंधेरी गली में भीड़ के बीच एक तरफ खड़ा होकर दिलचस्पियां लेने लगा।

१५

ज़ीने पर चढ़ते ही बायीं तरफ एक कमरा है। वह कमरा आमतौर से

किसी काम में नहीं लाया जाता है। उस कमरे में बेकार की तमाम चीज़ें भरी हैं। उसके ठीक बाद के कमरे में सिटकनी बन्दकर नित्यानन्द सेन बैठे हैं। वह युवक एक कुरसी पर बैठा है। क्षितीनमोहन बाबू सामने बैठे उससे बातचीत कर रहे हैं।

क्षितीन बाबू बोले, "सच बोलने में तुम्हारी कौन-सी हानि होती है, मुन्ना ?"

"मैं सच-सच ही कह रहा हूं।"

युवक ने सिर झुकाकर यह बात कही।

"लेकिन यह मकान, यह कमरा तुम्हारा है न ? यह बात तुम स्वीकार कर रहे हो न ? अपने बाप की ओर आंख उठाकर देखो। तुम्हारे बारे में सोचते-सोचते उनका चेहरा कैसा हो गया है ! तुम्हारे दिल में थोड़ी भी माया-ममता नहीं है ? इतने दिनों तक लिखने-पढ़ने के बाद आदमी बनकर तुमने यही तालीम पाई ?"

युवक के मुंह से एक भी शब्द न निकला।

"और एक बात !"

क्षितीन बाबू कुरसी खींचकर और निकट सरक आए।

"और एक बात ! सड़कों की धूल छानते-छानते तुम्हारे चेहरे की जो हालत हो गई है, देख ही रहा हूं। मेरी पीठ पर बैठकर तुम कितने ही दिन खेल चुके हो। तुम वही रातुल हो। यह तुम कैसा सर्वनाश कर रहे हो ! न केवल अपना बल्कि बाप का भी सर्वनाश कर रहे हो। लेकिन अगर तुम 'बाबूजी' कहकर उन्हें एक बार पुकारो तो सारा झमेला खत्म हो जाए। देख ही रहे हो कि वह अपना मुंह ढंककर तब से दूसरी तरफ आंखें टिकाए बैठे हैं। लेकिन अभी अगर तुम उन्हें पुकारो तो सब भूलकर वह तुम्हें छाती से लगा लेंगे।"

थोड़ी देर बाद क्षितीन बाबू ऊबकर बोले, "खैर, तुम आज रात सोचकर देखो। तमाम रात सोचकर देखो। खाओ-पियो। बिस्तर पर सोओ। बहुत दिनों से तुम आराम से सो भी नहीं सके हो। उसके बाद, उसके बाद अगर तुम्हें लगे कि यह सब तुम्हारी भलाई के लिए ही कहा जा रहा है, तो मेरी बात का उत्तर देना। क्या नित्यानन्द, ठीक कह रहा हूं न, भाई ?"

क्षितीन बाबू कुरसी से उठकर नित्यानन्द के पास गए। वह दोनों हाथ

से अपना मुंह छिपाए बैठ थे।

निकट जाकर क्षितीन बाबू ने कहा, "अभी उसे परेशान करने की कोई जरूरत नहीं। उसे थोड़ा आराम करने दो। लगातार सवाल करने से वह नर्वस हो जाएगा। इसके अलावा अपने घर में दो दिन रहने के बाद उसे पुरानी बातें याद आएंगी। मां की याद आएगी। देखने-सुनने के बाद नशा दूर हो सकता है। साधु-संन्यासी होना वास्तव में एक तरह का रोग ही है। गिरीन्द्रशेखर से पूछो। उसे मालूम है। अरे, इस जीवन में कितना कुछ देख-सुन चुका हूं, भाई!"

उसके बाद कुछ सोचकर बोले, "तुम सुधीर को पहचानते हो न जी?—सुधीर चटर्जी—जो हम लोगों का क्लास-फ्रेंड था? दस-दस बच्चों का बाप है, रुपये-पैसे की कोई कमी नहीं। वहीं हम लोगों का सुधीर, जी! पहचान नहीं पा रहे?"

नित्यानन्द ने एक भी बात का उत्तर न दिया।

क्षितीन बाबू ने बातचीत का प्रसंग बदलकर कहा, "मन खराब कर क्या करोगे भाई? कुछ मत सोचो। मैं तो हूं ही। देखना, तुम्हारे घर का लड़का घर में ही रहेगा। चिन्ता की कोई बात नहीं है।"

फिर भी नित्यानन्द जिस तरह बैठे थे उसी तरह सिर झुकाए चुपचाप बैठे रहे। क्षितीन बाबू जैसे किसी पाषाण-स्तूप से बातचीत कर रहे थे। युवक जिस तरह निर्विकार-निर्विरोध था, उसका बाप भी उसी तरह समाधि में लीन होकर किसी अचैतन्यलोक में पहुंच गया था। दोनों के दरमियान एकाकी क्षितीन बाबू जीवित हैं, जाग्रत हैं। लेकिन अगर वह अभी हार मान लें तो नहीं चलेगा। हालांकि रातुल इतने दिनों के बाद लौटा है, लेकिन उसकी मृत सत्ता उन लोगों के किस काम में आएगी?

नित्यानन्द को फिर से दुनियादारी करनी है। रातुल और भी अधिक सिर ऊंचाकर बाप के यश-सम्मान, संपत्ति, प्रतिभा और प्रतिष्ठा का उत्तराधिकारी होगा। तभी बाप का मुंह उज्ज्वल हो सकेगा।

"कौन?" क्षितीन बाबू ने बाहर की ओर देखा।

सिटकनी बन्द दरवाज़े के बाहर से जवाब आया, "मैं गोविन्द हूं।"

"क्या खबर है? सभी चले गए?"

"जी हां, सभी चले गए हैं ?"

"बाहर अब कोई गड़बड़ी वगैरह तो नहीं ?"

"जी नहीं।"

"अब तुम्हें एक काम करना है गोविन्द। झटपट मेरे घर जाकर एक खबर पहुंचानी है। हो सकता है कि घर पर सभी चिन्तित हों। खबर पहुंचा आओ कि मुझे लौटने में आज रात हो जाएगी। इन लोगों के लिए खाने-पीने का इन्तज़ाम करके खिला-पिला लेने के बाद ही मुझे फुर्सत मिलेगी।"

"खाना तैयार है सरकार। बाबू से पूछें कि अभी उनके लिए खाना ले आऊं ?"

इतनी देर के बाद नित्यानन्द के मुंह से आवाज बाहर आई। सिर झुकाए ही कहा, "आज मैं खाना नहीं खाऊंगा।"

"क्यों ?" गोविन्द के स्वर में उद्विग्नता थी।

"अभी जाओ..."

"लेकिन मुन्ना बाबू ? बच्चा आदमी बिना खाए कब तक रहेगा ?"

नित्यानन्द ने कोई उत्तर नहीं दिया।

उनके बदले क्षितीन बाबू ने जवाब दिया, "अच्छा होता अगर तुम खाना खा लेते नित्यानन्द !"

नित्यानन्द ने धीमी आवाज में कहा, "मुझे भूख नहीं है।"

उसके बाद शंभुनाथ लेन में रात गहराने लगी। रातुल ने एक सूराख से देखा कि गोविन्द कमरे का दरवाजा खोलकर बाहर आया। उसके बाद वह सीधे पूरब की ओर चल दिया। रास्ता बिलकुल वीरान था। रातुल चुपचाप घर के अन्दर घुस गया।

रातुल को लगा, हर पग पर उसे जैसे रोमांच का अनुभव हो रहा है। दोनों तरफ का अंधेरा उसका परिचित था। अंधकार के इस दायरे से उसकी जैसे बहुत दिनों से जान-पहचान है। बचपन में उस अंधेरे ने उसे बहुत बार डराया है। और कभी-कभी उसी अंधेरे की ओर देखते रहना उसे अच्छा लगा है। इन्द्रधनुष के सात रंगों से मिला-जुला यह अंधेरा। लगता, उंगलियों से स्पर्श करते ही अंधकार रुनझुन शब्द कर उठेगा। मानो सतरंगी परी के पांवों

के घुंघरू के वोल हों। वड़े ही अजीव किस्म से वह डराता भी था। सोने के कमरे की छोटी खिड़की से आंगन के कोने की ओर ताकते ही उसे लगता कि वुढ़िया डायन उसकी तरफ विस्फारित नेत्रों से ताक रही है। वुढ़िया डायन के कपाल पर सिंदूर हुआ करता था, कौड़ी की तरह सफेद उसकी आंखें हुआ करती थीं और जूट की वटी रस्सी की तरह खिचड़ी वालों से सिर भरा होता था।

सदर दरवाज़ के पल्ले जिस तरह उढ़के हुए थे, उसी तरह उढ़काकर रातुल ने सीढ़ियां तयकर रेलिंग पर हाथ रखा। पहचाने हाथ के स्पर्श से रेलिंग जैसे चौंक पड़ी। कहीं कोई वदलाव नहीं आया है। तुम लोग भई, वैसे ही हो न? उसी तरह हो न? और रेलिंग की सलाखें? वीच-वीच में एकाध टूट गई थीं। सवकी सव वैसी ही हैं। लाठी से मैंने तुम पर कितना ही प्रहार किया है। हां, उस वक्त जव तुम लोग पढ़ाये पाठ को वता नहीं पाती थीं। देखने में तो शान्त-शिष्ट, भले आदमी की वच्चियों जैसी लगती थीं, लेकिन तुम्हारे अन्दर वेहद शरारत भरी थी। मास्टर की कोई परवाह नहीं! उन सीढ़ियों से चढ़ने और उतरने के क्रम में कितनी ही वार उसके पैर फिसले थे। रेलिंग की तमाम सलाखें उसकी छात्राएं थीं और रातुल उन लोगों का मास्टर साहव था।

सीढ़ियों से दोमंजिले पर चढ़ता हुआ रातुल मन ही मन हंस पड़ा। याद आने से हंस देना स्वाभाविक ही है।

उस दिन फुटवॉल खेलकर लौटने में काफी देर हो गई थी। रसा के मैदान में खेलने गया था। हाथ-पैर और कुरते में कीचड़ लग गया था। मन में मतलव गांठा था कि सभी की आंखों में धूल झोंककर आहिस्ता-आहिस्ता वह अन्दर चला जाएगा और कपड़ा-लत्ता वदल लेगा।

"कौन? उधर से कौन जा रहा है?" पीछे से गोविन्द की आवाज सुनाई पड़ी थी।

गोविन्द से कतराकर तेजी से दौड़ने के क्रम में सीढ़ी के मुहाने पर आकर वह खड़ा हो गया था। वावूजी सामने ही थे। उसने जैसे भूत देख लिया था।

वावूजी ने कहा, "गोविन्द, आकर देखो। यह किसका वच्चा है?"

राख फेंककर सूप लिए गोविन्द आया और उसकी नजर मुन्ना पर पड़ी।

"हम लोगों का मुन्ना बाबू।"

"नहीं; तुम गौर से देखो गोविन्द। तुमने जरूर ही गलत देखा है।" नित्यानन्द सेन सिर हिलाने लगे थे।

"आप क्या कह रहे हैं बाबू! यह हम लोगों का मुन्ना बाबू ही है, कोई दूसरा नहीं।"

"तुम बेकार की बातें करते हो गोविन्द! मेरा मुन्ना होता तो इस तरह कीचड़ सने कपड़े से लौटता? गोविन्द की बात बगैर सुने छिपकर भागता? कभी नहीं। यह मेरा मुन्ना नहीं है। तुम अच्छी तरह से देखो गोविन्द। शायद तुम्हारी आंखें खराब हो गई हैं। अहा-हा, इसी उम्र में तुम्हारी आंखें खराब हो गई?"

"आप क्या कह रहे हैं बाबू! देखिए, अच्छी तरह देखिए।" इतना कहकर उसने ज्यों ही रातुल का चिबुक पकड़ना चाहा कि रातुल रोता हुआ बाबूजी के पैरों पर गिर पड़ा।

"मैं फिर कभी ऐसा नहीं करूंगा बाबूजी! कभी नहीं..."

बाबूजी की सीख देने की रीति इसी तरह की थी। कभी गुस्से में नहीं आते थे, डांटते-डपटते नहीं थे, धमकिया नहीं देते थे। कभी किसी तरह का अन्याय करने से रोकते नहीं थे। बाबूजी उसके मित्र थे। कितने ही दिन दोनों एक साथ दोमंजिले के बरामदे पर फुटबॉल खेलते थे। खेलते-खेलते वह बाबूजी को हरा देता था। बाबूजी के साथ गोली के खेल में उनकी तमाम गोलिया जीत ली थी। 'चोर-पुलिस' के खेल में बहुधा बाबूजी को ही चोर बनना पड़ता था। उसी बाबूजी को और-और वक्त में रातुल जैसे पहचान ही नहीं पाता था। बाबूजी अलस् सुबह सोकर उठा करते थे। एक दिन अचानक नींद टूट गई थी। तब सूर्योदय नहीं हुआ था। रजाई से निकलकर जब वह बगल के कमरे में आया तो देखा कि बाबूजी एक बड़े 'महाभारत' को पढ़ने में व्यस्त हैं। चारों ओर धूप जल रही है। वह खाली बदन हैं, पहनावे में तसर। माथा झुकाए पढ़ने में व्यस्त हैं, कोई आवाज नहीं, कहीं किसी दूसरी ओर ध्यान नहीं। एकमात्र अपने मन के अतल में खोए हुए हैं।

कभी-कभी साहस करके जब वह बगल से गुजरने लगता, आंखों को पुस्तक पर ही टिकाए बाबूजी दाहिने हाथ से रातुल को अपने पास खींच

लेते थे। पढ़ने का क्रम फिर भी नहीं रुकता था।

वहुत देर के वाद पढ़ना खत्मकर वावूजी पुस्तक को वन्द कर देते और रातुल से कहते, "सवेरे जगना वड़ा अच्छा होता है मुन्ना।"

"मैं हर रोज़ भोर के वक्त उठकर पढ़ा करूंगा।"

वावूजी कहते, "उठना अच्छा लगे तो उठा करो वरना नहीं। इससे तुम्हारी सेहत खराव हो जाएगी।"

रातुल सोकर भोर में उठ नहीं सका था। लेकिन आश्चर्य की वात है कि वावूजी ने इसके लिए कभी तंग नहीं किया। हालांकि रातुल यह अच्छी तरह जानता था कि भोर में उठकर पढ़ने से वावूजी वहुत ही खुश होंगे।

फिर भी रातुल को लगता कि वह अपने वावूजी को पूरे तौर से प्राप्त नहीं कर सका है। उसके मन में संतोप नहीं होता था। छुट्टी के दिनों में दोपहर के वक्त जव कोई घर पर नहीं होता, भूगोल के नक्शों को देखते-देखते उसका मन कलकत्ते की सड़क को तयकर चील की पांखों का सहारा लिए एशिया माइनर पार करता हुआ, सिंगापुर, फिलिपाइन तथा दूसरे-दूसरे द्वीपों को लांघता हुआ उत्तरी ध्रुव के पेंगुइन और एस्किमो लोगों के देश में जाकर रुकता था। उसके वाद फिर उत्तरी ध्रुव को पारकर कहां किस रहस्य लोक के अन्दर, महल के अन्दर जाकर खो जाता, किसी को इस वात का पता नहीं चलता था।

उसके वाद जव रातुल थोड़ा वड़ा हुआ, उसकी वातें किसी की समझ में नहीं आने लगीं।

उस दिन जव खिदिरपुर घाट से जहाज रवाना हो गया, कोई भी परिचित चेहरा जेटी पर आकर उसे विदा करने नहीं आया। आता तो देखता कि जहाज़ के अनगिन पोर्ट-होलों में एक के अन्दर एक चेहरा है जिसकी निगाह किसी खास ओर अटकी हुई नहीं है। किन्तु उसकी एक आंख में हंसी है और दूसरी आंख में आंसू।

१६

रातुल आहिस्ता-आहिस्ता सीढ़ियां तय करता हुआ ऊपर पहुंचा। यहां कुछ धुंधलका रेंग रहा था। दूर आकाश की चांदनी में अंधेरा राख के जैसा हो गया था।

पहले का सुग्गा अब भी पिंजरे में झूल रहा था।

रातुल ने अचानक स्वयं को छिपा लेने की कोशिश की। अभी उसको देख लेगा तो टायं-टायं करना शुरू कर देगा। इतने दिन हो चुके हैं, अब पहले की तरह नाम लेकर पुकारने में हो सकता है कि सिसकारी नहीं दे। हो सकता है कि अब डर जाए। चिड़ियां तो अंधेरे में भी देख पाती हैं।

लेकिन जब वह छिपने जा रहा था तो उसे एकाएक याद आया कि गंगाराम की मृत्यु तो बहुत पहले ही हो चुकी है। उसे याद ही नहीं था। तो फिर उसकी याददाश्त पूरी तरह वापस नहीं आई है?

गंगाराम। बहुत दिन पहले की बात है। गोविन्द उस चिड़िया को अपने देस से ले आया था। तब कुल मिलाकर रातुल का जन्म हो चुका था। मां से बिछुड़े रातुल और गंगाराम को जिलाये रखने की जिम्मेदारी गोविन्द ने एक ही साथ ली थी।

रातुल को हर कोई 'मुन्ना' कहकर पुकारता था।

गंगाराम ने सुन-सुनकर सीखा, "मुन्ना, ए मुन्ना..."

लेकिन उसकी विद्या की दौड़ बस यहीं तक थी। रातुल ने प्रथम भाग समाप्त कर आहिस्ता-आहिस्ता 'फर्स्टबुक' पढ़ना शुरू किया, गंगाराम ने तब ककहरा भी समाप्त न किया था। वही गंगाराम एक दिन मौत के मुंह में समा गया। और रातुल? वह तो मर ही चुका है। जो जिन्दा है वह है केस नम्बर ४६।

गंगाराम की मृत्यु की घटना अब भी जैसे आंखों के सामने नाच रही है।

गोविन्द पिंजरा उतारकर गंगाराम को नहला रहा था। एकाएक वह

फूट-फूटकर रोने लगा। रुलाई सुनकर ऊपर से सभी नीचे उतर आए। देखा, गंगाराम पिंजरे के अन्दर की सलाख से छिटककर नीचे करवट के वल पड़ा है। उफ, गोविन्द कितना फूट-फूटकर रो रहा था! रातुल को महसूस हुआ था कि उसकी छाती फटकर वाहर आ जाएगी। वह था और था गंगाराम। लेकिन गोविन्द ने अन्ततः उसे कालीघाट की आदिगंगा में ले जाकर फेंक दिया।

याद है, उस रात रातुल को ठीक से नींद नहीं आई। उसे सिर्फ यही महसूस होता रहा कि गंगाराम को क्यों नहीं वचाया गया। घर में दैनिक युगवार्ता अखबार आया करता था। उस दैनिक युगवार्ता के प्रथम पृष्ठ पर सुर्खियों में विज्ञापन निकलता था :

'मरे हुए आदमी को जिलाने का उपाय विजली सॉलेशन।'

चाहे कोई आदमी हो, चाहे जीव-जन्तु ही क्यों न हो, बिजली सॉलेशन के गुण के कारण मरने के वाद फिर से जी सकता है। वह विज्ञापन हर रोज कई सालों तक देखने के वाद ज़वानी याद हो गया था। एक ही अखवार के एक ही स्थान में एक ही तरह की भाषा में एक जैसे विज्ञापन में कौन-सा मोह है, पता नहीं। उस दिन रातुल के शिशु-मन में यह प्रश्न उठा था कि गंगाराम को 'विजली सॉलेशन' क्यों नहीं खिलाया गया। ऐसा होता तो गंगाराम फिर से जी उठता।

एकाएक सदर दरवाज़े को खोलने जैसी आवाज़ हुई।

रातुल हड़वड़ाकर सीढ़ी की वगल के कमरे के अन्दर घुस गया। लगता है गोविन्द लौट आया है।

इस कमरे में जैसे वहुत दिनों से किसी ने कदम नहीं रखा है। रातुल की मां संभवतः इसी कमरे में रहती थीं। अभी उसकी हालत देखकर लगा कि इस कमरे में विभिन्न प्रकार की वस्तुएं रखी हुई हैं। कमरा विलकुल अंधेरा है। पल्ले उढ़के हुए थे। पल्लों को ठेलते ही कॅंच-कॅंच जैसी आवाज हुई और फिर वह आवाज़ थम गई। देखूं तो सही। वगल के कमरे में रोशनी जल रही है। शायद वहीं चर्चा चल रही है। सभी एक जटिल समस्या में उलझे हुए हैं।

लेकिन अगर कोई इस कमरे में आ जाए तो? फिर सर्वनाश ही हो

जाएगा।

दुत्, सर्वनाश की कौन-सी बात है ! तुम अपने घर मे आए हो, इस घर पर तुम्हारा अधिकार है ! होगा ही क्या ! न तो जेल होगी, न हवालात ही भेजा जाएगा। जो जाली रातुल है वही यहा से विदा होगा।

सीढी पर किसी के भारी पैरों की आहट होने लगी। रातुल ने क्षण बीतते-न बीतते स्वयं को संयत कर लिया। उसके बाद जब कही कोई आवाज नही रही, कुरसी को हटाकर एक बड़े सूटकेस के पास जाकर बैठ गया। दोनों कमरो के बीच एक दरवाजा है। दरवाजे के एक छोटे सूराख से उसने दूसरे कमरे में निगाह दौड़ाई। शुरू में साफ-साफ दिखाई नहीं पड़ा।

उसके बाद उसके मन में पता नही क्या विचार आया कि उसने सूटकेस को ठेलकर हटा दिया।

एक बड़ा सूराख दीख पड़ा। उस सूराख से झांकते ही रातुल को हैरानी महसूस हुई। उधर क्षितीन बाबू हैं और पीछे की ओर मुह घुमाये बाबूजी आराम-कुरसी पर लेटे हुए हैं। और जो फर्श पर बैठा है वह कौन है ? लगता है वही जाली रातुल है।

आश्चर्य की बात है ! एकाएक रातुल को खुशियो के मारे इच्छा हुई कि वह कूद पड़े। अरे, यह तो हरिदास है ! ···भवतोष बाबू का मित्र हरिदास !

अब रातुल के सामने तमाम रहस्य स्पष्ट हो गया। छि:-छि:, इसीके चलते इतना काड ! जब वह अपने आपको प्रकट करेगा तो सभी की धारणा बदल जाएगी। व्यर्थ ही बेचारे हरिदास को लेकर खींचतान चल रही है। वह तो संन्यासी ठहरा। दुनियादारी उसे अच्छी नही लगती। वह भवतोष बाबू से यह बात सुन चुका है। अगर ऐसा न होता तो वह भवतोष बाबू को अकेला छोड़कर हिमालय की गुफा मे पहुंचने के लिए गायब ही क्यों होता ? घूम-फिर कर वह किस दुनिया के चक्कर में फंस गया !

रातुल ध्यान लगाकर सुनने लगा।

क्षितीन बाबू कह रहे थे, "नखरेबाजी छोड़ो। तुम्हारे लिए एक आदमी मर रहा है, तुमसे बातचीत करने के लिए रात-दिन पागल की तरह प्लानचेट लेकर माथापच्ची कर रहा है, नौकरी छोड़ दी है और तुम···"

बाहर से गोविन्द की आवाज आई, "बाबू !"

फूट-फूटकर रोने लगा। रुलाई सुनकर ऊपर से सभी नीचे उतर आए।
देखा, गंगाराम पिंजरे के अन्दर की सलाख से छिटककर नीचे करवट के बल
पड़ा है। उफ, गोविन्द कितना फूट-फूटकर रो रहा था! रातुल को महसूस
हुआ था कि उसकी छाती फटकर बाहर आ जाएगी। वह था और था गंगा-
राम। लेकिन गोविन्द ने अन्ततः उसे कालीघाट की आदिगंगा में ले जाकर
फेंक दिया।

याद है, उस रात रातुल को ठीक से नींद नहीं आई। उसे सिर्फ यही
महसूस होता रहा कि गंगाराम को क्यों नहीं बचाया गया। घर में दैनिक
युगवार्ता अखबारआया करता था। उस दैनिक युगवार्ता के प्रथम पृष्ठ
पर सुर्खियों में विज्ञापन निकलता था :

'मरे हुए आदमी को जिलाने का उपाय बिजली सॉलेशन।'

चाहे कोई आदमी हो, चाहे जीव-जन्तु ही क्यों न हो, बिजली सॉलेशन
के गुण के कारण मरने के बाद फिर से जी सकता है। वह विज्ञापन हर रोज़
कई सालों तक देखने के बाद ज़बानी याद हो गया था। एक ही अखबार के
एक ही स्थान में एक ही तरह की भाषा में एक जैसे विज्ञापन में कौन-सा
मोह है, पता नहीं। उस दिन रातुल के शिशु-मन में यह प्रश्न उठा था कि
गंगाराम को 'बिजली सॉलेशन' क्यों नहीं खिलाया गया। ऐसा होता तो
गंगाराम फिर से जी उठता।

एकाएक सदर दरवाज़े को खोलने जैसी आवाज़ हुई।

रातुल हड़बड़ाकर सीढ़ी की बगल के कमरे के अन्दर घुस गया।
लगता है गोविन्द लौट आया है।

इस कमरे में जैसे बहुत दिनों से किसी ने कदम नहीं रखा है। रातुल
की मां संभवतः इसी कमरे में रहती थीं। अभी उसकी हालत देखकर लग
कि इस कमरे में विभिन्न प्रकार की वस्तुएं रखी हुई हैं। कमरा बिलकुल
अंधेरा है। पल्ले उढ़के हुए थे। पल्लों को ठेलते ही कॅंच-कॅंच जैसी आवा
हुई और फिर वह आवाज़ थम गई। देखूं तो सही। बगल के कमरे में रोशन
जल रही है। शायद वहीं चर्चा चल रही है। सभी एक जटिल समस्या
उलझे हुए हैं।

लेकिन अगर कोई इस कमरे में आ जाए तो? फिर सर्वनाश ही

जाएगा।

दुत्, सर्वनाश की कौन-सी बात है! तुम अपने घर में आए हो, इस घर पर तुम्हारा अधिकार है! होगा ही क्या! न तो जेल होगी, न हवालात ही भेजा जाएगा। जो जाली रातुल है वही यहां से विदा होगा।

सीढ़ी पर किसी के भारी पैरों की आहट होने लगी। रातुल ने क्षण बीतते-न बीतते स्वयं को संयत कर लिया। उसके बाद जब कहीं कोई आवाज नहीं रही, कुरसी को हटाकर एक बड़े सूटकेस के पास जाकर बैठ गया। दोनों कमरों के बीच एक दरवाज़ा है। दरवाज़े के एक छोटे सूराख से उसने दूसरे कमरे में निगाह दौड़ाई। शुरू में साफ-साफ दिखाई नहीं पड़ा।

उसके बाद उसके मन में पता नहीं क्या विचार आया कि उसने सूटकेस को ठेलकर हटा दिया।

एक बड़ा सूराख दीख पड़ा। उस सूराख से झाकते ही रातुल को हैरानी महसूस हुई। उधर क्षितीन बाबू हैं और पीछे की ओर मुंह घुमाये बाबूजी आराम-कुरसी पर लेटे हुए हैं। और जो फर्श पर बैठा है वह कौन है? लगता है वही जाली रातुल है।

आश्चर्य की बात है! एकाएक रातुल को खुशियों के मारे इच्छा हुई कि वह कूद पड़े। अरे, वह तो हरिदास है!...भवतोष बाबू का मित्र हरिदास!

अब रातुल के सामने तमाम रहस्य स्पष्ट हो गया। छि-छि:, इसीके चलते इतना कांड! जब यह अपने आपको प्रकट करेगा तो सभी की धारणा बदल जाएगी। व्यर्थ ही बेचारे हरिदास को लेकर खींचतान चल रही है। वह तो संन्यासी ठहरा। दुनियादारी उसे अच्छी नहीं लगती। वह भवतोष बाबू से यह बात सुन चुका है। अगर ऐसा न होता तो वह भवतोष बाबू को अकेला छोड़कर हिमालय की गुफा में पहुंचने के लिए गायब ही क्यों होता? घूम-फिर कर वह किस दुनिया के चक्कर में फंस गया!

रातुल ध्यान लगाकर सुनने लगा।

क्षितीन बाबू कह रहे थे, "नखरेबाजी छोड़ो। तुम्हारे लिए एक आदमी मर रहा है, तुमसे बातचीत करने के लिए रात-दिन पागल की तरह प्लानचेट लेकर माथापच्ची कर रहा है, नौकरी छोड़ दी है और सुन..."

बाहर से गोविन्द की आवाज आई, "बाबू!"

"कौन गोविन्द ? आ गए ? घर पर खबर पहुंचा दी ?"

"जी हां।"

इतनी देर के बाद नित्यानंद सेन के मुंह से आवाज बाहर निकली, "तुम खा-पीकर सो रहो गोविन्द !"

"हां-हां; गोविन्द क्यों बैठा रहे ! मगर तुम क्यों नहीं खाना खाओगे नित्यानन्द ?"

"मुझे भूख नहीं है।"

"भूख रहना क्या है ? वह सब पागलपन छोड़ो। लड़का घर लौट आया है, कहां खुशियां मनाओगे कि उसकी जगह..."

बाबूजी ने कोई उत्तर न दिया।

क्षितीन बाबू हरिदास की ओर ताकते हुए बोले, "तुम्हारा भी खाना परोसा जाए। बाबूजी के साथ ही बैठ जाओ। पहले तो तुम लोग एक साथ ही खाना खाने बैठा करते थे। याद है कि तुम नहीं खाते थे तो नित्यानन्द भी भोजन नहीं करता था। यह बात तुम्हें याद नहीं है ?"

उसके बाद क्षितीन बाबू ने गोविन्द को पुकारकर कहा, "मालिक और मुन्ना का खाना एक ही साथ परसो गोविन्द। यह क्या, इतने दिनों के बाद खोया लड़का मिला है और तुम लोगों को फिक्र ही नहीं ?"

हरिदास ने अब अपना माथा उठाया और कहा, "मैं रात में कुछ भी नहीं खाता हूं।"

"अयं यह क्या ! रात में तो तुम हमेशा खाना खाया करते थे।"

"पहले खाता था, लेकिन दीक्षा लेने के बाद से खाना बन्द कर दिया है।"

"दीक्षा ? दीक्षा-वीक्षा भूल जाओ।"

"जी नहीं, दीक्षा नहीं भूल सकता हूं। गुरु का आदेश है..."

"गुरु ? तुम्हारा गुरु कौन है ? चलो, हम सब मिलकर तुम्हारे गुरु के पास चलते हैं। भलेमानस के लड़के को पकड़कर जहरीला मंत्र देते हैं ? तुम्हारा गुरु कहां है ?"

"जी, वह जहां हैं वह स्थान काफी दूर है।"

"सुनूं तो सही, कितनी दूर ?"

"हिमालय के दक्षिण की तराई के जंगल में।"

"ठीक है, वहीं चलें। मैं सब कुछ साबित करके रहूंगा कि तुम्हारा नाम रातुल सेन है, तुम्हारे बाबूजी का नाम नित्यानंद सेन, शंभुनाथ लेन का य मकान तुम्हारा मकान है, तुम अपने बाप को बिना सूचना दिए लड़ाई में भर्ती हुए थे। उसके बाद मालूम नहीं कि तुम कहां और कैसे किसी साधु के शिकंजे में फंस गए और व्यर्थ की दीक्षा ली। हां, मैं सब साबित करके रहूंगा।"

क्षितीन बाबू अब नित्यानन्द सेन के पास जाकर बोले, "साउथ कलकत्ता का डिप्टी पुलिस कमिश्नर मेरा खास दोस्त है। उसे एक बार टेलीफोन करूं चाहे हिमालय में हो या जहां भी कहीं—वह उसे अवश्य ही पकड़ लेगा।"

नित्यानन्द पीछे की ओर मुड़कर बैठे थे। बात सुनकर भी वह ज्यों के त्यों बैठे रहे। अपना हाथ उठाकर इतना ही कहा, "नहीं छोड़ो, जरूरत नहीं।"

क्षितीन बाबू ने कहा, "फिर तुम क्या करना चाहते हो?"

नित्यानन्द सेन ने कहा, "अभी तुम कुछ भी मत करो।"

"मगर मैं यह कहे देता हूं भाई," क्षितीन बाबू ने कहा, "मुन्ना को मौका मिलेगा तो वह घर छोड़कर भाग जाएगा।"

नित्यानन्द बाबू बोले, "मुझे थोड़ा सोचने का मौका दो।"

"इसमें सोचने की कौन-सी बात है?"

"मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है।"

"मगर तुम दोनों को ऐसी हालत में छोड़कर मैं जाऊं ही कैसे? तुम उस तरफ मुंह घुमाए बैठे हो, इधर मुन्ना भी कह रहा है कि वह खाना नहीं खाएगा। तुम्हारे मित्र होने के नाते मुझे यह बरदाश्त हो सकता है?"

"फिर तुम उसे खाना खिलाकर ले आओ। मैं जरा बैठकर सोचूं।"

"ठीक है, सोचो। लेकिन मैं तुम्हें बिना खिलाए नहीं जाऊंगा भाई।" और क्षितीन बाबू ने हरिदास का हाथ पकड़कर उसे उठाया।

"चलो जी, चलो मेरे साथ।" उन्होंने कहा।

"कहां?"

"चलो तो सही?"

हरिदास को जबरदस्ती खींचते हुए क्षितीन बाबू दरवाजा खोलकर बाहर चले गए। उन दोनों के चले जाने के बाद रातुल को लगा कि बाबूजी

बाबूजी की ओर एकटक देखते-देखते रातुल की आंखें भी गीली हो गई। सचमुच वह बड़ा ही निष्ठुर है! उसने निष्ठुर जैसा काम किया है, बाबूजी के स्नेह को अपमानित किया है, मर्यादाहीन किया है।

रातुल उठकर खड़ा हुआ।

अंधेरे में आहिस्ता-आहिस्ता चारों तरफ की चीजों का अन्दाज लगाते हुए दरवाजे से निकलने की कोशिश की। हो सकता है कि अभी शितीन बाबू हरिदास को रसोईघर में ले जाकर उसे खाना खिलाने की जी-जान से कोशिश कर रहे हों। हरिदास की क्या ही नियति है! संसार से विमुख होकर, संन्यासी बनकर किसी गुफा में बैठे ध्यान में डूबे रहने के बजाय वह घटनाचक्र में फंस गया है और विपत्ति के दौर से गुजर रहा है। हो सकता है कि वह अज्ञात-कुल-शील होकर भारत के तीर्थों का परिभ्रमण कर रहा हो। भीड़ में आदमी के संपर्क में आने के कारण ही उसकी ऐसी दुर्गति हो रही है।

रातुल को हरिदास द्वारा लिखी चिट्ठियों की याद हो आई। कहां बंगाल में किसी एक गांव की एक लड़की! नाम शैल। साल पर साल गुजरते गए हैं और वह अपने पल्टू दा को चिट्ठी पर चिट्ठी लिखती गई है। हो सकता है पल्टू दा की चिट्ठी उसे किसी भी दिन न मिले। हो सकता है कि बूढ़ा शिव के मंदिर में उसका पूजा करना सार्थक नहीं हो सके। फिर भी एक बूढ़ी और एक लड़की, हो सकता है कि, आज भी हरिदास की प्रतीक्षा कर रही हो··· हो सकता है मदन के मा-अला रोड पर भवतोष बाबू अब भी इस उम्मीद में हों कि रातुल किसी दिन लौट आएगा। हो सकता है कि उसके मन में उम्मीद हो कि उस दो लाख रुपये को चाहे जो कोई प्राप्त करे लेकिन उसका कुछ न कुछ हिस्सा भवतोष बाबू को देना हो। एक दिन अपने भाई का घर छोड़कर वह इस उम्मीद से विश्व के पथ पर निकल पड़ा कि वह एक स्नेहपूर्ण घर का निर्माण करेगा, लेकिन उसने जहां अपने घर का निर्माण किया वहां मिट्टी की ठोस जमीन नहीं बल्कि बालू है। न वह अपना देश है न अपनी धरती। फिर भी दोस्त होने के नाते जिसे अपने साथ ले गया था वह भी एक दिन आंखों से ओझल हो गया।

हो सकता है, अब रातुल पड़ाव पर आ गया है। पृथ्वी की परिक्रमा

करने के वाद आज जव कि वह अपने कोटर में प्रवेश करने जा रहा है, उसे एक और व्यक्ति की याद आई। वह है भोम्वल।

भोम्वल जिन्दगी भर किस की तलाश में चक्कर काटता रहेगा ?

अपनी मां की तलाश में ?

भोम्वल किस आदर्श से प्रेरित होकर निरुद्देश्य जीवन-यात्रा में सम्मिलित है ?

वह क्या उसका मैजिक है ?

हे ईश्वर, मां के पीछे-पीछे दौड़ लगाना समाप्त हो जाए !

और मैजिक ?

वाज़ीगरी का मोह भी एक दिन समाप्त हो जाए !

आहिस्ता से दरवाज़ा खोलकर रातुल वाहर आया। तमाम वरामदा अंधेरे में डूवा था। वरामदे से होता हुआ वह वगल के कमरे के सामने जाकर खड़ा हुआ। उसके वाद उढ़के पल्लों को निःशब्द खोला और वावूजी के कमरे में प्रवेश किया।

१७

वाहर चल रही वातचीत की आवाज़ से रातुल की नींद टूट गई।

एक आदमी कह रहा था, "सुनने में आया कि वावू का लड़का लौट आया है। कल अखवार में भी देखा था, इसलिए आज देखने आया हूं कि वात सही है या नहीं।"

रातुल की आंखें उस वंद कमरे के गिर्द सतर्कता के साथ दौड़ने लगीं। कल रात इस कमरे में छिपकर उसने जो कुछ देखा था, याद करने की कोशिश की। फिर वह सपना नहीं था, वल्कि सत्य ही था। दरवाज़े के वाहर की सूराख से दिन की रोशनी झांक रही थी। कव उसे थकावट ने दवोचकर नींद की वांहों में डाल दिया था, उसे याद नहीं है। आधी सपने में और आधी जागरण में देखी कल की तमाम वारदातें उसकी आंखों के सामने फिर से तैरने लगीं। भवतोष वावू का मित्र हरिदास कहां गया ? क्षितीन वावू और

उसके बाबूजी प्रोफेसर नित्यानन्द सेन कहां गए ?

अबकी एक दूसरे ही भलेमानस की आवाज सुनाई पड़ी, "मैंने भी अखबार में देखा है। युनिवर्सिटी इंस्टिट्यूट में मीटिंग होने की बात थी, उस मीटिंग में भी नित्यानन्द बाबू नहीं गए क्योंकि उनका लड़का वापस आ गया है।"

पहला आदमी बोला, "मैंने भी यही सोचा। वह लड़का अगर लौट आया है तो मैं—मैं उस लड़के को ठीक-ठीक पहचान ही लूंगा। आठ-दस साल पहले देखा था। जब मैं इस घर में आता था, मेरी गोद में बहुत बार बैठ चुका है। इतने दिनों में बड़ा हो जाने पर भी मैं उसे देखते ही अवश्य पहचान लूंगा।"

दूसरा आदमी बोला, "उसी वक्त मैंने कलकत्ता छोड़ा था। उसके बाद इधर आना न हो सका। उस घटना के कारण मन बड़ा खराब हो गया था। एकलौते लड़के के मर जाने से प्राणों पर क्या गुजरती है वह कोई बाप ही बता सकता है।"

पहला आदमी बोला, "ए गोविन्द, सुनो !"

गोविन्द का स्वर सुनाई पड़ा, "जी, आया ! चावल की हांडी नीचे उतारकर आता हूं।"

कुछ देर के बाद गोविन्द आया। बोला, "आप अभी आए हैं, थोड़ी देर और बैठिए।"

"कब निकले हैं ?"

गोविन्द बोला, "लगभग आधा घंटा हुआ होगा। मेरे बाबू नहीं चाहते थे, हुजूर। बाबू थाना-पुलिस पसन्द नहीं करते, मगर क्षितीन बाबू ने दबाव डाला। उनके एक मित्र पुलिस के बड़े अफसर हैं। बड़ा ही जोर डाला, क्षितीन बाबू खुद गाड़ी लेकर हाजिर हो गए, बोले : तुम्हें जाना ही होगा। मन खराब करोगे तो कैसे चलेगा ?"

"और तुम्हारा मुन्ना ?"

"उसे भी मोटर पर चढ़ाकर ले गए।"

"उसका तो तुमने बचपन से ही लालन-पालन किया है। तुम जितना पहचान सकते हो उतना तो कोई भी नहीं पहचान सकता है। कहो, ठीक

है न ? वह सचमुच क्या तुम्हारा मुन्ना वावू ही है ?"

गोविन्द वोला, "हुजूर, आप लोग वावू के पुराने छात्र हैं, भले आदमी हैं ! आप ही लोग वताइए कि मैं नहीं पहचानूंगा तो कौन पहचानेगा ही ? मैंने ही उसे पहले कालीघाट में देखा था। आकर वावू को खवर दी। उसके वाद क्षितीन वावू खवर पहुंचाने आए। वावू को यकीन हुआ ही नहीं। वोले: तुम्हारी आंखें खराव हो गई हैं, गोविन्द ! चश्मा लो। जो-सो वहुत कहा। अच्छा, आप ही लोग वताएं वावू, अगर मेरी आंखें खराव हुई रहतीं तो आप लोगों को पहचानता ही कैसे ?"

"सो तो है ही, तुम न पहचानोगे तो फिर पहचानेगा ही कौन ?"

"यही वात तो मैंने कहा हुजूर, कि कामाख्या जाकर मंतर सीखने के कारण मुन्ना वावू वैसे हो गए हैं। अभी सिपाही-पुलिस से क्या होगा, अभी तो ओझा वुलाकर झाड़-फूंक करवानी चाहिए जिससे कि भूत उसका पिंड छोड़ दे। देखिए न, मेरी वात कोई सुनता ही नहीं।"

"तुम्हारे वावू का कहना क्या है ?"

"कुछ भी नहीं वोल रहे हैं, हुजूर ! कल रात-भर उपवास करते रहे, कुछ भी नहीं खाया। उतना-उतना भात वरवाद तो कर नहीं सकता। भात ही अन्नपूर्णा माता है। मुन्ना को पेट भर खिला दिया और मैं दो व्यक्तियों का भात खाकर अव मर रहा हूं। पेट फूल गया है। वुढ़ापे में उतना खाना वरदाश्त नहीं होता है। सुवह से हाथ का पानी नहीं सूखा है। घर में एक ओर तो मुसीवत है ही और दूसरी मुसीवत में मैं फंस गया।"

"तुम्हारे मुन्ना वावू का क्या कहना है ?"

"किसी में सामर्थ्य नहीं कि उसके मुंह से शब्द निकाल ले। वातचीत करने की सामर्थ्य ही कहां रहने दी है—टोना-टोटका करके दिमाग खराव कर दिया है। कल से मुन्ना वावू ही क्या कम तकलीफ में हैं ?"

वे दोनों भलेमानस वोले, "फिर तुम्हारे घर में वहुत वड़ी मुसीवत का दौर चल रहा है ?"

"मुसीवत क्या ऐसी-वैसी वावू ? कल रात लोगों ने मकान को घेर लिया था। अकेला गोविन्द शर्मा ही ऐसा आदमी था जो सवकी आंखों में धूल झोंकता रहा। फिर सुवह होते-न होते अखवारों के रिपोर्टर, वाहर के

लोग, अपने-पराये—लोगों का जैसे तांता लग गया। यह देखिए, बाबू के नाम से एक बंडल तार आया है। मैं अकेला आदमी ठहरा। बाजार करूं, रसोई पकाऊं, बर्तन मलूं या बैठकर सोचूं! उसपर मेरे पेट की यह हालत··· अच्छा, आप लोग बैठिए, चूल्हा खाली है, कोयला जल रहा है। उफ, कोयले की जो कीमत है!"

गोविन्द चला गया।

दोनों भलेमानस बैठकर गपशप करने लगे।

एक आदमी बोला, "क्या कांड है! अगर यह साबित हो जाता है कि यही आदमी उनका बेटा रातुल है तो फिर क्या होगा?"

दूसरे आदमी ने कहा, "सचमुच तब एक समस्या खड़ी हो जाएगी।"

पहला आदमी बोला, "सिर्फ समस्या ही नहीं बल्कि डर की बात है। हालांकि हम चाहते हैं कि उनका लड़का लौट ही आए। रातुल के जिन्दा रहने की खबर सच साबित हो।"

"मगर इसके दूसरे पहलू पर सोचकर तो देखो। मास्टर साहब की क्या हालत होगी? इतना यश, नाम, डिग्री, रुपया-पैसा, पुस्तक-लेखन, प्रतिष्ठा—सब कुछ तो लड़के की मृत्यु पर ही आधारित है। लड़का अगर सचमुच लौट आता है तो इतने दिनों की कमाई मिट्टी में मिल जाएगी।"

रातुल बंद कमरे से अब तक तमाम बातें सुन रहा था:

नहीं, अब नहीं। अब उसे आगे बढ़कर अपना काम करना है। पहले उसे हरिदास का मुखौटा उतारना है। जिसको केन्द्र मानकर इतना बहस-मुबाहसा, इतनी कल्पना जारी है, जिसके कारण पुलिस-सिपाही के पास दौड़-धूप चल रही है, उसे प्रकाश में लाना है। बेचारे ने समाज-संसार छोड़कर ईश्वर की सेवा में अपने प्राणों को संकल्पित किया था लेकिन घटनाचक्र में फंसकर वह कितनी विपत्तियों के बीच गुजर रहा है। हरिदास के उद्धार होते ही सबका उद्धार हो जायेगा। बाबूजी को भी शान्ति लौट आएगी।

दरवाजे की सूराख से रातुल ने एकबार झांककर देखा।

बगल के कमरे में वे दोनों छात्र उस वक्त भी आपस में बातचीत करने में मशगूल थे। बाहर का दरवाजा खोलकर रातुल रफ्ता-रफ्ता बरामदे पर आकर खड़ा हुआ। यहां थोड़ा झुका जाए तो रसोईघर दिखाई पड़ता है।

है न ? वह सचमुच क्या तुम्हारा मुन्ना बाबू ही है ?"

गोविन्द बोला, "हुजूर, आप लोग बाबू के पुराने छात्र हैं, भले आदमी हैं ! आप ही लोग बताइए कि मैं नहीं पहचानूंगा तो कौन पहचानेगा ही ? मैंने ही उसे पहले कालीघाट में देखा था। आकर बाबू को खबर दी। उसके बाद क्षितीन बाबू खबर पहुंचाने आए। बाबू को यकीन हुआ ही नहीं। बोले : तुम्हारी आंखें खराब हो गई हैं, गोविन्द ! चश्मा लो। जो-सो बहुत कहा। अच्छा, आप ही लोग बताएं बाबू, अगर मेरी आंखें खराब हुई रहतीं तो आप लोगों को पहचानता ही कैसे ?"

"सो तो है ही, तुम न पहचानोगे तो फिर पहचानेगा ही कौन ?"

"यही बात तो मैंने कहा हुजूर, कि कामाख्या जाकर मंतर सीखने के कारण मुन्ना बाबू वैसे हो गए हैं। अभी सिपाही-पुलिस से क्या होगा, अभी तो ओझा बुलाकर झाड़-फूंक करवानी चाहिए जिससे कि भूत उसका पिंड छोड़ दे। देखिए न, मेरी बात कोई सुनता ही नहीं।"

"तुम्हारे बाबू का कहना क्या है ?"

"कुछ भी नहीं बोल रहे हैं, हुजूर ! कल रात-भर उपवास करते रहे, कुछ भी नहीं खाया। उतना-उतना भात बरबाद तो कर नहीं सकता। भात ही अन्नपूर्णा माता है। मुन्ना को पेट भर खिला दिया और मैं दो व्यक्तियों का भात खाकर अब मर रहा हूं। पेट फूल गया है। बुढ़ापे में उतना खाना बरदाश्त नहीं होता है। सुबह से हाथ का पानी नहीं सूखा है। घर में एक ओर तो मुसीबत है ही और दूसरी मुसीबत में मैं फंस गया।"

"तुम्हारे मुन्ना बाबू का क्या कहना है ?"

"किसी में सामर्थ्य नहीं कि उसके मुंह से शब्द निकाल ले। बातचीत करने की सामर्थ्य ही कहां रहने दी है—टोना-टोटका करके दिमाग खराब कर दिया है। कल से मुन्ना बाबू ही क्या कम तकलीफ में हैं ?"

वे दोनों भलेमानस बोले, "फिर तुम्हारे घर में बहुत बड़ी मुसीबत का दौर चल रहा है ?"

"मुसीबत क्या ऐसी-वैसी बाबू ? कल रात लोगों ने मकान को घेर लिया था। अकेला गोविन्द शर्मा ही ऐसा आदमी था जो सबकी आंखों में धूल झोंकता रहा। फिर सुबह होते-न होते अखबारों के रिपोर्टर, बाहर के

लोग, अपने-पराये—लोगों का जैसे तांता लग गया। यह देखिए, बाबू के नाम से एक बंडल तार आया है। मैं अकेला आदमी ठहरा। बाजार करूं, रसोई पकाऊं, बर्तन मलूं या बैठकर सोचूं! उसपर मेरे पेट की यह हालत··· अच्छा, आप लोग बैठिए, चूल्हा खाली है, कोयला जल रहा है। उफ, कोयले की जो कीमत है!"

गोविन्द चला गया।

दोनों भलेमानस बैठकर गपशप करने लगे।

एक आदमी बोला, "क्या कांड है! अगर यह साबित हो जाता है कि यही आदमी उनका बेटा रातुल है तो फिर क्या होगा?"

दूसरे आदमी ने कहा, "सचमुच तब एक समस्या खड़ी हो जाएगी।"

पहला आदमी बोला, "सिर्फ समस्या ही नहीं बल्कि डर की बात है। हालांकि हम चाहते हैं कि उनका लड़का लौट ही आए। रातुल के जिन्दा रहने की खबर सच साबित हो।"

"मगर इसके दूसरे पहलू पर सोचकर तो देखो। मास्टर साहब की क्या हालत होगी? इतना यश, नाम, डिग्री, रुपया-पैसा, पुस्तक-लेखन, प्रतिष्ठा —सब कुछ तो लड़के की मृत्यु पर ही आधारित है। लड़का अगर सचमुच लौट आता है तो इतने दिनों की कमाई मिट्टी में मिल जाएगी।"

रातुल बंद कमरे से अब तक तमाम बातें सुन रहा था :

नहीं, अब नहीं। अब उसे आगे बढ़कर अपना काम करना है। पहले उसे हरिदास का मुखौटा उतारना है। जिसको केन्द्र मानकर इतना बहस-मुबाहसा, इतनी कल्पना जारी है, जिसके कारण पुलिस-सिपाही के पास दौड़-धूप चल रही है, उसे प्रकाश में लाना है। बेचारे ने समाज-संसार छोड़कर ईश्वर की सेवा में अपने प्राणों को संकल्पित किया था लेकिन घटनाचक्र में फंसकर वह कितनी विपत्तियों के बीच गुजर रहा है। हरिदास के उद्धार होते ही सबका उद्धार हो जायेगा। बाबूजी की भी शान्ति लौट आएगी।

दरवाजे की सूराख से रातुल ने एकबार झांककर देखा।

बगल के कमरे में वे दोनों छात्र उस वक्त भी आपस में बातचीत करने में मशगूल थे। बाहर का दरवाजा खोलकर रातुल रफ्ता-रफ्ता बरामदे पर आकर खड़ा हुआ। यहां थोड़ा झुका जाए तो रसोईघर दिखाई पड़ता है।

रसोईघर के अन्दर गोविन्द नहीं था। फिर वह अवश्य ही वाथरूम में है। कल उसने दो व्यक्तियों का खाना खा लिया है। उसकी तवियत खराव हो गई है। वार-वार वह वाथरूम में जाता है। एक सीढ़ी नीचे उतरकर उसने देखा। आंगन के पूरव-दक्खिन कोने के वाथरूम का दरवाज़ा वंद था। लगता है, अन्दर से ही वंद है। वाहर की सांकल खुली है।

यही मौका है!

रातुल जल्दी-जल्दी सीढ़ियां उतर गया। सभी की निगाहों से खुद को छिपाकर आहिस्ता से दरवाज़ा खोला।

वाहर निकलकर रातुल दरवाज़े को ठीक से वन्द करने जा रहा था लेकिन चारों तरफ गौर से देखने के वाद उसे गली के मुहाने से एक मोटर आती हुई दिख पड़ी। मोटर का हुड खुला हुआ था। दिन की रोशनी में, दोपहर के सूरज की धूप में उसे साफ-साफ दिखाई पड़ा कि गाड़ी के अन्दर क्षितीन वावू, वावूजी और माथा मुड़ाए हुए गेरुए वस्त्र में हरिदास है।

एक क्षण के अन्दर रातुल ने गली की उल्टी दिशा की ओर कदम वढ़ा दिए।

आज और अभी हरिदास की समस्या को सुलझाना है। हरिदास की समस्या के निदान के वाद ही रातुल स्वयं के वारे में सोच पाएगा।···

पीछे मोटर रुकने की आवाज़ हुई। पीछे की ओर मुड़कर ताकने के वजाय रातुल शंभुनाथ लेन की उलटी दिशा की ओर वढ़ने लगा।

इस-उस रास्ते से चक्कर काटता हुआ रातुल भवानीपुर के पोस्ट ऑफिस के सामने खड़ा हुआ।

रातुल भीड़ में खो गया। उसके वाद जिस काउंटर पर 'टेलीग्राफ' शव्द लिखा था, वहां जाकर एक आदमी से वोला, "ज़रा एक टेलीग्राफ का फार्म दीजिए।"

भले आदमी ने फार्म दिया।

रातुल को एकाएक याद आया कि उसके पास कलम भी नहीं है।

"मेहरवानी कर ज़रा अपनी कलम दीजिएगा?"

भले आदमी को शायद कलम देने की न तो फुर्सत थी और न इच्छा ही। एक हाथ से वह 'टरे-टक्का' कह रहा था और उसकी आंखें एक दूसरे व्यक्ति

पर टिकी थीं जिससे वह बातचीत कर रहा था। दूसरी तरफ ही ताकता हुआ वह बोला, "कलम वहां रखी है, ले लीजिए।"

बहुत तलाशने के बाद उसे रेलिंग के एक किनारे टूटी निब वाली एक कलम रस्सी में टंगी हुई मिली। उसके निकट ही लोहे की बड़ी मुंहवाली एक दवात थी।

रद्दी स्याही है। सो हो।

तकदीर अच्छी थी कि भोम्बल ने उसे दस रुपये का एक नोट दिया था। भोम्बल के प्रति कृतज्ञता से रातुल का हृदय भर उठा। हरिदास का फैसला हो जाए, उसके बाद रातुल स्वयं को प्रकट करेगा और बाबूजी से कहकर उसे एक अच्छी-सी नौकरी दिला देगा।

भले आदमी ने फार्म लेकर अक्षरों की संख्या को दो बार गिनकर देखा।

पूछा, "अदन ?"

"जी हां।"

भले आदमी ने फिर दो बार अक्षरों को गिना और बोला, "आपके पांच रुपये तेरह आने लगेंगे। वह वहां स्टाम्प बिक रहा है। खरीदकर यहां साट दें।"

१८

उसके बाद…

उसके बाद धूप में तपिश आ गई थी। उसी तपिश में खिदिरपुर के डॉक के भीतर जाकर उसने भोम्बल के जहाज को खोजकर निकाला। बड़े-बड़े अक्षरों में जहाज पर लिखा था : नेपच्यून—जलदेवता।

भोम्बल को अचरज हुआ। "अरे, तुम अचानक ?" उसने पूछा।

"क्यों, मुझे नहीं आना चाहिए था ?"

"क्यों नहीं; आकर अच्छा ही किया। लो मूंगफली खाओ।" जेब से मूंगफली निकालता हुआ भोम्बल बोला, "कुछ देर पहले तुम्हारे बारे में ही

सोच रहा था। तुम लंबी उम्र जियोगे। तुम्हारी तबियत खराब है क्या ?"

"नहीं···तुम लोगों का जहाज़ और कितने दिनों तक यहां रुका रहेगा ?"

"ज़्यादा से ज़्यादा तीन या चार दिन।"

"इन तीन-चार दिनों के दरमियान मैं तुम्हारे पास रहूंगा। रहने दोगे ?"

"क्यों ?" भोम्वल को बड़ा ही आश्चर्य लगा।

"यह बात मुझसे पूछो मत। अभी मुझे कुछ खाना खिलाओ। कल रात से कुछ भी नहीं खाया है।"

भोम्वल बोला, "दे रहा हूं, मगर मैं सोच रहा हूं···"

रातुल बोला, "मैं रहने आया हूं। अपने पास रहने नहीं दोगे ?"

भोम्वल हैरत में आकर बोला, "रहोगे तो इसमें कोई बात नहीं। मगर ऐसा क्यों कर रहे हो ?"

"ऐसा क्यों कर रहा हूं, यह बात अभी मत पूछो। वक्त आने पर तुम्हें सब कुछ बताऊंगा। इतने दिनों तक हम एक साथ रहे, तुमने किसी दिन मेरा नाम नहीं पूछा। इसीलिए आज भी यह पूछने से मना करता हूं कि अपना घर छोड़कर तुम्हारे पास क्यों लौट आया हूं। तीन-चार दिन अपने पास रहने दो।"

भोम्वल कुछ सोचने लगा।

रातुल बोला, "तुम्हारे पैरों पड़ता हूं भोम्वल, मेरे लिए मायापच्ची करने की कोई ज़रूरत नहीं।"

भोम्वल बोला, "और जहाज़ अगर इसके पहले ही खुल जाए ? तब क्या करोगे ?"

"तुम लोगों का जहाज़ कब खुलने जा रहा है ?"

"कोई ठीक नहीं है, मगर दो-तीन दिन के अन्दर ही।"

रातुल बोला, "दो-तीन दिन ही रहना है। उसके पहले भी मेरा काम हो सकता है। जब कि तुमने मेरे लिए इतना किया है, थोड़ी और तकलीफ बर्दाश्त करो। कम से कम दो दिन···"

दो दिन !

धूप में बड़ी ही तपिश है। चारों तरफ केवल पानी, डॉक, क्रेन और कोयला है। *कड़-कड़ शब्द करता हुआ क्रेन ऊपर और नीचे आ-जा रहा है।* भोम्बल उसे डेक के नीचे अंधेरे में ले गया। एक छोटा-सा पैकिंग-बॉक्स दिखाते हुए बोला, "तुम यहीं बैठे रहो। महराज से पूछकर देखता हूं कि भंडार में खाने की कोई चीज है या नहीं।"

आहिस्ता-आहिस्ता रात उतर आई। रोशनी का हार पहनकर तमाम डॉक जैसे नये रूप से सज्जित हो उठा। और कितने दिन! कितने दिनों तक इन्तजार करना है? जहाज के अंधेरे डेक में बैठे रातुल ने आसमान की ओर आंखें फैला दीं। संख्यातीत तारों की भीड़। लगा, एक तारा गिरा। गिरते-गिरते बहुत नीचे आया और कहीं शून्य में खो गया। एकाएक उसे लगा कि बहुत ऊंचाई पर एक तारा सीधे दक्षिण से उत्तर की ओर जा रहा है। वह तारा है या हवाई जहाज? हवाई जहाज बहुत दूर का संवाद लेकर आ रहा है। अनजानी दुनिया के रहस्यों को वह उद्घाटित करेगा।

अदन के उस बंदरगाह में अभी क्या ऊंट की पीठ पर सवार होकर आक-प्यून जाता है? या अरबी प्यून साइकिल या जीप पर चढ़कर जाता है? चाय घर में आज भी रेडियो बज रहा है क्या? अभी रात का कौन-सा प्रहर है? भवतोष बाबू के बंगला गीत सुनने का वक्त हो चुका है?

तार अब तक जरूर पहुंच गया होगा। एकाएक तार को पढ़कर उसे अवश्य ही थोड़ा आश्चर्य होगा। हो सकता है, सोचे कि उसे किसने-कहां से तार भेजा है। इतने दिनों के बाद एकाएक हरिदास का पता मिलने की खुशी में हो सकता है कि उसी क्षण दुकान बन्द कर दे। कहेगा, 'आज तुम लोगों को छुट्टी दे रहा हूं। दुकान बन्द करो और घर जाओ।'

दुकान के कर्मचारी कहेंगे, 'गाहक लौट जाएंगे।'

'लौटने दो। दुकान की मुझे जरूरत नहीं है। हरिदास मिल जाए तो दुकान लेकर क्या होगा? भवतोष बाबू ऐसी-ऐसी सौ दुकानें खोल लेगा।'

हो सकता है भवतोष बाबू अभी जहाज की तलाश में व्यस्त हों। लेकिन अगर हवाई जहाज मिल गया तो भवतोष बाबू उसी से आयेंगे। रातुल ने उसे जल्दी से जल्दी आने के बारे में तार दिया है।

रातुल को नींद नहीं आ रही है। डेक के अंधेरे में अपनी नियति के

दर्भ में सोचने में उसे अच्छा लगता है। वड़ा ही मज़ा आएगा। इतने वड़े
एक नाटक का प्लॉट उसके जीवन में जमा होकर पड़ा था, इसका पता था ही
कैसे ? लेकिन कुल मिलाकर अभी चौथा अंक है। इसके वाद जव पंचम
अंक की शुरुआत होगी तव मंच पर भवतोष वावू उपस्थित होता हुआ दिख
पड़ेगा। जाली रातुल की ओर इशारा करते हुए कहेगा, 'यह मेरा मित्र हरि-
दास है। इसकी तलाश में वहुत सारी जगहों का चक्कर लगाया है। इसका
नाम रातुल कभी नहीं था। आज अपने मित्र को पाकर मैं वेहद खुश हूं।
डॉक्टर नित्यानंद सेन को अत्यन्त दुख के साथ सूचित कर रहा हूं कि यह
उनका लड़का नहीं है।'

पंचम अंक। उस पंचम अंक के अन्तिम यवनिकापात के पहले रातुल का आविर्भाव होगा। रातुल सेन नये सिरे से पुनर्जन्म ग्रहण करेगा। रातुल सेन यानी केस नम्बर ४६।

अंधेरे डेक में वैठा रातुल उस दिन के क्षणों की गिनती करने लगा। वगल में भोम्वल गहरी नींद में खोया हुआ था।

एकाएक भोम्वल की सिसकियों ने पूरे माहौल को अपने पाश में जकड़ लिया। अपनी रुलाई से भोम्वल उठकर वैठ गया। वोला, "वड़ा ही वुरा सपना देखा, जी।

"सपने में तुमने क्या देखा ?" रातुल ने पूछा।

"वड़ा ही वुरा सपना था भाई ? लगा, तुम डूव गए हो।"

रातुल हंसता हुआ वोला, "क्यों, मैं क्यों डूव गया ?"

भोम्वल वोला, "सपना झूठा था लेकिन...लगा, आंधी की चपेट में पड़कर हम लोगों का जहाज़ उलट गया है। हम लोग पानी में वहे जा रहे हैं, चारों तरफ हंगर और मगरों का झुंड है। तुम और मैं दिन पर दिन वहते हुए चले जा रहे हैं। अन्त में एक जहाज़ आता है और हम लोगों को ऊपर उठाता है। लेकिन जव मैं पीछे की ओर मुड़ता हूं तो तुम नहीं मिलते हो। मैं आंखें फाड़-फाड़ कर देखता हूं। तुम तव भी पानी में वहे जा रहे हो। सवसे कहता हूं : उसे वाहर निकालो। मेरी वात पर कोई आदमी ध्यान नहीं देता है। वे कहते हैं : उसकी मौत हो चुकी है। मुझे लगता है, हर कोई झूठ वोल रहा है। तुमको वचाने के ख्याल से मैं पानी में कूद पड़ता हूं

अरबी उपन्यास जैसी नहीं है। इस पर आस्था न रखनेवाले लोगों ने ही मेरे विरुद्ध चक्रव्यूह रचकर हरिदास घोष नामक एक युवक को मेरा पुत्र कहकर प्रचारित करने का षड्यंत्र किया था—लोगों की निगाह में गिराकर मुझे असत्यवादी और ढोंगी साबित करने की कोशिश की थी।···दुनिया के तमाम धर्मों के मतों ने यह स्वीकार किया है कि हर आदमी की जड़ देह में सूक्ष्म देह-धारी एक ऐसी वस्तु है जो अमर है, जिसका विनाश नहीं होता। इसी अमर वस्तु को आत्मा कहा जाता है। बहरहाल जो लोग मेरी प्रेमी हैं वे निश्चित-रूपेण इस मिथ्या प्रचार के दलदल में नहीं फंसे हैं और न फंसेंगे। जिसको 'रातुल' कहकर उपस्थित किया गया था उसके मित्र भवतोष मित्र ने सुदूर अदन से आकर तमाम शंकाओं को दूर कर दिया है। सभी से अनुरोध है कि वे आज की सभा में आएं। वह स्वयं उपस्थित होकर आप लोगों के सामने वक्तव्य देंगे। आशा है, अब किसी के मन में सन्देह नहीं रहेगा कि मैं इतने दिनों से जो कहता आ रहा हूं वह पूर्णतः सत्य नहीं है। मेरे पुत्र ने जड़ देह त्यागकर फिलहाल सूक्ष्म आत्मा का वरण किया है और वह परलोक में वास कर रहा है—यह बात बिलकुल सच है। यदि ऐसा न होता तो मेरी इतने दिनों की साधना, खोज, विद्या-बुद्धि, सब कुछ असत्य होता।···"

पढ़ते-पढ़ते रातुल को फिर से हंसने की इच्छा हुई। सचमुच इस बार जब वह स्वयं को प्रकट करेगा तो अंतिम यवनिका गिरेगी। वही उसके नाटक का अंतिम अंक होगा। अनेक पथों पर चलने के बाद अब उसके सफर का अन्त आएगा। उसने किसी पुस्तक में पढ़ा था : पृथ्वी गोल है। वह गोलाकार पृथ्वी भूगोल की पृथ्वी है; आदमी की पृथ्वी बड़ी जटिल है। यहां अनगिन चढ़ाई-उतराई, अनगिन सतहें, अनगिन अवरोध, अनगिन दुख, अनगिन आंसुओं का समुद्र···

भोम्बल आया। बोला, "तुम्हें जल्दी-जल्दी खबर पहुंचाने आया हूं।"

"क्या ?"

"आज रात हमारा जहाज रवाना होगा।"

"कब, किस समय ?" रातुल ने पूछा।

"कोई ठीक नहीं है, शाम को भी खुल सकता है या रात दो बजे भी।"

रातुल बोला, "फिर आज तुमसे आखिरी मिलन है ? फिर कितने दिनों

याद आओगे ?"

"कोई ठीक नहीं। हो सकता है दुबारा आऊं ही नहीं। या यह भी हो सकता है कि टिम्बकटू या किम्बरली में उतर जाऊं। खिंचाव रहे तो आखिर किसके लिए ? तुम्हारी तरह न तो मेरे मां-बाप हैं, न अपना देस। सभी जाति के लोग मेरी स्वजाति के हैं, सभी देश मेरे लिए स्वदेश की तरह हैं।"

"मेरे जाने के पहले मेरा नाम पूछने का तुममें लोभ नहीं जग रहा है ?"

मोम्बल हंसता हुआ बोला, "मैं कभी रोया नहीं। मगर लगता है तुम मुझे बिना रुलाए छोड़ोगे नहीं भाई।"

और मोम्बल तत्क्षण तेज कदमों से आंखों से ओझल हो गया। फिर वह दुबारा लौटकर नहीं आया।

समय बीतता गया। दोपहर में एक आदमी रातुल के लिए थाली में भात लिए आया। रातुल ने पूछा, "यह किसके लिए है ? किसने भेजा है ?"

"मोम्बल ने।" उस आदमी ने बताया और वह वहां से चला गया।

उसके बाद दोपहर का रूप और भी प्रखर हो उठा। खिदिरपुर के डॉक की हवा के साथ कोयले का बुरादा और तपिश के झोंके आने लगे और रातुल के चेहरे का स्पर्श करने लगे।

मोम्बल एक बार भी नहीं आया। एक का घंटा बज उठा, उसके बाद दो का, उसके बाद तीन का, फिर चार का। अब इन्तजार नहीं किया जा सकता। उधर पांच बजे सभा शुरू होने वाली है। आहिस्ता-आहिस्ता जहाज के बाहर आकर मोम्बल उस परिचित चेहरे की चारों ओर तलाश करने लगा। लेकिन वह पकड़ में नहीं आएगा, उसको पकड़ने की कोशिश करना व्यर्थ है।

डॉक को पारकर रातुल ट्राम में जाकर बैठ गया। अब ज्यादा देर नहीं है। बाबूजी सभा में आएंगे। भवतोष बाबू भी आएंगे। वह रातुल का तार पाते ही यहां पहुंच गए हैं। जरूर ही हवाई जहाज से आना हुआ है। आज आमने-सामने खड़े होकर मुकाबला करेंगे। जाली रातुल अपने स्थान पर लौट जाएगा और…और…और…

२०

विशाल सभा का आयोजन है। बीच में नित्यानन्द सेन बैठे हैं। आसपास और भी बहुत-से आदमी। भवतोष बाबू ने खड़े होकर भाषण दिया।

उसने अपने भाषण के क्रम में बहुत कुछ कहा। बोला : "आप लोग जिसे रातुल सेन के नाम से जानते हैं वह मेरा मित्र हरिदास घोष है। यह रही उसकी फोटो। हम दोनों एक ही गांव में पले-बढ़े हैं। हम एक ही साथ घर से भागे थे। एक ही साथ हमने चाय की दुकान खोली थी।"

उसके बाद भवतोष बाबू ने उसके पूरे इतिहास पर प्रकाश डाला। कब गांव से वे भागे थे, कैसे-कैसे अदन में पहुंचे। फिर हरिदास पर संन्यासी बनने की कैसी झोंक सवार हुई। उसके बाद हरिदास एक दिन कैसे गायब हो गया, किस तरह भवतोष बाबू जगह-जगह का चक्कर काटता रहा। फिर दादा द्वारा दो लाख रुपये की वसीयत करने की बात भी बताई।

उसके बाद भवतोष बाबू ने कहा, "मैं प्रेततत्त्व या परलोकतत्त्व के बारे में कुछ भी नहीं जानता। मैं अपने मित्र को अपने साथ बर्मा ले जाने के लिए आया हूं, जहां जाने पर वह दो लाख रुपये का मालिक होगा। इसके अलावा मैं यह भी बताने आया हूं कि उसका नाम रातुल नहीं है और न प्रोफेसर नित्यानन्द सेन से उसकी कोई नातेदारी है। मेरा मित्र हरिदास आपके सामने अपना परिचय देने को राजी हो गया है।

पूरी सभा में सन्नाटा रेंगने लगा।

गेरुए कपड़े पहने हरिदास अब सामने खड़ा हुआ और आंखें नीचे की ओर किए शांत स्वर में कहने लगा, "मैं हरिदास घोष हूं, मेरा नाम रातुल सेन नहीं है। मैं संन्यासी हूं। उचित नहीं है कि मेरी कोई अस्मिता हो। फिर भी सबों के अनुरोध की रक्षा करने के लिए मैंने अपने पूर्व परिचय पर प्रकाश डाला।"

कुछ सुनाई पड़ा, कुछ अनसुना रह गया। फिर भी चारों तरफ तालियों की गड़गड़ाहट होने लगी। सभा में आज जनता नित्यानन्द सेन का भाषण

सुनने के लिए उत्कंठित थी। वह उठकर खड़े हुए। आज उनके गले में दुबारा फूलों का हार झूल रहा था। आज उनकी आंखों में स्वच्छ आनंद की झलक थी। आज वह सफलता के प्रकाश से प्रकाशमान हैं। रात के दुःस्वप्न के बाद आज उनके लिए नवजागरण की बेला है। वह बोले, "उपस्थित भाइयो एवं बहनो!"

पूरी सभा में ऐसा सन्नाटा छाया हुआ था कि अगर सुई भी गिरे तो आवाज सुनाई पड़ जाए।

"मूक को जो वाचाल बनाते हैं, पंगु को गहन गिरि लांघने की क्षमता प्रदान करते हैं, उन्हीं अनन्त अनादि परमेश्वर को मेरा प्रणाम निवेदित है।"

तालियों की गड़गड़ाहट दुबारा मुखर हो गई।

"मनुष्य की सृष्टि के प्रथम दिन से आज तक हम जो कुछ भी देखते आ रहे हैं, उसके दौरान भारतवर्ष के ऋषियों के द्वारा खोजे गए ज्ञानों में से दो विषयों का महत्त्व सबसे अधिक है। हमारे जीवन-संग्राम में उनकी उपयोगिता अनिवार्य है। वे दो विषय हैं : अस्तित्व और मृत्यु का रहस्य।…"

उसके बाद नित्यानंद सेन आरम्भ से अन्त तक वेद-वेदान्त, उपनिषद्, ईश्वर, इहलोक आदि सभी विषयों पर प्रकाश डालने लगे। उन्होंने याज्ञवल्क्य की कहानी सुनाई, "याज्ञवल्क्य ने जब घर छोड़ने के समय अपनी दोनों पत्नियों को समग्र सम्पत्ति देनी चाही, मैत्रेयी ने उनसे पूछा, 'येनाहं नामृता स्याम् किमहं तेन कुर्याम् ?' यानी जिसके द्वारा मैं अमृत न हो पाऊंगी उसे लेकर क्या करूं? हममें से हर व्यक्ति के हृदय में यही ध्वनि अलग-अलग भावों में गूंज रही है : 'किस तरह इस मृत्यु को वर्जित किया जाए!' इसलाम मजहब मृत्यु को इन्तकाल कहता है। इस शब्द का अर्थ है परिवर्तन। इस मत के अनुसार आत्मा का विनाश नहीं होता है। कुरानशरीफ में लिखा है : हम दुनिया में हमारी सृष्टि खिलौने की तरह नहीं हुई है, हम लोगों के देहावसान के बाद अनन्त जीवन की शुरुआत होती है।…गीता के द्वितीय अध्याय में लिखा है :

'न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥'

यानी न तो आत्मा का जन्म होता है और न मृत्यु। जन्म-ग्रहण न करने

पर भी इसका अस्तित्व है। यह जन्मरहित, शाश्वत एवं प्राचीन है। देह के विनाश होने से भी इसका नाश नहीं होता है।—यह तो हुई आत्मा की बात।"

इतना कहकर नित्यानन्द सेन ने रूमाल से अपना मुंह पोंछा। उसके बाद कहना शुरू किया, "आत्मा के अस्तित्व की स्वीकृति के संदर्भ में तीनों प्रमुख धर्मों के मत में तिल-मात्र भी अन्तर नहीं है। लेकिन मैं आज आपको दिखाऊंगा कि आत्मा न केवल अमर है बल्कि आत्मा को हम आंखों के सामने प्रत्यक्ष कर सकते हैं। अपने स्वर्गवासी पुत्र रातुल के बारे में ही कहूं। लड़ाई के मैदान में उसकी मृत्यु होने के बाद मैंने जो उसकी फोटो ली है, वह मेरे पास है। आज आप लोगों को यह दिखाने जा रहा हूं। आप लोगों के बीच कुछ ऐसे भी व्यक्ति होंगे जो इसके पहले मेरी बातों पर यकीन नहीं करते होंगे, मगर आज संभवतः उनका संदेह दूर हो गया होगा कि रातुल इस धरती पर जीवित है। पुत्रशोक पिता के लिए कितना वेधक होता है उसका अनुमान वही लगा सकते हैं जो पिता हैं। लेकिन विज्ञान आदमी के स्नेह-प्यार पर भरोसा नहीं रखता है। मेरा पुत्रशोक चाहे जितना बड़ा ही सत्य क्यों न हो, मेरा विज्ञान उसके बनिस्बत बड़ा है। उसी वैज्ञानिक सत्य के आधार पर आज मैं कह सकता हूं कि अपने पुत्र की मृत्यु के विनिमय में मैं लाखों पिता के शोक को दूर करने···

अचानक एक बाधा खड़ी हो गई।

बगल का एक आदमी अकस्मात् नित्यानन्द सेन के पास आकर बोला, "सर, ज़रा इस स्लिप को देख लें।"

बाधा पड़ने के कारण नित्यानन्द सेन ने अपने भाषण का क्रम रोक दिया। बोले, "अभी नहीं, बाद में।"

"एक युवक आपसे मिलना चाहता है। हमने उसे अन्दर नहीं आने दिया। कहा, बाद में मिलना। वह बोला: नहीं; अभी तुरन्त यह स्लिप उनके पास पहुंचा दें। बहुत ही दबाव डालने लगा। लगा, कोई ज़रूरी काम है।"

"कहां है, देखूं।"

चश्मा निकालकर वह स्लिप को पढ़ने लगे। कागज़ का एक छोटा-सा

टुकड़ा था। पढ़ने में ज्यादा वक्त नहीं लगना चाहिए था। लेकिन उनके पढ़ने का सिलसिला जैसे रुकने का नाम ही न ले रहा था। सभा में शोरगुल होने लगा। पल, दंड, मिनट—सब कुछ चुपचाप खिसकते गए।

नित्यानन्द सेन की बाहरी चेतना जैसे खो गई। एकाएक सिर पर बिजली गिरने से जैसा हो सकता है, उनकी स्थिति वैसी ही थी।

और फिर अकस्मात् वह संज्ञाहीन होकर गिर पड़े।

चारों तरफ शोर-शराबा मच गया। पानी लाओ पानी, बरफ, भीड़ हटाओ और एम्बुलेन्स के लिए खबर भेजो। यहां कोई डाक्टर है ?सर्वनाश हो गया ! घर पर खबर भेजो। उनके घर में नौकर के सिवा है ही कौन ! फिर क्या होगा ? वह कागज कहां है ? भीड़ में लोगों के पैरों के दबाव से वह कहीं साबुत रह सकता है ! स्लिप किसने भेजी थी ? उसी को खोजो। कहीं कोई नहीं है ! किसने उसे देखा था ? स्लिप लेकर कौन आया था ? पता नहीं, कौन-सा समाचार ले आया था ! भीड़ में खोज निकालना क्या आसान है ! फाटक बन्द कर दो वरना भाग जाएगा। इसके अलावा पुलिस को खबर भेजनी चाहिए…

नित्यानन्द सेन तब भी उसी तरह पड़े हुए थे।

२१

इधर जब इस तरह की स्थिति थी, दूसरी ओर हॉल के अन्दर एक दूसरी घटना घटित हो रही थी। बेशुमार भीड़ थी। आदमी खचाखच भरे थे। रातुल उन्हींके बीच एक कुरसी पर बैठा चुपचाप देख रहा था। मंच पर रोशनी जल रही थी। उसकी आंखें एक मूर्ति पर टिकी थीं। वह मूर्ति उसके पिता नित्यानन्द सेन की थी। आज उनकी आंखों से आनन्द छलक रहा था। यह जैसे उस दिन शंभुनाथ पंडित लेन में देखा हुआ उनका पिता नहीं है। उस दिन बाबूजी गंभीर होकर चुपचाप बैठे थे, किसी से एक भी शब्द नहीं बोल रहे थे। लेकिन आज—आज उनकी पूर्ण सफलता का दिन है। आज वह सफलता के गौरव से महान हैं। आज षड्यंत्र के महाजाल को छिन्न-

भिन्न कर अपनी महिमा से दीप्तिमान हो उठे हैं।

भवतोष बाबू निकलकर आया। लगा, जैसे कुछ बोला हो। कोई खास बात कानों में नहीं पहुंची। आज भवतोष बाबू की भी खुशियों का कोई अन्त नहीं था। दो लाख रुपयों की जायदाद का थोड़ा-बहुत हिस्सा जरूर ही मिलेगा।

उसके बाद हरिदास बोला।

आजन्म संन्यासी भगोड़ा हरिदास। रातुल के जीवन के नाटक में प्रवेश करके उसने कितना संकट पैदा कर दिया! अब वह फिर से राहु-मुक्त सूर्य की तरह रातुल को और भी चमका देगा। रातुल के जीवन में हरिदास राहु ही है। चाहे संपूर्ण राहु न हो लेकिन आंशिक राहु तो है ही।

उसके बाद नित्यानंद सेन भाषण देने के लिए खड़े हुए।

"मूक को जो वाचाल बनाते हैं, पंगु को गहन गिरि लांघने की क्षमता प्रदान करते हैं, उन्हीं अनन्त अनादि परमेश्वर को मेरा प्रणाम निवेदित है।"

चारों तरफ तालियों की गड़गड़ाहट हुई।

वह फिर से कहने लगे, "मनुष्य की सृष्टि के प्रथम दिन से आज तक हम जो कुछ भी देखते आ रहे हैं, उसके दौरान भारतवर्ष के ऋषियों के द्वारा खोजे गए ज्ञानों में से दो विषयों का महत्त्व सबसे अधिक है। हमारे जीवन-संग्राम में उनकी उपयोगिता अनिवार्य है। वे दो विषय हैं—अस्तित्व और मृत्यु का रहस्य।..."

रातुल ध्यान लगाकर सुन रहा था।

एकाएक बगल से एक आदमी ने कहा, "सब बोगस है।"

एक और व्यक्ति पास ही बैठा सब सुन रहा था। वह बोला, "सब सुने बगैर पहले ही से कैसे कहते हो कि सब बोगस है?"

"अरे भाई मेरे, ज्यादा विद्या होने से ही कोई अक्लमन्द नहीं हो जाता है। विद्या और बुद्धि दोनों अलग-अलग चीजें हैं।"

"कैसे?"

"मसलन नित्यानंद सेन। भला आदमी शिक्षित है मगर वैज्ञानिक बुद्धि जिससे जन्म लेती है उस चीज की इसमें कमी है। झोंक है तो केवल अलौकिक बातों पर और उन आलौकिक बातों को आदमी की आंख, नाक और कान से

समझा नहीं जा सकता।"

"लेकिन यह तो मानोगे ही कि *There are more things in heaven and earth, Horotio, than your philosophy can dream of."

"यह अविज्ञान हुआ, कहना जो है उसमें वैज्ञानिक तर्क रहना चाहिए।"

"लेकिन विज्ञान ही क्या सब कुछ है ? हम लोगों के भारत में ऋषि-मुनियों ने हजारों वर्ष की साधना के फल से जिसे…"

नित्यानंद सेन तब यही बात कह रहे थे :

"याज्ञवल्क्य ने जब घर छोड़ने के समय अपनी पत्नी को समग्र संपत्ति देनी चाही, मैत्रेयी ने उनसे पूछा, 'येनाहं नामृतास्याम् किमहं तेन कुर्याम् ? यानी जिसके द्वारा मैं अमृत नहीं हो पाऊंगी उसे लेकर क्या करूं ?' हम लोगों में से हरेक के हृदय में यही ध्वनि बार-बार गूंज रही है कि किस तरह मृत्यु को विजित किया जाए।"

भले आदमी ने फिर कहा, "देख रहे हो न, बड़ी-बड़ी बातें कहकर धोखा देने की कोशिश की जा रही है। जो कंक्रीट है उसकी ओर जा ही नहीं रहे हैं।"

बगल का आदमी बोला, "तुम्हें इस मीटिंग में नहीं आना चाहिए था। यह अत्यंत स्वाभाविक बात है, इसलिए उसकी चर्चा भी स्वाभाविक ही है।"

अन्त में वेद, वेदान्त, उपनिषद्, ईश्वर, इहलोक सभी के बारे में उल्लेख करते हुए बोले, "आत्मा के अस्तित्व की प्रामाणिकता के संदर्भ में तीनों प्रमुख धर्मों के मत में तिल भर भी अन्तर नहीं है। लेकिन मैं आज आपको दिखाऊंगा कि आत्मा न केवल अमर है बल्कि आत्मा को हम प्रत्यक्ष कर सकते हैं। अपने स्वर्गवासी पुत्र राहुल के बारे में ही कहूं। लड़ाई के मैदान में उसकी मृत्यु होने के बाद मैंने जो उसकी फोटो ली है, वह मेरे पास है। आप लोगों को वह फोटो दिखाऊंगा।"

---

*होरेशियो, पृथ्वी और स्वर्ग में ऐसी चीजें बहुतायत में हैं जिनके बारे में तुम्हारा दर्शन सपना तक नहीं देख सकता है।

बगलवाला आदमी बोला, "अब—अब तुम्हारा कंक्रीट आया है, अब ह विज्ञान बता रहे हैं।"

भला आदमी बोला, "ठहरो, आखिर तक देखें। यह विज्ञान क्या कोई मैजिक है?—बाद में पूछूंगा।"

बगलवाला आदमी बोला, "विश्वास न रहने के कारण विज्ञान भी तुम्हें मैजिक ही लगेगा।"

नित्यानन्द सेन का तब भाषण चल रहा था : "इस दुनिया में पिता के लिए पुत्र-शोक कितना वेधक होता है, इसका अनुमान वही लगा सकते हैं जो पिता हैं। लेकिन विज्ञान आदमी के स्नेह-प्यार पर भरोसा नहीं रखता है, मेरा पुत्र-शोक चाहे जितना ही बड़ा क्यों न हो, मेरा विज्ञान उसके बनिस्वत बड़ा है। उसी वैज्ञानिक सत्य के आधार पर आज मैं कह सकता हूं कि अपने पुत्र की मृत्यु के विनिमय में मैं लाखों पिता के शोक दूर करने···

भला आदमी बोला, "सब धोखा है धोखा! पुत्र शोक दूर करने—क्या कहते हैं। दरअसल पुत्रशोक को कैपिटल बनाकर मूलधन बढ़ा रहे हैं—किताबें बिक रही हैं। सच पूछो तो इस दुनिया में स्नेह, प्रेम, दया, ममता सब पाखंड है।"

"तुम नास्तिक हो।"

"चाहे नास्तिक होऊं या और कुछ। आज अगर सभा में खड़ा होकर कोई एलान करे कि मैं रातुल हूं और ज़िन्दा हूं तो फिर क्या होगा?"

"अगर सचमुच उनका लड़का होगा तो नित्यानन्द सेन उसे कलेजे से लगा लेंगे।"

"कभी नहीं। आज मैं कह रहा हूं, उसको देखकर हो सकता है कि बा बेहोश होकर गिर पड़ें। हो सकता है, आत्महत्या कर लें।"

"असंभव बात है।"

रातुल बहुत देर से इन लोगों की बातचीत सुन रहा था। बहुत पहले ही उसने तय कर लिया था कि बाबूजी का भाषण ज्यों ही समाप्त हो वह खुद जाकर नाटकीय मुद्रा में प्रकट हो जाएगा। लेकिन उन भलेमान की बातें सुनकर वह हैरान हो गया। फिर स्नेह, प्रेम, माया-ममता— कुछ क्या पाखंड ही है? दुनिया में उसकी कोई कीमत नहीं? झूठी बात

बिल्कुल झूठी बात। उसके पिता सत्यनिष्ठ दार्शनिक हैं। उसकी मृत्यु की बाबत अगर कहीं झूठा प्रचार हुआ है तो उसके लिए बाबूजी जिम्मेदार नहीं हैं। प्यार के प्रबल आवेग के कारण ही इसकी सृष्टि हुई है। हो सकता है कि लगातार दिन-रात उसके बारे में सोचते-सोचते उसे सपने में देखते हों और उसी सपना को सत्य मानकर चलते हों। लेकिन रातुल के बनिस्बत 'उस रातुल' का सपना ही क्या उनको ज्यादा प्यारा है ? रातुल की अपेक्षा अपना यश, अर्थ और ख्याति ही उनके लिए अधिक कीमत रखते हैं ?

बगलवाला आदमी बोला, "कहां चले सर ?"

रातुल कुरसी छोड़कर खड़ा हो चुका था। बोला, "जरा घूम-फिर आऊं।"

वह सीधे मंच की ओर बढ़ा। उसके बाद एक आदमी से कागज और कलम मांगकर उसने लिखा :

"बाबूजी, मैं रातुल हूं। मैं आपके पास दुबारा सशरीर लौट आया हूं। मेरी मृत्यु नहीं हुई है। अबकी कोई जाली रातुल नहीं है। मेरी स्मरण-शक्ति नष्ट हो गई थी और मैं बहुत दिनों से अस्पताल में पड़ा था। मेरी स्मरण-शक्ति फिर से लौट आई है। आप मुझे स्वीकार करने के लिए जब तैयार होंगे तभी मैं स्वयं को प्रकट करूंगा, अन्यथा नहीं। और मैं असली रातुल हूं इसके प्रमाण में लिख रहा हूं कि बचपन में आपके चाकू से पेंसिल काटने के वक्त मेरा अंगूठा कट गया था। वह दाग अब भी है। जवाब दीजिएगा।

आज्ञाकारी,

रातुल"

उसके बाद गेट के पास एक आदमी के पास जाकर रातुल बोला, "जरा इसे प्रोफेसर सेन को दे दें।"

"वह तो अभी व्यस्त हैं।"

"सो रहें, भाषण के बीच ही उन तक यह पहुंचनी चाहिए। मैं उनके घर का आदमी हूं। बहुत ही जरूरी स्लिप है।"

इच्छा न रहने के बावजूद वह आदमी स्लिप लेकर अन्दर गया। रातुल उत्कंठित होकर बाहर प्रतीक्षा करने लगा। रातुल ने ऐसा प्रमाण दिया है जिसे काटा नहीं जा सकता। अब उसके पिता उसे नकली [illegible]

कर पाएंग। इसके अतिरिक्त अंगूठे के कटने की बात किसी दूसरे की जानकारी में नहीं है। आज परीक्षा हो ही जाए। फिर स्नेह, प्रेम, दया, माया सब कुछ पाखंड ही है !

सामने आकर वह सीधे अपने बाबूजी की ओर देखने लगा। नित्यानन्द सेन उस स्लिप को बेमन से पढ़ रहे हैं। छोटा-सा एक कागज का टुकड़ा है। पढ़ने में ज्यादा देर लगने की बात नहीं है। लेकिन पढ़ने का सिलसिला जैसे रुकने का नाम ही नहीं ले रहा है। पूरी सभा में शोरगुल की शुरुआत हो गई है। पल, दंड, मिनट मौन के बीच गुजर रहे हैं। बाबूजी की बाहरी चेतना जैसे लुप्त होती जा रही है। एकाएक जैसे बिजली गिरी हो, ठीक वैसे ही। उसके बाद चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते नित्यानंद सेन बेहोश होकर मंच पर गिर पड़ते हैं।

रातुल उसी क्षण बाहर निकल आया। अब वह क्षण भर के लिए भी नहीं रुका।

सभा, भीड़, लोगों के शोरगुल सभी से परे होकर उसने सहसा दौड़ना शुरू किया। अब यहां एक क्षण के लिए भी रुकना न हो पाएगा। बाहर आकर खड़ा होने पर भी भय जैसे दूर नहीं हो रहा है। कोई पहचान ले सकता है। अब इस दुनिया से खुद को मिटा देना होगा। तमाम दुनिया का चक्कर लगाने के बाद रातुल ने जहां आश्रय की खोज की थी, एक मामूली-सी चोट से वह आश्रय दरारों से भर गया है। इस घटना के बाद इस दुनिया में रातुल के अस्तित्व की कोई जरूरत नहीं है। उसके अस्तित्व का अर्थ है उसके पिता के सम्मान, यश, संपत्ति और प्रतिष्ठा का मिट्टी में मिलना।

रातुल दौड़ने लगा—इस दुनिया में नहीं, बल्कि कहीं और ही।

दौड़ते-दौड़ते रातुल जब खिदिरपुर डॉक पहुंचा तब रात गहरा चुकी थी।

"भोम्बल ! भोम्बल !" रातुल उसको तलाशने लगा।

भोम्बल आया। बोला, "बात करने की फुरसत नहीं है, ऊपर चले आओ। जहाज अभी-अभी खुलने जा रहा है।"

रातुल को देखकर आजकल वह जैसे गूंगा हो गया है। उसकी मूक जिज्ञासा समुद्र, आकाश, जल, तारे, सीमाहीन दिक्-चक्र-काल से टकराती रहती है। कहती है, "हे प्रभो, हे अदृश्य महादेवता, प्रकाश दो, अंधकार दूर करो।"

भोम्वल की मूक जिज्ञासा के उत्तर में नीले आकाश का देवता, लगता है और भी अधिक गूंगा हो जाता है। सूर्य उगता है और डूबता है, चांद उगता है और डूबता है, पानी की लहरें उठती-गिरती हैं, पक्षियों का समूह इस दिगंत से उड़कर उस दिगंत की ओर चला जाता है किन्तु कोई कुछ भी नहीं कहता। कोई रोशनी नहीं जलाता, अंधेरा जैसे और भी गूंगा हो जाता है।

जहाज़ के रोज़मर्रे की ज़िन्दगी में पहले की तरह ही झगड़ा-टंटा चलता रहता है। शक्ति-लोलुप व्यक्तियों की ज़हरीली प्रतिद्वन्द्विता चलती रहती है। स्थल का आदमी जल में आकर भी जैसे अपने धर्म को छोड़ नहीं रहा है।

गोदाम बाबू और महराज का झगड़ा। बड़े-छोटे का प्रश्न। उच्च-नीच का प्रश्न। वंश-मर्यादा का प्रश्न।···अनादि-अनन्तकाल तक उन लोगों का ऐसे ही चलता रहेगा।

रातुल देखता है और हंस देता है।

इसी तरह एक दिन जहाज़ हिन्दमहासागर पार करता है और फिर बहुत दिन पहले का दृश्य आंखों के सामने नाचने लगता है। अदन का बन्दरगाह! बन्दरगाह के भीतरी हिस्से से एक अरबी बजरा रफ्ता-रफ्ता बाहर के समुद्र की ओर चला जा रहा है। काले समुद्र का पानी सूर्य की रोशनी के कारण हल्की चमक लिए हुए है। धुंधलके से घिरे दूर समुद्र की छाती पर संभवतः एक उड़ने वाली मछली पानी से दस-बारह फीट ऊपर उछलकर फिर से पानी पर गिर पड़ी···उसके पीछे एक और···उसके पीछे दूसरी एक और। जेटी से सटकर एक नाव आहिस्ता-आहिस्ता जा रही है। लगता है किसी द्वीप में जाकर लगेगी। मल्लाहों की जमात क्रमबद्ध डांड चला रही है और तेज़ आवाज़ में चिल्लाती है, "याहुदी अल्लाह, याहुदी अल्लाह···।" सुबह की हवा के स्पर्श से समुद्र में छोटी-छोटी लहरें जग रही हैं। कोई एक जहाज़ तब संभवतः और भी दूर दक्खिन की तरफ जाकर सुबह के धुंधलके में एक स्याह धब्बे की तरह खो गया।

दिन और रात। रात और दिन। अन्ततः एक दिन निर्धारित दिन का आगमन हुआ।

तब रात गहरा चुकी थी। घंटा बज उठा—डिगडांग-डिगडाग···नींद-बोझिल पलकें रहने के बावजूद वे लोग जिन्हें ड्यूटी पर जाना था, उठकर खड़े हो गए। बड़ा-बड़ा माल उतरने लगा। खट्-खटाक्, खट्-खटाक् आवाज होने लगी। जेटी के फाटक पर एक पहरेदार खड़ा था। टिकट देख लेने के बाद जाने की इजाजत दे रहा था। एक दाढ़ी-मूंछ वाले आदमी के आते ही पहरेदार ने पूछा, "कौन है ? तुम कौन हो ?"

"मैं भोम्बल का आदमी हूं। जाने दो।"

तब तक दाढ़ी-मूंछ वाला आदमी जेटी पारकर सीधे नारियल के पेड़ों से घिरे बंदरगाह के टीले पर पहुंच चुका था। उसके बाद एक बार सतर्कता के साथ चारों तरफ आंखें दौड़ाकर अस्पताल के भवन की तरफ तेज कदमों से बढ़ने लगा। दक्खिन के केले के बगीचे से तेज हवा आ रही थी, लेकिन उसका ध्यान कहीं-किसी ओर न था।

उधर जहाज के डेक के नीचे आधी रात में भोम्बल की नींद किसी आवाज से दूर हो गई। नींद टूटते ही उसने बगल की ओर मुड़कर देखा। *कहां गया वह ? हो सकता है कि अभी लौटकर आए,* भोम्बल ने सोचा।

लेकिन जहाज जब खुलने पर हुआ, तब भी वह लौटकर नहीं आया था। भोम्बल जिस तरह लेटा था, उसी तरह लेटा रहा। जाए मरे। होता ही कौन है मेरा ! एक दिन जिस तरह अप्रत्याशित रूप में आया था, उसी तरह अचानक चला भी गया। पता नहीं क्यों चला गया ! बंगाली जात होती ही है बगैर ताल-मेल की। खानाबदोश जात। वह भी तो बंगाली ही था न ! जाए मरे। दुनिया में कोई किसी का नहीं होता—जाए मरे !···

२३

अस्पताल में उस दिन फिर सुबह हुई।

धूप सरककर अन्दर आ गई है। सुबह की मीठी-मीठी धूप। चारों ओर

फैले समुद्र की हवा से परदे हिल-डुल रहे हैं। फर्श पर लेटी कच्ची धूप का सोना झलमला रहा है। जो मरीज़ उठकर खड़े हो सकते हैं, वे डॉक्टर के आने के पूर्व ही खिड़की से सटकर बाहर आंखें दौड़ा रहे हैं। नारियल के पेड़ों की पंक्तियां जहां समाप्त हुई हैं वहीं से समुद्र की शुरुआत है। काले-काले मछुए पंक्तिबद्ध होकर चले जा रहे हैं। उनके कंधों पर एक-एक बड़ा बांस है, जिन पर मछली पकड़ने के बड़े-बड़े जाल झूल रहे हैं। बालूचर पर कुछ नौकाएं खड़ी हैं जो छोटे-छोटे धब्बे की तरह दिख रही हैं।

चीनी सरदार ल्यां तोयां आज भी आया है। उसके हाथ में हिसाब का खाता है।

लु···लु···लु···लु···लु···लु···लु···लु···

दोनों हाथों की उंगलियों को मुंह के अन्दर डालकर वे एक अजीब किस्म की आवाज़ निकालते हैं। वह आवाज इस मुहल्ले से उस मुहल्ले में जाती है और तमाम मुल्क को हैरत में डाल देती है। सभी जमात बांधकर आते हैं। "सरदार आ गया, सरदार आ गया।" उनके बीच उत्तेजना फैल जाती है।

चीनी सरदार काला पाजामा पहने है, उसकी मूंछें लम्बी और सुई की तरह नुकीली हैं।

ल्यां तोयां चिल्लाता है, "मक्फु पांच लुपिया, विणुख साढ़े तीन लुपिया, भिरमी दो लुपिया···

अस्पताल की खिड़की से लगकर मरीज़ों का दल सब कुछ देखता है। जहाज़ से कपड़े, सिगरेट, तम्बाकू, चीनी वगैरह बहुत-सी चीज़ें उतरती हैं। साथ ही साथ खिलौने, चाय, दवा, साबुन, तमाम खुदरा माल। केल के घौद, दालचीनी, इलायची, लौंग, सागूदाना और सूखी मछलियों की लदाई होती है।

कर्नल वाटसन रोज़मर्रे की तरह सीढ़ी के पास आकर ठिठककर खड़े हो गए, "वह सब क्या है—ये चिथड़े? इन्हें फेंका क्यों नहीं गया? सारा कूड़ा-कचरा···"

सीढ़ी से उतरने के बजाय कर्नल सीधे बाईं तरफ से घूमकर आया। बाईं तरफ स्याही से मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा है : केस नम्बर ४६।

साइनबोर्ड अब तक क्यों लगा हुआ है? जब कि मरीज़ भाग गया है तो

पालों रखने से क्या फायदा? कर्नल वाटसन को ऊब महसूस हुई।

उसके बाद कर्नल ने नोटबुक बाहर निकाली। मोटे चश्मे से पढ़ने लगा। मेडिकल जरनल में इस केस की तस्वीर निकली है—तसवीर और केस की हिस्ट्री। इसी के बारे में अमरीकी जरनल में लेख छपते हैं, इसी को देखने के लिए बर्लिन से डॉक्टर गुल्डबर्जर यहां आए थे और अमरीका से आए थे मेडिकल बोर्ड के चेयरमैन डॉक्टर थियोडोर क्लेयर। अभी तक इसके बारे में कोई रपट नहीं भेजी गई है। लगभग पन्द्रह-सोलह दिन हो चुके। अब कितनी देर की जा सकती है? इसके लिए मेट्रन को ही जिम्मेदार ठहराना होगा।

"ह्वाट्स दैट?—क्या है?"

"केस नम्बर ४६ मिल गया। आश्चर्य की बात है!"

"कहां मिला? कैसे?"

"मालूम नहीं, कमरे में जाने पर एकाएक नजर पड़ी कि वह पहले की तरह ही लेटा हुआ है।"

"पूछने से क्या कहता है?"

"कुछ भी बोल नहीं पाता है, सर! मैंने पूछा: तुम इतने दिनों तक कहां थे? तुम्हारा नाम क्या है? पिता का नाम क्या है? जवाब में सिर्फ फटी-फटी आंखों से ताकता रहता है।"

"चलो, देखूं तो सही!" कहकर कर्नल वाटसन मेट्रन के पीछे-पीछे केबिन की ओर जाने लगा।

भाइयो एवं बहनो!

अगर आप लोग कभी फिलिपाइन द्वीपपुंजों के उस द्वीप के अस्पताल में जाएं तो देखेंगे कि रातुल सेन आज भी वहां एक नम्बर केबिन में लेटा हुआ है। वे लोग उसे केस नम्बर ४६ के रूप में जानते हैं। अगर आप उनसे पूछें कि तुम्हारा नाम क्या है, तुम्हारा घर कहां है, तुम्हारे पिता का नाम क्या है तो वह कुछ भी जवाब न देगा। फटी-फटी आंखों से आप लोगों की तरफ ताकता रहेगा। उसे कुछ भी याद नहीं है। लेकिन बात ऐसी नहीं है। दरअसल वह कुछ भूला नहीं है। लेकिन नियति के अजीब दायरे में घिर जाने के कारण

इसके अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। इसी तरह उसने खुद को दुनिया से मिटा डाला है और पल-पल मृत्यु का वरण कर रहा है। सब कुछ जानने के बावजूद उसे झूठ बोलना पड़ता है—इसके लिए आप उसे क्षमा करें। उसके लिए दो बूंद आंसू बहाएं, उसके प्रति करुणा व्यक्त करें—मेरा आप लोगों से यही अनुरोध है !